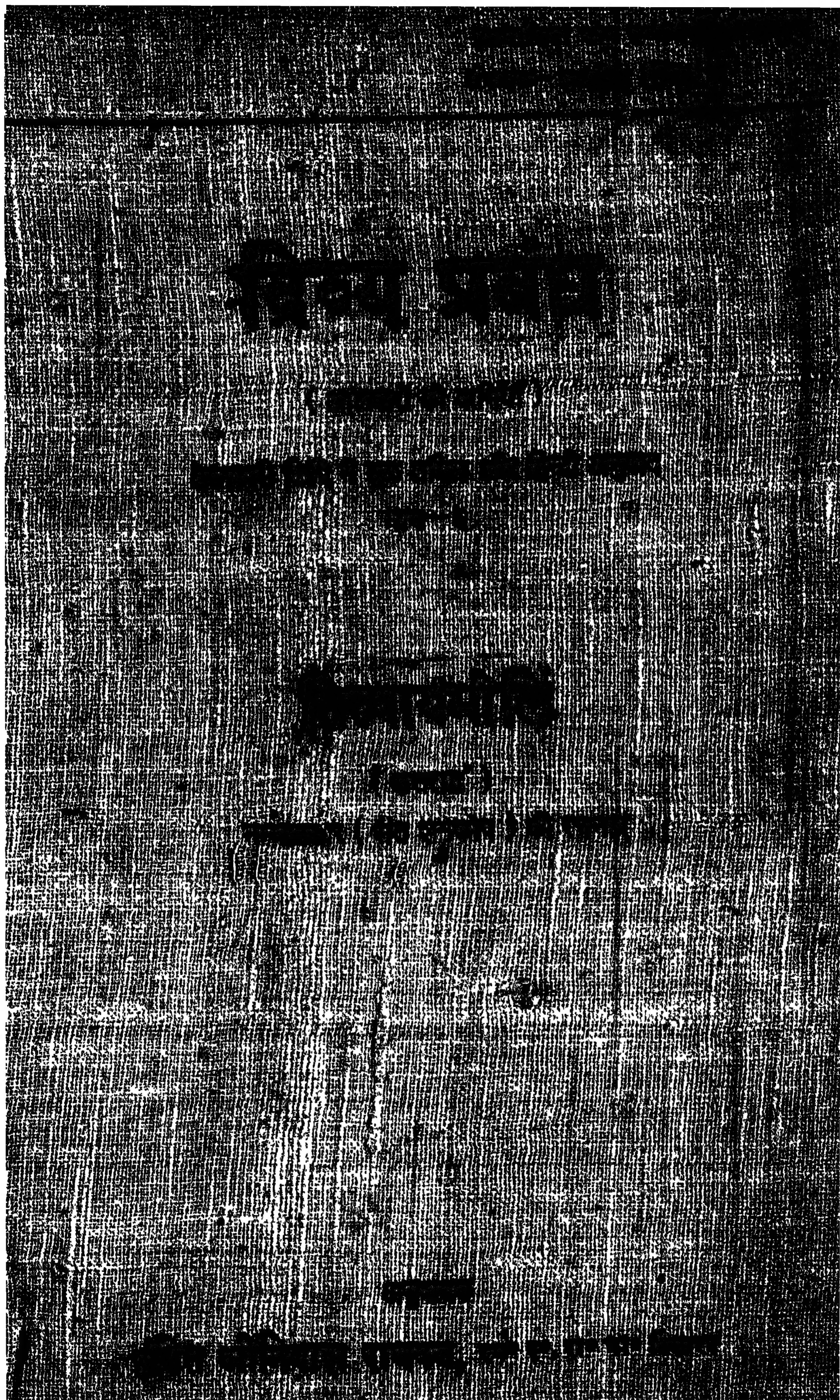


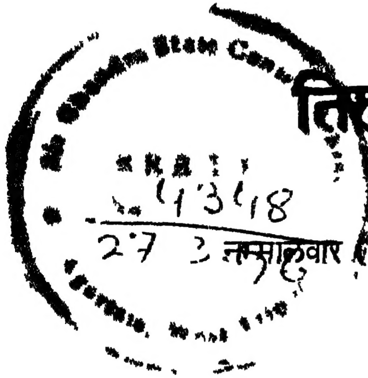
हलवासिया शोध ग्रन्थमाला-ग्रन्थांक-
संपादक—रामसिंह तोमर

दिव्य प्रबंध

(आल्वारों की वाणियाँ)

देवनागरी लिपि में मूल तमिल और हिन्दी अनुवाद

भाग—६



तिरुवायमोलि

(उत्तरार्द्ध)

नम्मालवार (संत शठकोप) की रचनाएं

अनुवादक

पंडित श्रीनिवास राघवन, एम० ए०, रा० भा० विशारद



॥ विश्वभारती, हिन्दी भवन, शान्तिनिकेतन ॥

प्रकाशक :
रजिस्ट्रार, विश्वभारती
शान्तिनिकेतन, पश्चिम बंगाल
पिनकोड—७३१२३५

मुद्रक :
श्रीदुर्गा प्रेस, श्रीशिवप्रसाद शर्मा
स्टेशन रोड, बोलपुर।
पिन—७३१२०४

प्रस्तावना

शान्तिनिकेतन में रवीन्द्रनाथ ठाकुर की इच्छानुसार हिन्दी भवन की स्थापना एक शोध केन्द्र के रूप में सन् १९३८ में हुई थी। हिन्दी भवन के कार्यक्रम को योजना पर बिचार करने के लिए सन् १९४४ में विशेषज्ञों की एक समिति गठित की गई थी जिसके सदस्य थे-डा० धीरेन्द्र वर्मा, पं० ललिता प्रसाद सुकुल, पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी, आचार्य क्षितिमोहन सेन और श्री रथीन्द्रनाथ ठाकुर। समिति ने अन्य सुझावों के साथ एक सुझाव यह दिया था कि हिन्दी भवन में हिन्दी भाषा और साहित्य के मूल उत्सों पर विशेष रूप से कार्य हो और इस सुझाव को ध्यान में रखते हुए महायान, संत मत, सूफीमत, अपभ्रंश जैसे क्षेत्रों को शोध कार्य के लिए चुना गया। योजना का दूसरा पक्ष था हिन्दी साहित्य की प्रमुख विचार धाराओं तथा उत्तरी भारत की चिंतन परंपरा को जिन महान् परंपराओं ने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित किया है उनके मूल साहित्य का हिन्दी में प्रामाणिक अनुवाद उपलब्ध करना। ऐसे आकर साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है दक्षिण के आलवार भक्तों की मूल तमिल रचनाओं का, सूफियों की मूल अरबी, फारसी, तुर्की रचनाओं का, ग्रीक भाषा की प्राचीन ऐतिहासिक रचनाएँ, जिनमें भारत के संबंध में ऐतिहासिक, सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से उल्लेखनीय सूचनाएँ दी गई हैं।

इनमें से कई योजनाओं पर कार्य हो चुका है और कुछ पर कार्य हो रहा है। आलवारों की वाणियों के कुछ अंशों का अंग्रेजी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद हुआ है। प्रथम बार पूरी मूल वाणियों का देवनागरी लिप्यंतरण तथा प्रामाणिक हिन्दी अनुवाद प्रकाशित हो रहा है। विद्वद्वर पं० श्रीनिवास राघवनजी ने यह महत्वपूर्ण कार्य किया है। कलकत्ता के सुप्रसिद्ध राय बहादुर विश्वेश्वरलाल मोतीलाल हलवासिया ट्रस्ट का विश्वभारती के साथ संबंध— घनिष्ठ और पुराना है। ट्रस्ट ने इस कार्य के लिए तीन वर्ष के लिए एक शोध वृत्ति प्रदान की, उसी कार्यक्रम में पण्डितजी को विश्वभारती ने आमंत्रित किया था। पं० श्री राघवन संस्कृत प्राकृत के प्राध्यापक रह चुके हैं। हिन्दी उन्होंने महात्मा गांधीजी की प्रेरणा से सन् १९२० के आसपास सीखी थी। वर्षों उन्होंने हिन्दी में "नृसिंहप्रिया" नामक पत्रिका का संपादन किया। हिन्दी भाषा पर उनका पूरा अधिकार है। वे 'रामानुज संप्रदाय' के अनुयायी नैष्ठिक वैष्णव हैं। तमिल साहित्य, विशेषरूप से आलवारों के वैष्णव साहित्य के वे अधिकारी विद्वान् हैं। हमारे अनुरोध को उन्होंने स्वीकार किया और अनेक असुविधाओं के रहते हुए भी वे यहाँ आकर दो वर्ष हिन्दी भवन में रहे और अपूर्व लगन से उन्होंने यह कार्य पूरा किया। विश्वभारती उनकी इस कृपा के लिए आभारी है।

दिव्य प्रबंध के प्रकाशन के लिए हलवासिया ट्रस्ट तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने आर्थिक सहायता प्रदान की है। हम हलवासिया ट्रस्ट तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग दोनो के प्रति आभार प्रकट करते है।

आलवारो की कृतियों को आठ-भागों मे प्रकाशित करने की योजना है। इनमें से एक भाग में आलवारो की भक्ति, दर्शन, उनकी रचनाओं के संबंध में विवेचन रहेगा। अन्य भागो मे मूल रचना का देवनागरी मे लिप्यंतरण तथा हिन्दी अनुवाद रहेगा।

आशा है विद्वान् इस प्रकाशन का आदर करेंगे।

गुरु पूर्णिमा,
स० २०३७ वि०
हिन्दी भवन,
शांतिनिकेतन।

रामसिह तोमर
सम्पादक,
हलवासिया शोध ग्रंथमाला,
विश्वभारती. शांतिनिकेतन।

इस भाग में संत नम्मालवार (शठकोप) की रचना तिरुवायमोलि का उत्तरार्द्ध प्रकाशित हो रहा है। संत शठकोप की जीवनी तिरुवायमोलि के पूर्वार्द्ध (भाग ५) मे दी गई है। मेरे छात्र और पूर्व सहयोगी डॉ० रामेश्वर प्रसाद मिश्र, अध्यापक हिन्दी विभाग. विश्वभारती ने प्रूफ संशोधन मे मेरी सहायता की है। दिव्य प्रबंध के दो भाग और प्रकाशित होने है। हम आशा करते है कि यथाशीघ्र उनको भी हम प्रकाशित कर सकेंगे। प्रेसो की धीमी गति से कार्य करने के कारण यह विलंब हो रहा है।

२८ पूर्वपल्ली - शांतिनिकेतन,

रामसिह तोमर

निवेदन

मानव द्वारा परब्रह्म का अन्वेषण दर्शन है और सर्वेश्वर द्वारा मानव का अनुसरण धर्म है। ब्रह्म में दो प्रकार के गुण हैं—परत्व और सौलभ्य। दर्शन में प्रधान तया ब्रह्म के परत्व का उल्लेख है और धर्म में सौलभ्य का। परत्वप्रधान होती हैं उपनिषदें और सौलभ्यप्रधान होते हैं संतो के प्रबंध। परब्रह्म के इस सौलभ्य गुण का अनुसंधान कर के संत प्रेमभक्तिप्रवाह में मग्न हो कर रहते हैं। अतएव तमिल में वैष्णव संत 'आल्वार' (अर्थात् प्रेमभक्ति सागर मग्न) कहलाते हैं।

आल्वारों ने श्रीमन्नारायण के स्वरूप और रूप, गुण और लीला का अनुभव नाना प्रकार से किया है। कभी परब्रह्म और वैकुंठस्थ पर वासुदेव का अनुभव करते हैं तो कभी क्षीरसागरशायी व्यूहरूप का अनुभव ; कभी मत्स्य, कूर्म, वामन, नरसिंह, राम, कृष्ण आदि विभवावतार का अनुभव करते हैं तो कभी श्रीरंग, वेंकटाचल, वृन्दावन, बदरी आदि क्षेत्रों में विराजमान क्रमशः भगवान् श्रीरंगनाथ, श्रीवेंकटेश्वर, श्रीमुरलीधर, नारायण आदि अर्चावतार के रूप में अनुभव करते हैं।

यह अनुभव भी विचित्र रूप से है—कभी भक्त के रूप में, कभी पिता दशरथ के रूप में, कभी कौसल्या, यशोदा, देवकी आदि माताओं के रूप में, कभी नायिका के रूप में— वह भी संयोग दशा में और विरह दशा में। संत परकाल का एक विलक्षण अनुभव है जिसमें वे पराजित रावण के सैनिक हो कर श्रीरामचन्द्र से करुणा की प्रार्थना करते हैं। संतों में कुछ उच्चकुल के होते हैं तो कुछ तद्भिन्न कुल के। उन में अनेक पुरुष हैं--एक आंडाल (गोदादेवी) को छोड़ कर-ये बारह संत हैं।

संतों की प्रेमभक्ति का अनुभव-प्रवाह ही तमिल में पद्य-माला के रूप में निकला है जिन में ४००० पद्य हैं। यह चतुःसहस्री चौबीस प्रबंधों में विभक्त है। ब्रह्म के अनुग्रह से वाल्मीकि महर्षि द्वारा रामायण प्रबंध के अवतार के समान साक्षात् परब्रह्म श्रीमन्नारायण की कृपा से इन प्रबंधों का आविर्भाव हुआ। तमिल भाषा में होने के कारण, भाषा की सरलता के कारण, भक्तिपूर्ण होने के कारण ये प्रबंध दक्षिण में लोकप्रिय हैं, विशेष कर श्रीवैष्णवों में तथा तमिल साहित्यज्ञों में।

वैष्णव संतों के पद्यों के इस हिन्दी अनुवाद के विषय में कुछ निवेदन करना है। तमिल के मूल पद्यों में प्रत्येक पद्य के पादों के तथा पदों के भी क्रमानुसार अनुवाद करने का प्रयत्न किया है। अतः कहीं कहीं कुछ शब्द परिवर्तन अथवा वाक्य परिवर्तन कर के लिखा गया है, जिससे वह हिन्दी प्रेमियों को मधुर और श्रवणप्रिय लगे। मूल पद्य के

क्रमानुसार अनुवाद करने का संकल्प करने से कुछ त्रुटि हुई होगी। हिन्दी-प्रेमी क्षमा करें। संस्कृत के जो जो शब्द आल्वारो के पद्यों में हैं वे वैसे ही रखे गए हैं।

लगभग साठ वर्ष पहले हिन्दी सीखकर दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की ओर से हिन्दी प्रचार करने लगा। चालीस वर्ष पहले आचार्य श्रीसौम्यमूर्ति स्वामी से संतवाणी का अध्ययन किया था। अब भगवान् आल्वार और आचार्य के अनुग्रह से विश्वभारती विश्वविद्यालय की ओर से हिन्दी विभाग के अध्यक्ष श्री रामसिंह तोमर की सहायता से यह हिन्दी अनुवाद पूर्ण हो रहा है। मैं ने ईश्वर पर भार रखकर यथाज्ञान और यथाशक्ति यह हिन्दी अनुवाद किया है। त्रुटियों की संभवना होगी ही। भक्तों से तथा विद्वज्जन महानुभावों से प्रार्थना है कि वे कृपया दोषों की उपेक्षा करें और संतवाणी संबंध देखकर इसे स्वीकार करके मुझे अनुगृहीत करें।

यहाँ पर मैं विश्वभारती हिन्दी विभाग के भूतपूर्व अध्यापक श्रीरामपूजन तिवारी को अपनी कृतज्ञता निवेदन करना चाहता हूँ जिन्होंने मेरे शान्तिनिकेतन में रहते समय मेरे साथ बैठकर प्रथम १५०० तमिल पद्यों को सुनकर उनके अनुवाद को भी देखा और संशोधन किया।

दक्षिण के इन वैष्णव संतों (अर्थात् आल्वारो) की जीवनी, उनके प्रबंधों का संक्षेप, दक्षिण भारत की साम्प्रदायिक रीति, तमिल साहित्य की संक्षिप्त परिपाटी आदि का विवरण देने का विचार है। आशा है कि विश्वभारती विश्वविद्यालय की सहायता से यह संपन्न हो जायगा।

ईश्वर कृपा करे कि मेरी सेवा और परिश्रम सफल हो।

मद्रास श्रीनिवास राघवन

दिव्य प्रबंध

(आलवारों की वाणियाँ)

भाग ६

नम्माळवार (संत शठकोप) की वाणियाँ

(ii)

तिरुवायमोलि

VI. i. वैहल् पूम् कळि

2634. वैहल् पूम् कळि वाय्
वन्दु मेयुम् कुरुहु-इनङ्गाळ !
शॆय् कॊळ शॆन्-नॆल् उयर्
तिरु वण् वण्डूर् उरैयुम्
कै कॊळ शक्करत्तु ऍन्
कनि वाय्-प् पॆरुमानै-क् कण्डु
कैहळ कूप्पि-च् चॊल्लीर्
विनैयाट्टियेन् कादन्मैये ॥ 1

2635. कादल् मॆन् पॆडै योडु
उडन् मेयुम् करु नाराय् !
वेद वेळ्वि ऒलि मुळङ्गुम्
तण् तिरु वण् वण्डूर्
नादन् ञालम् ऍल्लाम् उण्ड
नम् पॆरुमानै-क् कण्डु
पादम् कै तॊऴुदु पणियीर्
अडियेन् तिरमे ॥ 2

2636. तिरङ्गळ आहि ऍङ्गुम्
शॆयुहळ ऊडु उळल् पुळ-इनङ्गाळ।
शिरन्द शॆल्वम् मल्हु
तिरु वण् वण्डूर् उरैयुम्
करङ्गु शक्कर-क् कै-क्
कनि वाय्-प् पॆरुमानै-क् कण्डु
इरङ्गि नीर् तॊऴुदु
पणियीर् अडियेन् इडरे ॥ 3

VI. i. बेहल

(सर्वकाल)

[संत का नायिकाभाव—पराकुश–नायिका विरह दशा मे अपने प्रियतम के पास दूत प्रेषण करती है ।]

[तिरु वण् वण्डूर् क्षेत्र]

2634 नित्य सागरानूप प्रदेश में आकर (आहार) चुगते सारस-बृंदो ! क्षेत्रभर में फैल कर उपजते शालिधान से युक्त तिरु-वण्-वण्डूर (क्षेत्र) मे नित्यवास करते हस्तस्थ चक्र से युक्त बिंबाधर मेरे परमपुरुष को देख कर हाथ जोड़ कर मुझ पापिनी को प्रेमभावना बता दो ।

[तिरु वण्-वण्डूर–केरल प्रान्त मे एक क्षेत्र है]

[कुरुहु–सारस] 1

2635 प्रेम से युक्त कोमल प्रियतमा के संग में साथ ही (आहार) चुगते श्याम बलाक ! वेद घोष तथा यज्ञ कोलाहल से मुखरित शीत तिरुवण्-वण्डूर के नाथ कृत्स्न जगद्रक्षक हमारे स्वामी को देख कर मुझ दासी की ओर से हाथ जोड़ कर चरणों में वदना करो । 2

2636 झुंड के झुंड सर्वत्र खेतों से हो कर संचरित पक्षि-बृंदो ! उत्तम विभव से संपन्न तिरु-वण्-वण्डूर मे नित्य वास करते, घूमता चक्र हस्त में धरते तथा बिंबाधर स्वामी को देख कर नम्रता से प्रणाम कर के, मुझ दासी का (विरह) क्लेश सुनाओ । 3

2637. इडर् इल् बोगम् मूळहि
इणैन्दु आडुम् मड अन्नङ्गाळ!
विडल् इल् वेद ऑलि मुळङ्गुम्
तण् तिरु वण् वण्डूर्
कडलिल् मेनि-प् पिरान्
कण्णनै नॅडु मालै-क् कण्डु
'उडलम् नैन्दु ऑरुन्ति उरुहुम्'
ऍन्नु उणर्त्तुमिनै॥

2638. उणर्त्तल् ऊडल् उणन्दु
उडन् मेयुम् मड अन्नङ्गाळ
तिणर्त्त वण्डलहळ मेल् शङ्गु
शेरुम् तिरु वण् वण्डूर्
पुणर्त्त पूण् तण् तुळाय् मुडि
नम् पॅरुमानै-क् कण्डु
पुणर्त्त कैयिनराय्
अडियेनुक्कुम् पोर्रुमिनै॥

2639. पोर्रि यान इरुन्देन्
पुन्नै मेल् उरै पूम् कुयिल्हाळ!
शेर्रिल् वाळै तुळळुम्
तिरु वण् वण्डूर् उरैयुम्
आर्रल् आळि अम् कै
अमरर् पॅरुमानै-क् कण्डु
मार्रम् कॉण्डु अरुळीर्
मैयल् तीर्वदु ओरु वण्णमे॥

2637 (वियोगाभाव से) निर्विघ्न भोग में मग्न हो कर नित्य संयोग में संचरित हंस-मिथुनो ! अविच्छिन्न वेद-घोष से ध्वनित शीत तिरुवण्-वण्डूर में सागर-तुल्य वर्ण शरीर प्रभु सर्वेश्वर कान्ह को देख कर सुनाओ कि एक (कामिनी) पिघलती रहती है और उसका शरीर शिथिल होता रहता है। 4

2638 मनाने में तथा प्रणय कलह में विद्यमान दुःख समझ कर (उससे बच कर रहने के लिए) साथ ही आहार चुगते भव्य हंस मिथुनो ! सिकत-राशियों में शंख-जंतुओं से समाश्रित तिरुवण्-वंडूर में ग्रथित सुंदर और शीत तुलसीभूषित किरीट से युक्त हमारे स्वामी को देख कर अंजलिहस्त से मेरी ओर से भी उनका आदर कर मेरी दशा सुनाओ। 5

2639 तुम्हारी स्तुति कर प्रार्थना करती हूं, हे पुन्नाग वृक्ष पर आसीन सुंदर कोयलो ! जिस नगर के (जलाशय के) पंक में मत्स्य उछल रहे हैं उस तिरुवण्-वंडूर में नित्यवास करते सुंदर चक्रहस्त सर्वशक्त अमरों के अधिप (प्रभु) को देख कर उनका प्रतिवचन ले आने की कृपा करो जिससे मेरा क्लेश दूर हो। 6

2640. ऑ॑रु वण्णम् शॆ॑न्रु पुक्कु ऎ॑नक्कु
ऑ॑न्रु उरै ऑ॑ण् किळियॆ!
शॆ॑रु ऑ॑ण् पूम् पॊ॑ऴिल् शूळ
शॆ॑ङ्कर् वेलै-त् तिरु वण् वण्डूर्
करु वण्णम् शॆ॑य्य वाय् शॆ॑य्य कण्
शॆ॑य्य कै शॆ॑य्य काल्
शॆ॑रु ऑ॑ण् शक्करम् शङ्गु
अडेयाळम् तिरुन्द-क् कण्डे॥ 7

2641. तिरुन्द-क् कण्डु ऎ॑नक्कु ऑ॑न्रु
उरैयाय् ऑ॑ण् शिरु पूवाय्!
शॆ॑रुन्दि ञाऴल् महिऴ पुन्नै
शूळ तिरु वण् वण्डूर्
पॆ॑रुम् तण् तामरै-क् कण्
पॆ॑रु नीळ मुडि नाल् तडम् तोळ
करुम् तिण् मा मुहिल् पोल्
तिरु मेनि अडिहळैये॥ 8

2642. अडिहळ कै तॊ॑ऴुदु अलर् मेल्
अशैयुम् अन्नङ्गाळ!
विडिवै शङ्गु ऑ॑लिक्कुम्
तिरु वण् वण्डूर् उरैयुम्
कडिय मायन् तन्नै-क् कण्णनै
नॆ॑डु मालै-क् कण्डु
कॊ॑डिय वल् विनैयेन् तिरम्
कूरुमिन् वेरु कॊ॑ण्डे॥ 9

2640 (चाहे महाप्रयत्न करना पड़े) किसी प्रकार जा कर तिरुवण्-वंडूर में प्रवेश कर के - जो एक से एक स्पर्धा करते सुंदर पुष्पों से भरे उपवनों से परिवृत तथा (लाल पुष्पों के कारण) रक्त वर्ण (सागर) वेला पर बसा है—वहां के भगवान् का श्याम वर्ण, रक्त अधर, अरुण लोचन, अरुण हस्त तथा अरुण चरण, एवं युयुत्सु ज्वलंत चक्र और शंख इन चिह्नों को सुव्यक्त देख कर मेरे लिए उनसे एक वचन कहो। 7

2641 भास्वर बाल सारस ! चेरुन्दि और कर्णिकार, बकुल और पुन्नाग (वृक्षों) से परिवृत शीत तिरुवण् वंडूर मे विराजमान स्वामी—जो विशाल शीत कमलनयन, महान् दीर्घ किरीट, दीर्घ चतुर्भुज, श्याम दृढ़ महामेघ सदृश श्रीविग्रह से संपन्न है, उन्हें सुव्यक्त देख कर मेरे लिए एक वचन उनसे कहो। 8

[चेरुन्दि—एक वृक्ष।]

2642 विकसित कमल पर झूमते हंसो ! प्रभात की शंख-ध्वनि से मुखरित तिरुवण् वंडूर में नित्यवास करते (प्रतिकूलों के विषय में) निर्घृण मायी अतिव्यामोह से युक्त कान्ह को देख कर उनके चरणों में प्रणाम कर के एकांत में (जब साथ माता लक्ष्मी मात्र हैं) क्रूर और प्रबल पापिनी मेरी दशा को सुनाओ। 9

2643. वेरु कॉण्डु उम्मै यान् इरुन्देन्
वैॅरि वण्डु इनङ्गाळ !
तेरु नीर्-प् पम्बै वड पालै-त्
तिरु वण् वण्डूर्
मारिल् पोर् अरक्कन् मदिळ
नीरु एॅळ-च् चेॅरु उहन्द्र
एरु शेवहनाक्कु ऍन्नैयुम्
उळळ ऍन्मिन्गळे ॥ 10

2644. मिन् कॉळ शेर् पुरि नूल् कुरळ आय्
अहल् ञालम् कॉण्ड
वन् कळवन् अडि मेल् कुरुहूर्-च्
चडकोपन् चॉन्न
पण् कॉळ आयिरत्तुळ इवै पत्तुम्
तिरु वण् वण्डूक्कु
इन् कॉळ पाडल् वल्लार्
मदनर् मिन् इडैयवर्क्के ॥ 11

2643 सुगंध से युक्त मधुकर-वृंदो ! तुम्हारी अनन्यसाधारण योग्यता जान कर तुम से मैं प्रार्थना करती हूं—स्वच्छ जल पंपा नदी के उत्तर पार्श्व में स्थित तिरुवण्-वंडूर में विराजमान अतुल पराक्रमी प्रभु से कह दो कि (रक्षणीया) मैं भी अभी (जीती) हूं—प्रभु जो अप्रतिम योद्धा राक्षस (रावण की लंका) के प्राचीरों को चकनाचूर कर के हर्षित हुए। 10

2644 अनुरूप और दीप्तियुक्त यज्ञोपवीतधर वामन हो कर विशाल पृथिवी को ग्रहण करते चतुर चोर के चरण पर कुरुहूर के संत शठकोप के रचित रागों से संपन्न सहस्रगीति में तिरुवण्-वंडूर विषयक मधुर गान मय इन दस पद्यों के गाने में जो कुशल हैं, वे सूक्ष्ममध्या कामिनियों के मदन हैं (अर्थात् परम भोग्य हैं)।
[कामिनियों को कामुक जैसे, भगवान् तथा भगवद्भक्तों को (जिन्हें भगवत्काम है) ये अतिभोग्य होते हैं।] 11

VI. ii. मिन् इडै मडवार्

2645. मिन् इडै मडवार्हळ निन् अरुळ शूडुवार्
मुन्बु नान् अदु अञ्जुवन्
मन् उडै इलङ्गै
अरण् कायृन्द मायवने !
उन्नुडैय शुण्डायम् नान् अरिवन्
इनि अदु कॊण्ड शॆय्वदु ऎन् ?
ऍन्नुडैय पन्दुम् कळलुम्
तन्दु पोहु नम्बी !

2646. पोहु नम्बी ! उन् तामरै पुरै
कण् इणैयुम् शॆव्वाय् मुरुवलुम्
आकुलङ्गळ् शॆय्य
अळिवदर्के नोर्रोमे याम् ?
तोहै मा मयिलार्हळ् निन् अरुळ् शूडुवार्
शॆवि ओशै वैत्तु ऍळ
आहळ् पोह विट्टु-क्
कुळल् ऊदु पोय् इरुन्दे ॥

2647. पोय् इरुन्दु निन् पुळ्ळुवम्
अरियादवर्क्कु उरै नम्बि ! निन् शॆय्य
वाय् इरुम् कनियुम् कण्गळुम्
विपरीतम् इन्नाळ्
वेय् इरुम् तडम् तोळिनार् इत्
तिरुअरुळ् पॆरुवार् ऎवर् कॊल्
मा इरुम् कडलै-क्
कडैन्द पॆरुमानाले ?

VI. ii. मिन्निडै मडवार्

(विद्युत्तुल्य (सूक्ष्म) मध्य कामिनियां)

[नायिका का प्रणयरोष और नायक के मनाने का प्रयत्न]

[प्रियतम के आने से नायिका यह समझ कर प्रणयरोष में आ जाती है कि वह अन्य ललनाओं से लीला करने गया था। और निश्चय करती है कि वह आए तो न मैं उससे बोलूंगी, न अपनी सखियों को उससे बोलने दूंगी। इतने में नायक आ ही जाता है और नायिका को रूठा देख कर उसके पास पड़े कंदुक आदि लीलोपकरणों को हाथ में ले कर नायिका को मनाने का प्रयत्न करता है। तब नायिका उस से रूठ कर बोलती है –]

2645 विद्युत् तुल्य (सूक्ष्म) मध्य कामिनियां जो तुम्हारी कृपा से भूषित होती है (यहां से) उनके सामने (तुम्हारे जाने से वे जो करती हैं वह सोच कर) मैं भीत होती हूं। राक्षसाधिप (रावण) की लंका दुर्ग के ध्वंसक मायावी ! (अर्थात् अद्भुत वीर !) तुम्हारे कपट-कार्य मैं जानती हूं। इसके बाद उस कपट-कार्य से क्या प्रयोजन है ? (वहां भूमि पर पड़े कंदुक आदि को नायक हाथ में लेता है तो उससे बोलती है) यह कंदुक और कुबेराक्षि मेरे हैं (न कि तुम्हारी उन प्रियाओं के) अतः उन्हें दे कर निकल जाओ नम्बि। 1

2646 निकल जाओ, नम्बि ! तुम्हारे पंकज सदृश नयनयुग अरुणाधर और मंदहास हमें व्याकुल करते हैं। अपने नाश के लिए ही हमने व्रत पालन कर रखा है। निविड़बर्ह सुंदर मयूर-तुल्य घनकेशी सुंदरियाँ यहां नहीं जो तुम्हारी कृपा की प्रियपात्र हैं। जिससे वे (मुरली की) ध्वनि सुन कर उठ कर आएंगी इस प्रकार तुम गायों को चलने दे कर वहां जा कर बंसी बजाओ। (चरने के लिए दूर निकली गायों को बुलाने के बहाने से तुम बंसी बजाओ। तुम्हारा अभीष्ट जान कर वे सुंदरियां दौड़ के आ जाएंगी।) 2

2647 (यहां से) निकल जाओ और जो तुम्हारी कपटता से अनभिज्ञ हैं उनके मध्य में विराजमान हो कर अपना कपट-वचन उन्हें सुनाओ, नम्बी ! तुम्हारा अरुण अधरात्मक बिंब फल और नयन तो अब हमारे विपरीत हैं। (अर्थात् बाधक हैं)। न जाने वंश-तुल्य पीन विशाल सुंदरियां कौन हैं जिन्हें गंभीर महासागर का मन्थन करते भगवान् के हाथ यह श्रीकृपा प्राप्त करने का सौभाग्य है ? 3

2648. आलिन् नीळ इलै एल उलहुम् उण्डु
अन्रु नी किडन्दाय् उन् मायङ्गळ
मेलै वानवरुम् अरियार्
इनि ऍम् परमे ?
वेलिन् नेर् तडम् कण्णिनार्
विळैयाडु शूळलै-च् चूळवे निन्रु
कालि मेय्क्क वल्लाय् !
ऍम्मै नो कळरेले ॥ 4

2649. कळरेल् नम्बी ! उन् कैतवम् मण्णुम्
विण्णुम् नन्गु अरियुम् तिण् शक्कर
निळरु तोॅल् पडैयाय् ! उनक्कु
ओॅन्रु उणर्त्तुवन् नान्
मळरु तेन् मोॅळियार्हळ निन् अरुळ
शूडुवार् मनम् वाडि निर्क ऍम्
कुळरु पूवैयोॅडुम्
किळियोडुम् कुळहेले ॥ 5

2650. कुळहि ऍङ्गळ कुळमणन् कोॅण्डु
कोयिन्मै शेॅय्दु कन्मम् ओॅन्रु इल्लै
पळहि याम् इरुप्पोम्
परमे इत्-तिरु अरुळहळ
अळहियार् इव्-वुलहम् मून्रुक्कुम्
देविमै तहुवार् पलर् उळर्
कळहम् एरेल् नम्बी !
उनक्कुम इळैदे कन्ममे ॥ 9

2648 पुरा काल में सप्तलोक निगल कर वट वृक्ष के दीर्घ पत्र पर तुम शयित हुए। तुम्हारी मायामय चेष्टाओं को परमधाम के नित्यसूरि-गण भी नहीं समझ पाते। ऐसी दशा में क्या यह हमारे सिर पर पड़े ? (क्या तुम्हारी माया जानने की शक्ति हम में है ?) बरछा सदृश विशाल लोचनी सुंदरियो के क्रीड़ाक्षेत्र पुलिन-स्थल में घूमते हुए रह कर गो समूह चराने में निपुण! हम से यह (असत्य) मत बोलना। (क्या सुंदरियो के संघ में ही गायें चरती है ? क्या यमुना-पुलिन भूमि ही उनकी चरनी है ?)। 4

2649 प्रतिवाद मत करो, नम्बी! तुम्हारा कैतव भूलोक और स्वर्गलोक (अर्थात् मानव और देव) अच्छी तरह जानते हैं। (कैतव में सहाय देने में) दृढ़ चक्रात्मक नित्य-आयुध धर! तुम्हें एक बात बताती हूं मैं, (सुनो)। तुम्हारी कृपा सिर पर धरती मधुमधुरालाप सुंदरियों के खिन्नमना हो कर खड़े रहते, हमारे अनक्षररस सारस और तोते के साथ खेलो मत। 5

2650 निर्भय उपस्थित हो कर हमारी पुतलियां उठा कर अनीति के कार्य कर के कोई कर्म (अर्थात् प्रयोजन) नहीं (तुम्हारे ऐसे असत्य कार्यों से) हम पहले ही परिचित हैं ? तुम्हारी ये विलक्षण कृपाएं क्या हमारी शक्ति के अनुरूप हैं ? (हम सह नहीं सकतीं)। सुंदरता से संपन्न और इस त्रैलोक्य की तुम्हारे अनुरूप महिषी होने के योग्य देवियां तो असंख्य हैं। (उधर जाओ)। हमारे संघ में पैठो मत, नम्बी! यह तुम्हारे लिए भी बालिशता का कर्म है। 6

2651. कन्मम् अन्रु ऍङ्गळ कैयिल् पावै
परिप्पदु कड्ल् आलम् उण्डिट्ट
निन्मला ! नॆँडियाय् !
उनक्केलुम् पिळै पिळैये
वन्ममे शॉल्लि ऍम्मै नी विळैयाडुदि
अदु केट्किल् ऍन् ऐमार्
तन्म पावम् ऍन्नार्
ऑरु नानूरु तडि पिणक्के ॥ 7

2652. पिणक्कि यावैयुम् यावरुम् पिळैयामल्
बेदित्तुम् बेदियाददु ओर्
कणक्कु इल् कीर्त्ति वॆँळ्ळ-क्
कटिर् ञान् मूर्तियिनाय् !
इणक्कि ऍम्मै ऍम् तोळिमार् 'विळैयाड-प्
पोदुमिन्' ऍन्न-प् पोन्दोमै
उणक्कि नी वळैत्ताल्
ऍन् शॉल्लार् उहप्पादवरे ? 8

2653 उहवैयाल् नॆँञ्जम् उळ उरुहि
उन् तामरै-त् तडम् कण् विळिहळिन्
अहवलै प् पडुप्पान्
अळिनाय् उन् तिरु अडियाल्
तहवु शॆँय्दिलै ऍङ्गळ शिर्रिलुम्
याम् अडु शिरु शोरुम् कण्डु निन्
मुह ऑळि तिहळ
मुरुवल् शॆँरदु निन्रिलैये ॥ 9

2651 [नायक का हठ देख कर नायिका और सहेलियां अपने लीलोपकरणों को उठा कर हाथ में रख लेती हैं तो, वह उनके बीच में आ कर पुतलियों को छीनने लगता है। तब वे कहती हैं]

हमारे हाथ की पुतलियां बलात्कार से छीन लेना कर्म नहीं (अर्थात् करने योग्य काम नहीं) सागर-परिवृत पृथिवी निगलते निर्मल! महतोय! तुम्हारे लिए भी दोष दोष ही है। (एकांत में घटी) असह्य बातें कह कर हमसे खेलने लगते हो। यह सुनते है तो मेरे सहोदर धर्म और पाप का विचार नहीं करेंगे। एक न एक दिन आ कर लाठी चलाएंगे। 7

2652 [सुंदरियां वहां से हट कर अन्यत्र जाने लगती है तो नायक उनका मार्ग रोकता है। तब वे कहती हैं]

सब चेतन और सब अचेतन को (प्रलय काल में) नामरूपविभाग रहित मिला कर (फिर सृष्टिकाल के आते ही) (जीवात्माओं में परस्पर) कर्म सांकर्य नहीं हो ऐसा देवमनुष्यादि भेदों के साथ उनकी सृष्टि कर के, अपने स्वरूप में (विकारात्मक) भेद के बिना रहने की विलक्षण और असंख्य कीर्तिसागरात्मक प्रभा से समन्वित ज्ञान मूर्ति! हमारी सखियों ने समझा बुझा कर हम से कहा कि आओ खेलने चलें। ऐसे भाई हमें यदि तुम अपनी सुंदरता से आकृष्ट कर के अन्यत्र जाने में रोकते हो तो प्रतिकूल-स्वभाव लोग क्या नहीं कहेंगे? (अर्थात् वे नहीं जानते कि हम तुम से प्रेम नहीं करतीं। तुम्हारे यहां स्वल्पकाल ठहरने से कहेंगे कि हमारा तुम्हारा सश्लेष हो चुका)। 8

2653 (प्रियतम की उपेक्षा और निरादर करने के जैसे उसका मुंह न देख कर नायिका घरौंदानिर्माण आदि बालिका क्रीडा में लग जाती है तब प्रियतम उसे चिढ़ाने के लिए और उसका स्पर्शसुख भोग करने के लिए घरौंदा ढहाता है। नायिका कोप से उसका मुंह सीधा देख कर (न बोलने का अपना संकल्प भूल कर) उस से बोलती है।

तुम पर प्रेम के कारण हमारे हृदय को विह्वल बना कर कमलसदृश अपने विशाल नयन-दृष्टिरूप जाल में हमें फंसाने के लिए अपने सुंदर चरण से हमारे घरौंदे ढहाते हो। (हमारा परिश्रम व्यर्थ होता देख कर) हम पर सहानुभूति नहीं दिखाते। हमारे घरौंदे और हमारा पकाया थोड़ा भात देख कर मंदहास करते हुए तुम खड़े नहीं रहते जिससे तुम्हारे मुख की शोभा प्रकाशित हो। 9

2654. निन्ऱु इलङ्गु मुडियिनाय्!
इरुपत्तोर् काल् अरशु कळै कट्ट
वॆन्ऱि नीळ मळुवा!
वियन् ञालम् मुन् पडैत्ताय्!
इन्ऱु इव् आयर् कुलत्तै वीडु उय्य-त्
तोन्ऱिय करु-माणिक्क-च् चुडर्!
निन् तन्नाल् नलिवे पडुवोम्
ऎन्ऱुम् आय्च्चियोमे॥ 10

2655. आय्च्चियाहिय अन्नैयाल् अन्ऱु वॆण्णॆय
वार्त्तैयुळ शीऱ्ऱम् उण्डु अळु
कूत्त अप्पन् तन्नैक्
कुरुहूर्-च् चडकोपन्
एत्तिय तमिळ मालै आयिरत्तुळ
इवैयुम् ओर् पत्तु इशैयॊडुम्
नात् तन्नाल् नविल
उरैप्पार्क्कु इल्लै नल करवे॥ 11

2654 (रोष से मुड़ कर देखती है तो नायिका उसके अवयव सौंदर्य में अपने को ही भूल जाती है और कहती है कि गोपी हो कर हम विरह वेदना ही भोगती हैं।)

नित्य भास्वर किरीटधर! इक्कीस बार राजवंश को गिराते दीर्घजैत्र परशुधर! अद्भुत ढंग से जगत् की सृष्टि करते प्रभु! आज सपरिकर इस गोप-कुल के निस्तार के लिए अवतरित नीलरत्न ज्योति! गोपियां हो कर हम दुःख का ही अनुभव करती हैं। 10

2655 पुरा काल में माखन (चोरी) के प्रस्ताव में ही गोपी माता (यशोदा) के कुपित हो कर शिक्षा देने आते ही रोते (और भय से नाचते) नटवर प्रभु कान्ह की स्तुति करते कुरुहूर के संत) शठकोप ने सहस्र निर्मल मालाएं रची। उनमें इस दशक को राग के साथ जीभ से सादर गानेवालों को (भगवदनुभवाभावात्मक) दारिद्र्य नहीं। 11

VI. iii. नल्कुरवुम्

2656. नल् कुरवुम् शॆल्वुम्
नरहुम् शुवर्क्कमुन् आय्
वॆल् पहैयुम् नट्पुम्
विडमुम् अमुदमुम् आय्
पल् वहैयुम् परन्द पॆरुमान्
ऎन्नै आळ्वानै
शॆल्वम् पल्हु कुडि त्
तिरु विण्-णहर्-क् कण्डेने ॥

2657. कण्ड इन्बम् तुन्बम्
कलक्कङ्गळ्म् तेर्रमुम् आय्
तण्डमुम् तण्मैयुम्
तळ्ळम् निळ्ळम् आय्
कण्ड् कोडर्कु अरिय पॆरुमान्
ऎन्नै आळ्वान ऊर्
तॆण् तिरै-प् पुनल् शूळ्
तिरु विण्णहर् नन्नहरे ।

2658. नहरमुम् नाडुहळ्म्
ञानमुम् मूडनम् आय्
निहर् इल् शूळ् शुडर् आय् इरुळ् आय्
निलन् आय् विशुम्बु आय्
शिहर माडङ्गळ् शूळ्
तिरु विण्णहर्-च् चेर्न्द पिरान्
पुहर् कॊळ कीर्त्ति अल्लाल् इल्लै
यावर्क्कुम् पुण्णि यमे ॥

VI. iii. नल्कुरवुम् शेल्वमुम्

(दारिद्र्य और संपत्)

[तिरुविण्णगर् क्षेत्र—भगवान् का परत्व]

2656 दारिद्र्य और संपत्, नरक और स्वर्ग, जीत कर ही परिहरणीय शत्रुता और मित्रता, विष और अमृत जो होते हैं, जो विविध प्रकार से व्याप्त हैं, (अर्थात् जो सब के अंतरात्मा हैं), जो मेरे स्वामी हैं, उन्हें संपत्समृद्ध सज्जनों से पूर्ण तिरुविण्णगर (क्षेत्र) में मैंने देखा।

[इस में परमात्मा के विरुद्धविभूतिकत्व का उल्लेख है] 1

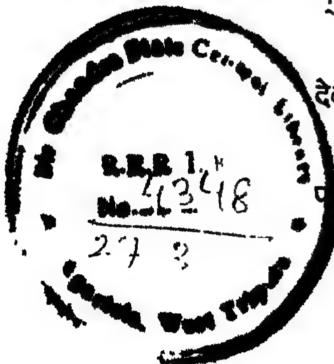
2657 (लोक में) दृष्ट (परिच्छिन्न) सुख और दुःख, (विषयालाभ से जनित) व्याकुलताएं और प्रसाद, दंड और शीतता (अर्थात् निग्रह और अनुग्रह), अग्नि और छाया (अर्थात् उष्णता और शीतता) जो होते हैं, (अर्थात् सब के अंतरात्मा है), जो दुर्दर्श परमात्मा है तथा मेरे स्वामी है, उनका स्थान है तिरुविण्णगर नामक श्रेष्ठ नगर जो निर्मल और तरंगित जल से परिवृत है। 2

2658 नगर और जनपद, ज्ञान और अज्ञान, अनुपम सर्वत्र व्याप्त ज्योति और अंधकार, भूमि और आकाश जो होते हैं (अर्थात् जो सर्वनियंता हैं), तथा जो शिखर तुल्य प्रासादों से परिवृत तिरुविण्णगर में वास करते प्रभु हैं, उनकी कांतियुक्त कीर्ति के व्यतिरिक्त सब को और कोई पुण्य नहीं है। (अर्थात् उनकी कीर्ति के हेतु कारुण्य छोड़ कर निस्तार का दूसरा कोई उपाय नहीं)। 3

2659. पुण्णियम् पावम् पुणर्च्चि पिरिवु
ऍन्रु इवै आय्
ऍण्णम् आय् मरप्पु आय्
उण्मैयाय् इन्मैयाय् अल्लनाय्
तिण्ण माडङ्गळ शूळ
तिरु विण्णहर् शेर्न्द पिरान्
कण्णन् इन् अरुळे कण्डु
कॊण्मिन्गळ कैतवमे ॥ 4

2660. कैतवम् शॆम्मै
करुमै वॆळुमैयुम् आय्
मॆय् पॊय्मै इळमै मुदुमै
पुदुमै पळमैयुम् आय्
शॆय्द तिण् मदिळ शूळ
तिरु विण्णहर् शेर्न्द पिरान्
पॆय्द कावु कण्डीर्
पॆरुम् देवु उडै मू उलहे ॥ 5

2661. मू उलहङ्गळुम् आय् अल्लन् आय्
उहप्पु आय् मुनिवु आय्
पूविल् वाळ महळाय्-त् तव्वैयाय्-प्
पुहळ आय्-प् पळि आय्
देवर् मेवि-त् तॊळुम्
तिरु विण्णहर् शेर्न्द पिरान्
पावियेन् मनत्ते
उरैहिन्र परम् शुडरे ॥ 6



2659 जो पुण्य और पाप हैं, तथा उसका फलभूत (प्रेमियों से) संयोग और वियोग है, जो स्मरण और विस्मरण हैं जो (तत्तद्वस्तुओं का) सद्भाव और असद्भाव हैं, तथा जो (सत्र से) भिन्न हैं, (अर्थात् सर्वशरीरक होने पर भी शरीरगत दोषों से अस्पृष्ट हैं), एवं स्थिर प्रासादों से परिवृत तिरुविण्णगर में वास करते प्रभु कान्ह हैं, उनकी मधुर कृपा ही को उत्तारक समझ लो। क्या यह कैतव है ? (क्या यह अर्थवाद अथवा असत्य है ?) 4

2660 जो कैतव (अर्थात् कुटिलता) और आर्जव हैं, नील और धवल हैं, सत्य और असत्य, यौवन और वार्धक्य, नवत्व और अनवत्व हैं, तथा निर्मित स्थिर प्रासादों से परिवृत तिरुविण्णगर में वास करते प्रभु हैं, उनके सृष्ट आराम है महान् देवों से अधिष्ठित यह त्रैलोक्य।

[त्रैलोक्य—ऊपर, मध्य और नीचे विद्यमान लोक] 5

2661 जो त्रैलोक्य और तद्भिन्न (अर्थात् नित्यविभूति) हैं, प्रीति और अप्रीति हैं, कमलवासिनी लक्ष्मी और ज्येष्ठा देवी हैं, तथा जो कीर्ति और अपकीर्ति हैं, एवं देवताओं से सादर अभिवंदित तिरुविण्णगर में वास करते प्रभु हैं, वे ही मुझ पापी के मन में वास करते परंज्योति हैं। 6

2662. परम् शुडर् उडम्बु आय्
अळुक्कु-प् पदित्त उडम्बु आय्
करन्दुम् तोन्रियुम् निन्रुम्
कैतवङ्गळ शॅय्दुम् विण्णोर्
शिरङ्गळाल् वणङ्गुम्
तिरु विण्णहर् शेर्न्द पिरान्
वरम् कॉळ पादम् अल्लाल् इल्लै
यावक्कुम् वन् शरणे॥ 7

2663. वन् शरण् शुरक्कु आय्
अशुरक्कु वॅम् कूर्रमुम् आय्
तन् शरण् निळल् कीळ
उलहम् वैत्तुम् वैयादम्
तॅन् शरण् तिशैक्कु त्
तिरु विण्णहर् शेर्न्द पिरान्
ऍन् शरण् ऍन कण्णन्
ऍन्नै आळ उडै ऍन् अप्पने। 8

2664. ऍन् अप्पन् ऍनक्कु आय् इहुळ आय
ऍन्नै प् पॅर्रवळ आय्
पॉन् अप्पन् मणि अप्पन्
मुत्तु अप्पन् ऍन् अप्पनुम् आय्
मिन्न प् पॉन् मदिळ शूळ
तिरु विण्णहर् शेर्न्द अप्पन्
तन् ऑप्पार् इल् अप्पन्
तन्दनन् तन ताळ निळले॥ 9

2662 जो ज्योतिर्मय दिव्य शरीर हैं और हेयास्पद जगच्छरीरक हैं, जो अंतर्हित रह कर, अवतरित हो कर तथा चिरकाल स्थायी हो कर (प्रतिकूलों को) कैतव करते है एवं जो देवताओं से अपने सिर से अभिवंदित तिरुविण्णगर में वास करते प्रभु हैं, उनके वरिष्ठ (अर्थात् उत्कृष्ट) पादों को छोड़ कर सब लोगों को दूसरी कोई प्रबल शरण नहीं। 7

2663 जो (अनुकूल) सुरों की अप्रतिहत शरण हैं, और (प्रतिकूल) असुरों के घोर मृत्युदेव है, (दैव स्वभाव से युक्त) लोगों को अपनी चरणच्छाया मे रखते है (और आसुर स्वभाव से युक्त लोगों को) न रखते है, दक्षिण दिक् की शरण तिरुविण्णगर मे वास करते वे उपकारी (प्रभु) ही मेरी शरण है, मेरे (सुलभ) कान्ह हैं, मुझ से अपनी सेवा कराते मेरे स्वामी है। 8

2664 जो मेरे असाधारण (हितकारी) पिता हैं, जो मेरी सखी हैं और जन्म देनी माता हैं (अर्थात् माता जैसे प्रियकारी हैं) जो 'पोन् अप्पन्' (अर्थात् तप्त स्वर्ण सदृश शरीर से युक्त) हैं, जो (अत्युज्ज्वल रत्न सदृश कांतियुक्त) 'मणि अप्पन्' हैं, जो (निर्मल मुक्ता सदृश शरीर से युक्त) 'मुत्तप्पन्' हैं जो मेरे स्वामी हैं, जो चमकते कनकप्राचीरों से परिवृत तिरुविण्णगर में वास करते स्वामी हैं, तथा जो (उपकार करने में) सदृश विहीन स्वामी हैं, उन्होंने (अतिशीत) अपनी चरणच्छाया प्रदान कर दी। 9

2665. निळल् वॆयिल् शिरुमै पॆरुमै
कुरुमै नॆडुमैयुम् आय्
शुळल्वन निर्पन मर्रुम् आय्
अवै अल्लनुम् आय्
मळलै वाय् वण्डु वाळ्
तिरु विण्णहर् मन्नु पिरान्
कळल्हळ अन्रि मर्रु ओर्
कळैहण इलम् काण्मिन्गळे ॥ 10

2666. 'काण्मिन्गळ उलहीर् !' ऍन्रु
कण् मुहप्पे निमिर्न्द
ताळ इणैयन् तन्नै-क् कुरुहूर् च्
चडकोपन् शॉन्न
आणै आयिरत्तु-त् तिरु
विण्णहर् प् पत्तुम् वल्लार्
कोणै इन्रि विण्णोर्क्कु
ऍन्रुम् आवर् कुरवर्हळे ॥ 11

2665 जो छाया और आतप, अल्प और महान, ह्रस्व और दीर्घ हैं, जो जंगम और स्थावर (चराचरात्मक) तथा सब अन्य पदार्थ हैं, (इस प्रकार सर्वशरीरी होने पर भी उन वस्तुओं के स्वभाव से अस्पृष्ट होने के कारण) उनसे भिन्न हैं, अव्यक्त और मधुर झंकार से युक्त मधुकरों से आश्रित तिरुविण्णगर में नित्य वास करते उपकारी हैं, उनके चरण छोड़ कर हमें दूसरी कोई गति नहीं। (यह उपचारोक्ति नहीं) तुम ही देख लो। 10

2666 'देखो लोकवासियो!' कह कर, उनकी आँखों के सामने ही उठते चरणयुग से युक्त भगवान् पर कुरुहूर के (संत) शठकोप के कथित भगवदनुशासनात्मक सहस्रगीति में तिरुविण्णगर विषयक इस दशक के पठन में जो समर्थ हैं वे नित्यसूरियों के सब काल में निस्संकोच गुरुजन होते हैं (अर्थात् आदरणीय और पूज्य होते हैं।)। 11

VI. iv. कुरवै आयृच्चियर्

2667. कुरवै आयृच्चियरोडु कोत्तदम्
कुनृरम् ऑनृरु एन्दियदुम्
उरवु नीर्-प् पॉऱ्है नाहम् कायृन्ददुम्
उट्पड मऱ्ऱुम् पल
अरविल् पळ्ळि-प् पिरान् तन्
माय विनैहळैये अलऱ्ऱि
इरवुम् नन् पहलुम् तविर्हिलन्
ऍन्न कुरैवु ऍनक्के ? 1

2668. गेय-त् तीम कुळल् ऊदिऱ्ऱुम् निरै
मेयृत्तदुम् केण्डै ऑण् कण्
वाश-प् पूम् कुळल् पिन्नै तोळ्हळ
मणन्ददुम् मऱ्ऱुम् पल
माय-क् कोल-प् पिरान् तन् शॅय्है
निनैन्दु मनम् कुळैन्दु
नेयत्तोडु कळिन्द पोद
ऍनक्कु ऍव् उलहम् निहरे ? 2

2669. निहर् इल् मल्लरै-च् चॅऱ्ऱदुम् निरै
मेयृत्तदुम् नीळ् नॅडुम् कै-च्
चिकर मा कळिऱु अट्टदम्
इवै पोल्वनवुम् पिरवुम्
पुहर् कॉळ शोदि-प् पिरान् तन् शॅय्है
निनैन्दु पुलम्बि ऍनरुम्
नुहर वैहल् वैह-प् पॅऱ्ऱेन् ऍनक्कु
ऍन् इनि नोव दुवे ? 3

VI. iv. कुरवै (रासलीला)

[अवतारान्तरो के प्रसंग के बिना श्रीकृष्ण की ही लीलाओ को देख कर संत का आनंदित होना।]

2667 गोपियों के संग रासलीला करना, अद्वितीय गिरि को धारण करना, (विषज्वाला के कारण) दुष्प्राप जलपूर्ण तड़ाग में नाग (कालिय) का निरसन आदि और भी अनेक मायाकार्य (अर्थात् अद्भुत विहार) जो सर्पशायी भगवान् कृत हैं उन्हें भव्य रात दिन रटते रटते हम रुकते नहीं। हमें किसकी कमी है ? 1

2668 गेय मधुर मुरली वादन, गो-समूह चराना, सुंदर मीनलोचनी तथा सुंदर सुगंध-केशी नप्पिन्नै का भुजालिंगन ऐसे ही अन्य अनेक मनोहर मायी प्रभु की लीलाएं सस्नेह स्मरण कर के मेरा मन शिथिल हो जाता है। जब मेरा जीवन काल ऐसा बीतता है, कौन है वह लोक जो मेरे समान होगा ? (लोक लोकवासी जन।) 2

2669 निरुपम मल्लों का संहार, गो वृंद चराना, उत्तुंग दीर्घ सूंड से युक्त (पर्वत) शिखर तुल्य महागज का अंत करना, ऐसे ही विहार और अन्य भी विहार जो कांतियुक्त ज्योतिर्मय प्रभु कृत हैं उनका स्मरण कर के और प्रलाप कर के आनंदित हो कर ही मैं अपना समय बिता पाया। इसके बाद मैं क्यों दुखी होऊं ? 3

2670. नोव आय्च्चि उरलोडु आक्कै
इरङ्गिर्रुम् वञ्ज-प् पॅण्णै च्
चाव-प् पाल् उण्डदम् ऊर्
शकटम् इर-च् चाडियदुम्
देव-क् कोल प् पिरान् तन् शॅय्है
निनैन्दु मनम् कुळैन्दु
मेव-क् कालङ्गळ कूडिनेन्
ऍनक्कु ऍन् इनि वेण्डुवदे ? 4

2671. वेण्डि-त् तेवर् इरक्क वन्दु
पिरन्ददम् वीङ्गु इरुळ वाय्
पूण्डु अन्रु अन्नै पुलम्ब-प् पोय् अङ्गु
ओर् आय् क् कुलम् पुक्कदुम्
काण्डल् इन्रि वळन्दु कञ्जनै-त्
तुञ्ज वञ्जम् शॅय्ददम्
ईण्डि नान् अलर्र प् पॅर्रेन्
ऍनक्कु ऍन्न इकल् उळदे ? 5

2672. इहल् कॉळ पुळ्ळै-प् पिळन्ददम्
इमिल् एरुहळ शॅर्रदवुम्
उयर् कॉळ शोलै-क् कुरुन्दु
ऑशित्तदुम् उट्पड मर्रुम् पल
अहल् कॉळ वैयम् अळन्द मायन् ऍन्
अप्पन् तन् मायङ्गळे
पहल् इरा-प् परव-प् पॅर्रेन्
ऍनक्कु ऍन्न मन-प् परिप्पे ? 6

2670 जिससे पीड़ा हो, ऐसी गोपी (यशोदा) के ओखली से बांधने पर आर्त होना, वंचक स्त्री (पूतना) को मारने के लिए उसका स्तन पीना, लुढ़कते शकट को लात मार कर चूरचूर करना आदि कार्य जो देव-विग्रह से युक्त (अर्थात् अप्राकृत सुंदर शरीर से युक्त) श्रीकृष्ण के हैं उनका स्मरण कर जिससे मन शिथिल हो इस प्रकार समय बिताने का सौभाग्य मुझे सिद्ध हुआ। मैं अब और किस की कामना करूं ? 4

2671 देवताओं के प्रार्थना करने पर (वसुदेव के यहां) अपनी इच्छा से ही आ कर जन्म लेना, उसी समय गाढ़ांधकार में जब माता (देवकी) उसे छाती से लगा कर रो रही थी तब वहां से निकल कर गोप-कुल में प्रविष्ट होना, अदृश्य रह कर वहां वर्धित होना, कंस को संहार करने के लिए वंचना करना, मैं यह सब यहां बैठ कर कीर्तन कर पाया। अब मेरे लिए क्लेश कहां है ? 5

2672 शत्रुता से युक्त (बक) पक्षी को विदीर्ण करना, बड़े ककुत् से युक्त वृषभों का अंत करना, उन्नत हरेभरे कुंद वृक्ष को तोड़ना, ये तथा अनेक अन्य लीलाएं (माया) कार्य जो विशाल भूमिमापक मेरे स्वामी ने किए, मैं दिन-रात उनका कीर्तन कर पाया। इसके बाद मुझे मन का दुःख कहां है ? 6

2673. मन-प् परिप्पोड्डु अळुक्कु
मानिड शादियिल् तान् पिरन्दु
तनक्कु वेण्डु उरु-क् कोण्डु
तान् तन शीर्रत्तिनै मुडिक्कुम्
पुनत्तुळाय् मुडि माले मार्बन्
एॅन् अप्पन् तन् मायङ्गळे
निनैक्कुम् नॆञ्जु उडैयेन् एॅनक्कु इनि
यार् निहर् नीळ निलत्ते ? 7

2674. नीळ निलत्तोॅडु वान् वियप्प
निरै पॅरुम् पोहॅळ शॅय्द
वाणन् आयिरम् तोळ तुणित्तदुम्
उट्पड मर्रुम् पल
माणि आय् निलम् कोॅण्ड मायन्
एॅन् अप्पन् तन् मायङ्गळे
काणुम् नॆञ्जु उडैयेन् एॅनक्कु
इनि एॅन्न कलक्कम् उण्डे ? ८

2675. कलक्क एळ् कडल् एळ् मलै
उलहु एळुम् कळिय-क् कडाय्
उलक-त् तेर् कोॅडु शॅन्र मायमम्
उट्पड मर्रुम् पल
वल-क् कै आळि इड-क् कै-च् चङ्गम्
इवै उडै माल् वण्णनै
मलक्कु ना उडै येर्कु मारु उळदो
इम् मण्णिन् मिशै ये ? 9

2673 (लोगों की दीन दशा देख कर) मानस-दुख के साथ हेय मनुष्य जाति में आ कर स्वयं जन्म लेना, अपनी इच्छानुसार (चतुर्भुजरूप या द्विभुजरूप) ले कर (शत्रु निरसन से) अपना कोप शांत करना ये अद्भुत लीलाएं जो अभिनव तुलसी भूषित किरीट और मालालंकृत वक्ष से युक्त मेरे स्वामी की है, उनका स्मरण करता है मेरा मन। इसके बाद महापृथिवी मे कौन है जो मेरे समान हो? 7

2674 महापृथिवी और स्वर्ग दोनो को आश्चर्य मे मग्न करते हुए अंगो से पूर्ण महायुद्ध कर के, बाण (असुर) की सहस्र भुजाओ को काट देना आदि और भी अनेक आश्चर्यमय चेष्टाएं जो वामन बन कर कर भूमि ग्रहण करते मायी मेरे स्वामी ने की है, उनका साक्षात्कार करनेवाला हो गया मेरा मन। इसके बाद (कौन सर्वेश्वर है, कौन मेरा रक्षक है इस प्रकार सर्वेश्वरत्व तथा रक्षकत्व विषय मे) मेरे मन मे कोई क्षोभ कैसे हो सकता है? ८

2675 (परमधाम मे रखे वैदिक पुत्रो को लाने के लिए) सप्त सागर सप्त कुलाचल तथा सप्त लोक जिससे क्षुभित हुए इस प्रकार उन सब को उस पार सुदृढ़ और अविकृत रथ हाँकते हुए चलने का अद्भुत कार्य एवमादि और भी अनेक लीलाएं जिनकी हैं, तथा जिनके दक्षिण हस्त में चक्र और वाम हस्त में शंख हैं, उन श्यामलवर्ण प्रभु को क्षुभित करने में कुशल है मेरी जिह्वा (अर्थात् वाक् शक्ति)। इस पृथिवीतल में कौन है वह जो ऐसी शक्ति से युक्त हो कर मेरा सामना करे? 9

2676. मण् मिशै प् पॆरुम् बारम् नीङ्ग
    ओर् बारद मा पॆरुम् पोर्
पण्णि मायङ्गळ शॆय्दु शेनैयै-प्
    पाळ पड नूऱ्ऱिट्टु-प् पोय्
विण् मिशै त् तन दाममे पुह
    मेविय शोदि तन् ताळ
नण्णि नान् वणङ्ग-प् पॆऱ्ऱेन्
    ऍनक्कु आर् पिरर् नायकरे ? 10

2677 नायकन् मळु एळ उलहुक्कुम् आय
    मुळु एळ् उलहुम् तन्
वाय् अहम् पुह वैत्तु उमिळ्न्दु
    अवै आय् अवै अल्लनुम् आम्
केशवन् अडि इणै मिशै क् कुरुहूर् च्
    चडकोपन् शॊन्न
तूय आयिरत्तु इप् पत्ताल्
    पत्तर् आवर् तुवळ इन्ऱिये ॥ 11

2676 पृथिवी का महाभार दूर करने के लिए विलक्षण भारत महायुद्ध कर के अद्भुत कार्य कर के सेना को अस्त-व्यस्त और ध्वस्त कर के, परमाकाश में अपने परमधाम में प्रवेश करने निकले ज्योतिर्मय (श्रीकृष्ण) के पाद मूल प्राप्त कर मैं प्रणाम कर पाया। अब दूसरा कौन है जो मेरा नायक हो (अर्थात् मेरा नियंता हो)? 10

2677 कृत्स्न सब लोकों का जो नायक है, कृत्स्न सब लोक अपने मुंह में डाल कर अर्थात् निगल कर। जो उगलता है जो वह लोक होते हैं और होना भी नहीं (अर्थात उनका अंतरात्मा है और उनके दोषों से अस्पृष्ट है), जो केशव है (अर्थात् केशिहन्ता है), उसके चरण युग पर कुरुहूर शठकोप के रचित पावन सहस्र गीति में इस दशक के पठन से दोषविहीन भक्त होंगे। 11

VI. v. तुवळ इल्

2678. तुवळ् इल् मा मणि माडम् ओङ्गु
तॊलै विल्लि मङ्गलम् तॊळुम्
इवळै नीर् इनि अन्नैमीर्! उमक्कु
आशै इल्लै विडुमिनो
'दवळ ऒण् शङ्गु शक्करम्' ऍन्रुम्
'तामरै त् तडम् कण्' ऍन्रुम्
कुवळै ऒण् मलर्-क् कण्गळ नीर् मल्ह
निन्रु निन्रु कुमुरुमे ॥ 1

2679. कुमुरुम् ओशै विळवु ऒलि-त्
तॊलै विल्लि मङ्गलम् कॊण्डु पुक्कु
अमुद मॆन् मॊळियाळै नीर् उमक्कु
आशै इन्रि अहर्रिनीर्
तिमिर् कॊण्डाल् ऒत्तु निर्कुम् मर्रु इवळ
देव देव पिरान् ऍन्रे
निमियुम् वायोडु कण्गळ नीर् मल्ह
नॆक्कु ऒशिन्दु करैयुमे ॥ 2

2680 करै कॊळ् पैम् पॊळिल् तण् पनै त्
तॊलै विल्लि मङ्गलम् कॊण्डु पुक्कु
उरै कॊळ इन् मॊळियाळै नीर्
उमक्कु आशै इन्रि अहर्रिनीर्
तिरै कॊळ पौव्वत्तु-च् चेर्न्ददुम्
तिशै ञालम् तावि अळन्ददुम्
निरैहळ मेय्त्तदुमे पिदर्रि
नॆडुम् कण् नीर् मल्ह निरकुमे ॥ 3

VI. v. तुवळिल् —(निरवद्य)

(तोलै-विल्लिमङ्गलम् क्षेत्र)

[इस दशक मे संत श्रीशठकोप की प्रकृति कही जाती है। इसके पूर्व और पश्चात् भगवान के गुण और रूप का वर्णन है। सब मानसानुभव था। बाह्य संश्लेष की अप्राप्ति मे संत का नायिका भाव होता है। भगवान् के गुणगान करने और उसके पास जाने के लिए नायिका गृह से निकलने लगती है, माता और बांधव परांकुशनायिका की सखी से प्रार्थना करती है कि समझा बुझा कर इसे यहीं रखो। तब सखी कहती है—]

2678 निरवद्य महार्घ मणिमय सौधो से उन्नत तोलैविल्लिमंगलम् (क्षेत्र) की वंदना करती इसको (अर्थात् अपनी पुत्री को) इसके बाद (नायक के पास, निकल जाने से शोक रखने की प्रत्याशा मत करो, माताओ! इसे छोड़ दो। "धवल और सुंदर शंख तथा चक्र" "विशाल पंकजलोचन" कहते हुए कुवलय पुष्प सम सुंदर नयनों मे आंसू बहाते हुए खड़ी खड़ी सिसकती रहती है।

तोलैविल्लिमंगलम् —दक्षिण भारत मे तिरुनेल्वेलि जिले मे एक क्षेत्र है जो ताम्रपर्णी नदी के तीर पर है और शठकोप के जन्मस्थान कुरुकूर के पास भी।] 1

2679 गंभीर (मंगल वाद्यों की) ध्वनि के साथ उत्सव कोलाहल से भरे तोलै विल्लि मंगलम् अमृत मृदु वचनी इसको ले जा कर (इसकी भावुकता समझने की) आशा किए बिना तुम्हीं ने इसे दूर कर लिया। स्तब्ध सी हो कर निश्चेष्ट खड़ी है। इसके भी ऊपर स्फुरिताधर से "देवदेव! उपकारी (प्रभु)!" कह कर आंखो में आंसू भर कर शिथिल और परवश हो कर घुल जाती है। 2

2680 (ताम्रपर्णी नदी के) तीर पर श्याम हरेभरे उपवनो के सुंदर वृक्षो से संयुक्त तोलैविल्लि मंगलम् ले जा कर, लोक-प्रशंसित इस मधुरभाषिणी की (भावुकता समझने की) आशा किए बिना तुम लोगों ने इसे अपने से दूर कर लिया। (परम-पुरुष का) तरंगित सागर पर शयित होना, दिशाओं तक फैली भूमि को चरण बढ़ा कर मापना, तथा गोसमूह चराना इन्हीं का गान गाते हुए दीर्घ नयनों में आंसू भर कर खड़ी रहती है। 3

2681. निर्कुम् नाल् मरै वाणर् वाळ्
तॊलै विल्लि मङ्गलम् कण्ड पिन्
अर्कम् ऒन्रुम् अरिवु उराळ
मलिन्दाळ कण्डीर् इवळ अन्नैमीर्!
कर्कुम् कल्वि ऎल्लाम् करुम् कडल्
वण्णन् कण्ण पिरान् ऎन्रे
ऒर्कम् ऒन्रुम् इलळ् उहन्दु उहन्दु
उळ् महिळ्न्दु कुळैयुमे॥

2682. कुळैयुम् वाळ मुहत्तु एळैयैत्
तॊलै विल्लि मङ्गलम् कॊण्डु पुक्कु
इळै कॊळ शोदि-च् चॆम् तामरैक् कण्
पिरान् इरुन्दमै काट्टिनीर्
मळै पॆय्दाल् ऒक्कुम् कण्ण नीरिनॊड
अन्रु तॊट्टुम् मैयान्द् इवळ्
नुळैयुम् शिन्दैयळ् अन्नैमीर्! तॊळुम्
अत् तिशै उर्रु नोक्किये॥

2683. नोक्कुम् पक्कम् ऎल्लाम् करुम्बॊडु
शॆन्नेल् ओङ्गु शॆम् तामरै
वाय्क्कुम् तण् पॊरुनल् वड करै
वण् तॊलै विल्लि मङ्गलम्
नोक्कुमेल् अत् तिशै अल्लाल् मरु
नोक्कु इलळ् वैहल् नाळ तॊरुम्
वाय्-क् कॊळ वाशहमुम् मणि
वण्णन् नाममे इवळ् अन्नैमीर्!

2681 नित्य चार वेदों के प्रवर्तक सज्जनों से समाश्रित तोलैविल्लि मंगलम् का दर्शन करने पर इस (नायिका) की स्वाभाविक नम्रता स्वल्प भी नही रह गई। यह अविधेय हो गई, तुम ही देखो, माताओ! इसकी सीखी सब विद्या यही है कि "नीलसागर वर्ण कान्ह मेरा उपकारी है"। कुछ भी संकोच नही करती। हर्षित हर्षित होती है। मन मे आनंदित हो कर घुल जाती है। 4

2682 सुकुमार सुंदरमुखी प्रकृतिचपला इस (कुमारी) को तोलैविल्लि मंगलम (क्षेत्र) ले जा कर सर्वाभरणालंकृत अरुणसरसिजाक्ष ज्योतिर्मय उपकारी प्रभु का आसीनावस्था मे दर्शन कराया। उस दिन से ले कर वर्षधारातुल्य अश्रुप्रवाह के साथ मोहित हो गई। (उस के सौंदर्यध्यान मे) चिन्तामग्न हो गई। माताओ! (जहां वह विराजमान है) निरंतर उसी दिशा की ओर देखते हुए प्रणाम करती रहती है। 5

2683 दृष्टिगोचर सब प्रदेशों मे इक्षु के साथ शालिधान, ऊपर बढ़ते अरुण कमल आदि से समृद्ध कमनीय पोरुनल नदी के उत्तर तीर पर स्थित रम्य तोलैविल्लि मंगलम् ही (इसके ध्यान में है)। देखती है तो उस दिशा को छोड़ कर और कुछ देखती नहीं। प्रतिदिन सदैव इसके मुखस्थ वचन भी मणिवर्ण का नाम ही है, माताओ! 6

2684. अन्नैमीर ! अणि मा मयिल् शिरु मान्
इवळ् नम्मै-क् कै वलिन्दु
ऍन्न वार्त्तैयुम् केट्कुराळ •
तोॅलै विल्लि मङ्गलम् ऍन्रल्लाल्
मुन्नम् नोर्र विदि कोॅलो ? मुहिल्
वण्णन् मायम् कोॅलो ? अवन्
शिन्नमुम् तिरु नाममुम् इवळ्
वायनहळ् तिरुन्दवे ॥ 7

2685 तिरुन्द वेदमुम् वेळवियुम्
तिरु मा महळिरुम् ताम् मलिन्द
इरुन्द वाळ् पोॅरुनल् वड करै
वण् तोॅलै विल्लि मङ्गलम्
करुम् तडम् कण्णि कै तोॅळुद अन्
नाळ तोॅडङ्गि इन् नाळ् तोॅरुम्
इरुन्दु इरुन्दु 'अरविन्द लोचन !'
ऍन्रु ऍन्रे नैन्द इरङ्गुमे ॥ 8

2686. इरङ्गि नाळ तोॅरुम् वाय् वेरीइ
इवळ् कण्ण नीर्हळ् अलमर
मरङ्गळुम् इरङ्गुम् वहै
'मणि वण्ण ओ !' ऍन्रु कुवुम आल्
तुरङ्गम् वाय् पिळन्दान् उरै
तोॅलै विल्लि मङ्गलम् ऍन्रु तन्
करङ्गळ कूप्पि त् तोॅळुम् अव् ऊर्-त्त
तिरु नामम् कर्रदर् पिन्नैये ॥ 9

2684 माताओ! सुंदर महामोरनी तथा बालहरिणी (तुल्य) यह हमारे हाथ से बाहर हो गई (अर्थात् अब हमारे वचन नहीं मानती)। तोलैविल्लि मंगलम् शब्द को छोड़ कर और कोई भी शब्द यह सुनती नहीं। न जाने, क्या यह पूर्वानुष्ठित विधि है (अर्थात् व्रत का फल है) अथवा मेघवर्ण की माया है (अर्थात् अद्भुत चेष्टा है)? उस के चिह्न और नाम इसके मुंह से हो कर निकलने से सुपरिष्कृत हो गए। 7

2685 (भगवत्स्वरूपादि प्रतिपादक) स्वरादि से सुसंस्कृत वेद, (भगवदाराधनात्मक यज्ञ, श्रीमहालक्ष्मी और स्वयं (भगवान्) (श्रीवैकुंठ से भी) पूर्णरूप में जहां विराजमान है, और जो पोरुनल नदी के उत्तर तीर पर स्थित है, उस मनोहर तोलैविल्लि मंगलम् (देख कर) जिस दिन नीलकुवलयग्लनोचनी कुमारी ने हाथ जोड कर उसकी वंदना की, तब से ले कर इन दिनों मे बार बार यह 'अरविंद लोचन' कहते हुए घुल कर विह्वल होती है।

(पोरुनल् ताम्रपर्णी नदी का साहित्यिक नाम)। 8

2686 यह विह्वल हो कर परवशता से सदैव मुंह से रटती रहती है। नयनों से अश्रु धारा प्रवाहित होती है। जिससे वृक्षवर्ग भी सुन कर विह्वल हो ऐसा 'मणिवर्ण! ओ!' कह कर कूक उठती है, हाय! उस नगर का श्रीनाम सीख लेने के बाद 'तुरंगमुखविदारक (श्रीकृष्ण से) अधिष्ठित तोलैविल्लि मंगलम्' कह कर हाथ जोड कर प्रणाम करती है। 9

2687. पिऩ्ऩै कॉल्? निल मा महळ् कॉल्?
तिरु महळ कॉल्? पिरन्दिट्टाळ
ऍऩ्ऩ मायम् कॉलो? इवळ्
नॅड्डु माल् ऍऩ्ऱे निऩ्ऱु कूवुम् आल्
मूऩ्ऩि वन्दु अवऩ् निऩ्ऱु इरुन्दु
उरैयुम् तॉलै विल्लि मङ्गलम्
शॅऩ्ऩियाल् वणङ्गुम् अव् ऊर् त्
तिरु नामम् केट्पदु शिन्दैये ॥ 10

2688. शिन्दैयालुम् शॉल्लालुम्
शॅय्हैयिनालुम् देवपिराऩैये
तन्दै ताय् ऍऩ्ऱु अडैन्द वण्
कुरुहूरवर् शडकोपऩ् शॉल्
मन्दै आयिरत्तुळ इवै तॉलै
विल्लि मङ्गलत्तै च् चॉऩ्ऩ
शॅन्तमिळ पत्तुम् वल्लवर् अडिमै
शॅय्वार् तिरु मालुक्के ॥ 11

2687 क्या तप्पिनृने ही (इस नायिका के रूप में) जनमी है? अथवा यह भूमि की अधिष्ठात्री है? अथवा श्रीमहालक्ष्मी ही है? यह कैसी माया है? (अर्थात् विचित्र घटना है? न जाने।) "अतिव्यामोह से युक्त प्रभु!" कह कर निरंतर यह कूक उठती है, हाय! पहले ही से जहां वह (प्रभु) उपस्थित हो के खड़ा है और विराजमान है, तथा नित्यवास करता है, उस तोलैविल्लि मंगलम् की वंदना सिर नवा कर करती है। उस नगर का श्रीनाम सुनने में ही दत्तचित्त है। 10

2688 उपकारी देवनायक ही को पिता-माता समझ कर चित्त से, वाक् से, तथा क्रिया से, उनकी शरण में जो गये तथा जो उदार कुरुहूरवासियों के निर्वाहक हैं, उन शठकोप के रचित वेदतुल्य प्राचीन सहस्रगीति में तोलैविल्लि मंगलम् पर कथित मधुर तमिल के इन दस पद्यों के पठन में जो कुशल हैं, वे श्रीमन्नारायण की सेवा में लग जाएंगे। 11

VI. vi. मालुक्कू

2689. मालुक्कू वैयम् अळन्द मणाळर्कू
नील-क् करु निर मेह नियायर्कू
कोल-च् चॆन्तामरै-क् कण्णर्कू
एॅन् कॊङ्गु अलर्
एल-क् कूळलि इळन्ददू शङ्गै॥ 1

2690. शङ्गु विल् वाळ तण्डु शक्कर-क् कैयर्कू
शॆङ्कनि वाय्-च् चॆय्य तामरै-क् कण्णर्कू
कॊङ्गु अलर् तण् अमू तुळाय् मूडियानुक्कू एन्
मङ्गै इळन्ददू मामै निरमे॥ 2

2691. निरम् करियानुक्कु नीडु उलहु उण्ड
तिरम् किळर् वाय्-च् चिरु क् कळ्ळन् अवर्कु
करङ्गिय शक्कर-क् कैयवनुक्कु एॅन्
पिरङ्गु इरुम् कून्दल् इळन्ददु पीडे॥ 3

2692. पीडु उडै नान् मुहनै-प् पडैत्तानुक्कु
माडु उडै वैयम् अळन्द मणाळर्कु
नाडु उडै मन्नर्कु-त्
तूदु शॆल् नम्बिक्कु एॅन्
पाडु उडै अल्हुळ् इजन्ददु पण्बे॥ 4

VI. vi. मालक्कु

(सर्वेश्वर को)

[भगवद्दर्शनाभाव से मूर्छित नायिका की दशा का वर्णन उसकी माता करती है।]

2689 सर्वेश्वर को, भूमि मापक नायक को, नील श्यामलवण मेघ समान) न्याय को (अर्थात् मेघ के समान तापहर प्रियतम को), दर्शनीय रक्ताभोज नयन (प्रभु) को (न देखने के कारण) मधुस्यंदि पुष्प सुगंध केशी (मेरी पुत्री) ने जो खोया वह है शंख (अर्थात् शंख का बना वलय)। 1

2690 शंख, धनुष, खड्ग, गदा और चक्रधर हस्त को, रक्त (बिंब, फलाधर रक्ताभोजनयन को, गंध विकास से युक्त शीत और सुंदर तुलसीसमलंकृत किरीटी को (अर्थात् उसके कारण) मेरी कुमारी ने जो खोया वह है सुंदर (शरीर) कांति। 2

2691 वर्ण से श्यामल को, विशाल लोक ग्रसनप्रकार सूचक मुख से युक्त बाल चोर को, भ्रमणशील चक्रहस्त को, मेरी घनदीर्घकेशी ने खोई अपनी प्रतिष्ठा। 3

2692 महत्त्वयुक्त चतुर्मुख के स्रष्टा को, धनपूर्ण भूमि के मापक नायक को, देशाधिप राजाओ के (अर्थात् पंच पांडवो के) दौत्य में चले नम्बी को, बिपुलतायुक्त नितंबवती (मेरी पुत्री) ने खोया अपना बिलक्षण स्वभाव। 4

2693. पण्बु उडै वेदम् पयन्द परनुक्कु
मण् पुरै वैयम् इडन्द वराहर्कु
तॅण् पुनल् पळ्ळि ऍन् देव पिरानुक्कु · ऍन्
कण् पुनै कोदै इळन्ददु कर्पे ॥ 5

2694. कर्पह-क् का वन नल् पल तोळर्कु
पोॅर् चुडर्-क् कुन्रन्न पूम् तण् मुडियर्कु
नर् पल तामरै नाण् मलर्-क् कैयर्कु ऍन्
विल् पुरुव-क् कॉडि तोर्ददु मॅय्ये ॥ 6

2695 मॅय् अमर् पल् कलन् नन्गु अणिन्दानुक्कु
पै अरविन् अणै प् पळ्ळि यिनानुक्कु
कैयॉडु काल् शॅय्य कण्ण पिरानुक्कु ऍन्
तैयल् इळन्ददु तन्नुडै च् चाय ॥ 7

2696. शाय-क् कुरुन्दम् ऑशित्त तमियर्कु
माय-च् चकडम् उदैत्त मणाळर्कु
पेयै-प् पिणम् पड प् पाल्
उण् पिरानुक्कु ऍन्
आश-क् कुळलि इळन्ददु माण्बे ॥ 8

2693 (भगवत्स्वरूप आदि का उपदेश देने से) उत्तम स्वभाव विशिष्ट वेदों को (ब्रह्मादि को) देते परमात्मा को, मिट्टी से भरी भूमि के उद्धारक वराह को, प्रशांत सागर शायी मेरे देवाधिदेव को (अर्थात् उस के निमित्त) नयनाकर्षक मालाधारिणी मेरी पुत्री ने खोया अपना ज्ञान। 5

2694 कल्पवृक्षोद्यान सदृश उत्तम अनेक भुजों से युक्त को, भास्वर कनकगिरि सदृश सुंदर और अनुकूल किरीट से अलंकृत को, दिव्य अनेक अभिनव कमलपुष्प तुल्य हस्त से युक्त को चाप सम भौंहों से युक्त लता (तुल्य कन्या) ने खोया अपना शरीर। 6

2695 शरीर पर जुड़े विविध आभरणों से सभूषित को, विकसितफण सर्पशयन पर शयित (स्वामी) को, रक्त हस्त पादयुक्त कान्ह प्रभु को, (उसके निमित्त) मेरी कन्या ने खोई अपनी छाया (अर्थात् शोभा)। 7

2696 एकाकी ही कुंद वृक्ष गिरा कर तोड़ते (शूर) को, शकट नाश के लिए लात मारते नायक को, पिशाचिनी के स्तनपायी तथा मृत्युदायी, उपकारी को, मेरी सुगंधकुंतला ने खोई अपनी महत्ता। 8

2697. माण्बु अमै कोलत्तु ऍम् माय क् कुरळर्कु
शॆण् शुडर्-क् कुन्रन्न शॆम् शुडर् मूर्त्तिक्कु
काण् पॆरुम् तोर्रत्तु ऍन्
काकुत्त नम्बिक्कु ऍन्
पूण् पुनै मॆन् मुलै तोर्रदु पोर्पे ॥ 9

2698. पोर्पु अमै नीळ् मुडि प् पिरानुक्कु
मर्पोरु तोळ् उडै माय-प् पिरानुक्कु
निर्पन पल् उरुवाय् निर्कुम् मायरकु ऍन्
कर्पुडै आट्टि इळन्ददु कट्टे ॥ 10

2699. कट्टु ऍळिल् शोलै नल् वेङ्गड वाणनै
कट्टु ऍळिल् तॆन् कुरुहूर्-च् चडकोपन् शॊल्
कट्ट ऍळिल् आयिरत्तु इप्-पत्तुम् वल्लवर्
कट्टु ऍळिल् वानवर् बोगम् उण्बारे ॥ 11

2697 सौंदर्यमय विग्रह से युक्त मेरे कपट-वामन को, उन्नत भास्वर गिरिवस्तुल्य रक्त ज्योतिर्मय मूर्ति को, दर्शनीय आकृतिविशिष्ट मेरे काकुत्स्थ नम्बी को, (उसके निमित्त) भूषणभूषित मृदुलपयोधरा (कन्या) ने खोया अपना सौंदर्य । 9

2698 सौंदर्य विशिष्ट दीर्घ किरीटी को, सुंदर शीतल तुलसीधारी को, मल्लों से भिड़ते भुजयुत उपकारी मायी को प्रमाणों से स्थिर स्थित विविध रूपों से खड़े गोपाल कृष्ण को विवेकिनी मेरी कन्या ने खोया अपना सब कुछ । 10

2699 पूर्ण सौंदर्ययुत उपवनों से परिवृत उत्तम वेंकट गिरि के ईश्वर पर पूर्णरक्षायुत सुंदर कुरुहूर के शठकोप के रचित संदर्भ सौंदर्य से युत सहस्र-गीति में इस दशक का जो पठन करते हैं, वे पूर्ण महिमायुत नित्यसूरियों के भोग का अनुभव करेंगे । 11

VI. vii. उण्णुम् शोरु

2700. उण्णुम् शोरु परुहु नीर्
तिन्नुम् वॆर्रिलैयुम एॅल्लाम्
कण्णन् एॅम् पॆॅरुमान्
एॅन्रु एॅन्रे कणाळ् नीर् मल्हि
मण्णिनुळ् अवन् शीर्
वळम् मिक्कवन् ऊर् विनवि
तिण्णम् एॅन् इळमान्
पुहुम् ऊर् तिरुक्कोळूरे। 1

2701. ऊरुम् नाडुम् उलहमुम्
तन्नैप् पोल् अवनुडैय
पेरुम् ताहॆळ्मे पिदर्र-क्
कर्पु वान् इडरि
शेरु नल् वळम् शेर्
पळनत् तिरुक् कोळूर्क्कॆ
पोरुम् कोॅल्? उरैयीर्
कोॅडियेन् कोॅडि पूवैहळे? 2

2702. पूवै पैङ्-किळिहळ् पन्दु
तूदै पूम् पुट्टिल्हळ्
यावैयुम् तिरुमाल् तिरु–
नामङ्गळे कूवि एॅळुम् एॅन्
पावै पोय् इनित् तण्
पळन-त् तिरु-क् कोळूर्क्कॆ
कोवै वाय् तुडिप्प मळैक्
कण्णोॅडु एॅन् शेय्युम् कोलो? 3

VI. vii. उण्णुम् शोरुम्

(भुज्यमान अन्न)

[तिरु-के-कोळूर् क्षेत्र]

[मूर्छित नायिका लब्ध संज्ञा हुई। प्रियतम-प्रेम से प्रेरित हो कर माता, बंधूवर्ग और क्रीड़ोपकरणों को भी तज कर उसके आवास स्थान जाने के लिए गृह से निकल जाती है। कुछ देर बाद माता देखती है कि कुमारी गृह में नहीं। गृह से निकली नायिका की दशा सोच कर माता विलपती है]

2700 "भुज्यमान अन्न, पीयमान जल और भोग्य पान—सब मेरे लिए मेरा स्वामी कान्ह है" ऐसा कहते कहते, आंखों में आंसू बहाते बालहरिणी मेरी कन्या (गृह से) निकल गई। पृथिवी में मंगल गुणवान् और विभवपूर्ण अपने प्रियतम के स्थान की पूछ ताछ कर के वह अवश्य जहां पहुंच जाएगी वह स्थान है तिरु-क् कोळूर्।

[तिरु-क् कोळूर्—संत शठकोप के कुरहूर के पास ही विद्यमान क्षेत्र है। वह संत मधुर कवि का जन्मस्थान है।] 1

2701 जिससे ग्राम, जनपद और लोक अपने ही जैसे उस (प्रियतम) के नाम और मालाएं कीर्तन करें ऐसी मेरी कन्या (स्त्रीत्व की) ऊंची मर्यादा का उल्लंघन कर (निकली और) उत्तम समृद्धि से युक्त क्षेत्रों से परिवृत तिरुक्कोळूर में पहुंच ही जाएगी। क्या फिर मुझे देखने के लिए) लौटेगी भी पापिनी मेरी लता (तुल्य) कन्या ? तुम ही कहो, शारिकाओ! 2

2702 शारिका और हरितवर्ण शुक-गण, कंदुक और खिलौने. तथा फूल-पिटारी—सब तो इस नायिका को श्रीमन् नारायण ही हैं। उनके मधुर नामों का कीर्तन करते हुए जीती मेरी यह सुंदर कन्या शीतक्षेत्र परिवृत तिरुक्-कोळूर् जा कर तदनंतर (वहां अभीष्ट पाकर हर्षित रहेगी अथवा मनोरथ अपूर्ण होने के कारण) बिंबाधर के स्फुरण से और अश्रुपूर्ण नयनों से रोती रहेगी। वहां जा कर क्या करती होगी? 3

2703. कोॅल्लै एॅन्बर् कोॅलो ?
गुणम् मिक्कनळ् एॅन्बर् कोॅलो ?
शिल्लै वाय्-प् पेॅण्डिहळ्
अयर् चेरि उळ्ळारुम् एॅल्ले !
शेॅल्वम् मल्हि अवन्
किडन्द तिरु-क् कोळूर्क्के
मेल् इडै नुडङ्ग
इळ मान् शेॅल्ल मेविनळे ॥ 4

2704. मेवि नैन्दु नैन्दु विळैयाडल्
उराळ् एॅन् शिरु-त्
तेवि पोय् इनि-त् तन्
तिरुमाल् तिरु-क् कोळूरिल्
पूवियल् पोॅळिलुम् तडमुम्
अवन् कोयिलुम् कण्डु
आवि उळ् कुळिर एॅङ्ङने
उहक्कुम् कोॅल् इन्रे ? 5

2705. इन्रु एॅनक्कु उदवादु अहन्र
इळ मान् इनि-प् पोय्
तेॅन् तिशै-त् तिलदम् अनैय-त्
तिरु-क् कोळूर्क्के
शेॅन्रु तन् तिरुमाल् तिरु-क्
कण्णुम् शेॅव्वायुम् कण्डु
निन्रु निन्रु नैयुम्
नेॅडुम् कण्णळ् पनि मल्हवे ॥ 6

2703 अपनी कोमल कटि की व्यथा की उपेक्षा कर के बाल हरिणी (तुल्य यह नायिका) संपत्समृद्ध तिरुक्-कोळूर जाने में व्यस्त हुई जहां वह (नायक शयित है)। परनिंदा में लगी (हमारे गांव की) स्त्रियां तथा पड़ोस के गांव की स्त्रियां क्या कहेंगी 'यह गुणहीन कन्या है'; अथवा कहेंगी कि 'अतिगुणवती है'। (मैं नहीं जानती) हाय? 4

2704 (प्रियतम-प्राप्ति की) इच्छा कर (अप्राप्ति से) विह्वल होते होते क्रीड़ा में भी अब उसका मन नहीं लगता। मेरी बाल देवी यहां से जा कर तदनंतर अपने (प्रिय) श्रीमन्नारायण के तिरुक्-कोळूर में सदैव पुष्पयुक्त फुलवारियां तडाग और उसका मंदिर देख कर मन मे शांति पा कर आज वह हर्षित कैसे होती है? (इसे देखने की इच्छा करती हूं)। 5

2705 (साथ रह कर) आज मेरी सहायता किए बिना मेरी बाल हरिणी (कन्या) दूर जा कर, तदनंतर दक्खिन दिशा के तिलक के सदृश तिरुक्-कोळूर जा कर अपने श्रीमन्नारायण के रम्य नेत्र और रक्ताधर देख कर खड़ी खड़ी दीर्घ नयनों में आंसू भर कर (हर्ष से) शिथिल हो जाएगी। (अपने प्रियतम को देख कर आनंद के आंसू बहाएगी और शिथिल हो जाएगी। यहां रहने से उस दशा में स्थित मेरी पुत्री का दर्शन करने का सौभाग्य मुझे नहीं मिला। 6

2706. मल्हु नीर्-क् कण्णोॅडु
मैयल् उर्र मनत्तनळ् आय्
अल्लुम् नन् पहलुम् 'नॅडुमाल्'
ऍन्रु अळैत्तु इनि-प् पोय्
शॅल्वम् मल्हि अवन्
किडन्द तिरुक्-कोळूर्क्के
ऑल्हि ऑल्हि नडन्दु
ऍङ्ङने पुहुम् कॉल् ऑशिन्दे ? 7

2707. ऑशिन्द नुण् इडै मेल् कैयै
वैत्तु नॉन्द नॉन्दु
कशिन्द नॅञ्जिनळ् आय्-क् कण्ण नीर्
तुळुम्ब च् चॅल्लुम् कॉल ?
ऑशिन्द ऑण् मलराळ्
कॉळुनन् तिरु क् कोळूर्क्के
कशिन्द नॅञ्जिनळ् आय्
ऍम्मै नीत्त ऍम् कारिकैये ? 8

2708. कारियम् नल्लनहळ् अवै काणिल्
ऍन् कण्णनुक्कु ऍन्रु
ईरियाय् इरुप्पाळ् इदु ऍल्लाम्
किडक्क इनि-प् पोय्
शेरि पल् पळि तूय्
इरैप्प-त् तिरु-क् कोळूर्क्के
नेर्इळै नडन्दाळ् ऍम्मै
ऑन्रुम् निनैत्तिलळे ॥ 9

2706 आंखो में आंसू भर कर मन में मोह के साथ रात-दिन 'अत्यधिक व्यामोहकारी (भगवान्)'! कह के आह्वान कर के, इस के भी ऊपर संपत्समृद्ध उसके शयनस्थल तिरुक्कोळूर की ओर थक थक कर चलती हुई शक्तिहीन हो कर वहां कैसे प्रवेश करती होगी? 7

2707 (भोग मे) लुलित सुंदर पद्मोद्भवा लक्ष्मी के पति के तिरुक्-कोळूर की ओर आर्द्रचित्त हो कर हमे तज कर निकली हमारी सुंदर कन्या क्लांत सूक्ष्म कटि पर हाथ रख कर खिन्न होती होती आर्द्रचित्त के साथ आंखो में आंसू बहाते हुए क्या चल कर वहां पहुंच जाएगी? 8

2708 अतिमनोहर भोग्य वस्तुओं को देखती है 'ये मेरे कान्ह के अनुरूप हैं' सोच कर प्रेम से भर जाती है। इन सब के यहां पड़े रहते इन्हें देखे बिना तिरुक्कोळूर को यह (भूषणभूषित) सुन्दरी निकल पड़ी जिसे देख कर गांव की स्त्रियां विविध अपवाद के वचन कह कर कोलाहल मचा रही हैं। हमारा तो स्मरण उसको है ही नहीं। 9

2709. निनैक्किलेन् दॆय्यङ्गाळ्।
नॆञ्जुम् कण् इळ मान् इनि-प् पोय्
अनैत्तु उलहुम् उडैय
अरविन्द लोचननै
तिनैत्तनैयुम् विडाळ्
अवन् शेर् तिरु-क् कोळूर्क्के
मनैक्कु वान् पळियुम् निनैयाळ्
शॆल्ल वैत्तनळे ॥ 10

2710. वैत्त मा निदियाम्
मदुशूदनैये अलर्रि
कॊत्तु अलर् पॊळिल् शूळ्
कुरुहूर्-च् चडकोपन् शॊन्न
पत्तु नूर्रुळ् इप्-पत्तु
अवन् शेर तिरु-क् कोळूर्क्के
शित्तम् वैत्तु उरैप्पार्
तिहळ् पॊन् उलहु आळ्वारे ॥ 11

2709 (इस कन्या के विषय में) मैं कुछ भी सोच नहीं सकती, देवताओ! आयताक्षी बालहरिणी (सदृश सुंदरी) सर्वलोकेश्वर अरविंदलोचन को तिल भर भी न छोड़ने का निश्चय कर के उसके समाश्रित तिरुक्कोळूर चली गयी। अब हमारा वहां जाना अनिवार्य-सा हो गया। कुल के महान् अपयश पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया (उसने)। 10

2710 सुरक्षितमहानिधि कहलाते मधुसूदन का ही नाम ले कर स्मरण करते विकसितपुष्पगुच्छों से समन्वित उपवनों से परिवृत कुरुहूर के संत शठकोप के रचित दशक शतकात्मक सहस्र गीति में इस दशक का कथन भगवदधिष्ठित तिरुक्कोळूर में दत्तचित्त हो कर जो करते हैं वे स्वयंप्रकाश परमधाम के शासक बनेंगे। 11

VI. viii. पॊऩ् उलहु

2711. पॊऩ् उलहु आळीरो ?
    पुवनि मुळ्दु आळीरो ?
नऩ्नल-प् पुळ् इनङ्गाळ् !
    विनैयाट्टियेऩ् नाऩ् इरुन्देऩ्
मुऩ् उलहङ्गाळ् ऎल्लाम् पडैत्त
    मुहिल् वण्णऩ् कण्णऩ्
ऎऩ् नलम् कॊण्ड पिराऩ् तनक्कु
    ऎऩ् निलैमै उरैत्ते ॥ 1

2712. मै अमर् वाळ् नॆडुम् कण् मङ्गैमार्
    मुऩ्वु ऎऩ् कै इरुन्दु
नॆय् अमर् इऩ् अडिशिल्
    निच्चल् पालॊडु मेवीरो
कै अमर् शक्करत्तु ऎऩ्
    कनि वाय्-प् पॆरुमानै-क् कण्डु
मॆय् अमर् कादल् शॊल्लि-क्
    किळिहाळ्! विरैन्दु ओडि वन्दे ? 2

2713. ओडि वन्दु ऎऩ् कुळल् मेल्
    ऒळि मा मलर् ऊदीरो
कूडिय वण्डु इनङ्गाळ् !
    कुरु नाडु उडै ऐवर्हट्कु आय्
आडिय मा नॆडुम् तेर्-प्
    पडै नीरु ऎळ-च् चॆऱ्ऱ पिराऩ्
शूळिय तण् तुळबम् उण्ड
    तू मदु वाय्हळ् कॊण्डे ? 3

VI. viii. पोनूनुलहु

(स्वर्ण-लोक)

[विहग-संदेश]

[प्रेम से प्रेरित नायिका गृह से निकल कर ग्राम-सीमा तक भी उत्कंठा के कारण नहीं जा सकी। वहां उपवन में कई पक्षियों को देख कर उन्हें प्रियतम के पास दौत्य में भेजती है।]

2711 उत्तम सौहार्द से युक्त पक्षि-बृंदो! पापिनी में तुम से याचना करती हूं. (सुनो)। पुरा काल में सकललोक स्रष्टा मेघवर्ण कान्ह मेरा सुगुणापहारी उपकारी के पास (जा कर) उस से मेरी दशा सुनाओ। (यह उपकार करके भेंट में मेरा समर्पित) स्वर्ण लोक (अर्थात् स्वयंप्रकाश परमधाम) का स्वच्छंद शासन करो। तथा सारे भुवन का भी शासन करो। 1

2712 हे शुको! हस्तस्थित चक्र से भूषित बिंबाधर मेरे स्वामी को देख कर, उसके शरीर-संयोग के इच्छुक मेरा प्रेम सुनाओ और वेग से दौडे हुए आ कर अंजनालंकृत समुज्ज्वल विशालाक्षी ललनाओ के सामने मेरे हाथ मे बैठ कर घृत संमिश्रित मधुर अन्न दूध से मिला कर जो नित्य खिलाती हूं उसे कृपया स्वीकार करो। 2

2713 (परस्पर) संयोग से आनंदित मधुकर-गणो! कुरु-जनपद के नृपति होने के अधिकार से युक्त पांच (पांडवों) के लिए जिसने नृत्य जैसे संचार से युक्त घोड़ो से जुड़े रथात्मक आयुध-द्वारा (शत्रु-राजाओं को जीत कर) चकनाचूर कर दिया, उस उपकारी प्रभु के धृत तुलसी से पिए पावन मधु से मीठे अपने मुंह के साथ दौड़े हुए आ कर मेरे अलकों के भास्वर श्लाघ्य पुष्पो पर फूंको। 3

2714. तू मदु वायूहळ् कॊण्डु वन्दु
ऍन् मुल्लैहळ् मेल् तुम्बिहाळ्।
पू मदु उण्ण च् चॆल्लिल्
विनैयेनै-प् पॊय् शॆय्दु अहन्र
मा मदु वार् तण् तुळाय् मुडि
वानवर् कोनै-क् कण्डु
याम् इदुवो तक्क वारु
ऍन्न वेण्डुम् कण्डीर् नुङ्गट्के॥ 4

2715. नुङ्गट्कु यान् उरैक्कॆन् वम्मिन्
यान् वळर्त्त किळिहाळ्।
वॆम् कण् पुळ् ऊर्न्दु वन्दु
विनैयेनै नॆञ्जम् कवर्न्दे
शॆम् कण् करु मुहिलै-च्
चॆय्य वाय् च् चॆळम् कर्पहत्तै
ऍङ्गु च् चॆन्राहिलुम् कण्डु
'इदुवो तक्कवारु ?' ऍन्मिने॥ 5

2716 ऍन् मिन्नु नूल् मार्वन्
ऍन् करुम् पॆरुमान् ऍन् कण्णन्
तन् मन् नीळ् कळल् मेल्
तण् तुळाय् नमक्कन्रि नल्हान्
कन्मिन्गळ् ऍन्रु उम्मै यान्
कर्पिया वैत्त मार्रम् शॊल्लि
शॆन्मिन्गळ् ती विनैयेन्
वळर्त्त शिरु पूवैहळे। 6

2714 मेरी जुही-फूलों पर बैठे भ्रमरो ! यदि पुष्पों का मधु पीने तुम जाओगे तो नित्यसूरियों के नायक (श्रीमन्नारायण) को देख कर अपने पावन मधु-मधुर बचनों से सप्रेम अवश्य इतना पूछ लेना कि (हमारी नायिका के साथ) तुम्हारा ऐसा व्यवहार तुम्हारे स्वभाव के अनुरूप है ? —नित्यसूरियों का नायक, जो पापिनी मुझ से झूठ कर के (अर्थात् असत्य बचन बोल कर) बिछुड़ गया और जो श्लाघ्य मधु प्रवाहित शीत तुलसी मालालंकृत किरीट से भूषित है। 4

2715 तुम से मैं एक बात कहूं, आओ, मेरे संवर्धित शुको ! क्रूरनयन गरुड़ पर आरूढ़ हो के जा आया, जो मुझ पापिनी का चेतोहारी है, जो अरुणनयन कालमेघ है, तथा जो अरुणाधर मनोहर कल्पतरु है, उसे जितनी भी दूर जाना हो जा के देख कर उससे पूछो कि क्या यही तुम्हारी कृपा का ढंग है। 5

2716 मेरा प्रदीप्त यज्ञोपवीत युक्त वक्षस्क मेरा श्याम सुंदर स्वामी, मेरा कान्ह अपने दीर्घ चरण पर नित्य विद्यमान शीत तुलसी को हमें छोड़ कर और किसी को नहीं देगा। मुझ पापिनी की संवर्धित बाला शारिकाओ ! (तुम्हें बुला कर) 'सीख लो' कह कर मैंने तुम्हें जो सिखाए, वे वचन उसे सुना कर तब तुम (जहां चाहो) चलो।

[पापिनी की संवर्धित बाल शारिकाएं—उन से क्रीड़ा कर के हर्षित हुए बिना उन्हें अन्यत्र भेज कर काम कराना पड़ता है, नायिका कहती है यह मेरे पाप के कारण है।] 6

2717. पूहेळ् पोल् निरत्तन्
पुण्डरीकङ्गळ् पोलुम् कण्णन्
यार्युम् यावरुम् आय निन्र
मायन् ए॑न् आळि-प् पिरान्
मावै वल् वाय् पिळन्द
मदुशूदर्कु ए॑न् मार्रम् शो॑ल्लि
पावैहळ्! तीर्किर्रिरे
विनैयाट् टियेन् पाशु अरवे॥ 7

2718 पाशरवु ए॑य्दि इन्ने विनैयेन्
ए॑न्ने ऊळि नैवेन्?
आशरु तूवि वे॑ळ्ळै-क् कुरुहे?
अरुळ् शे॑य् ओ॑रु नाळ्
माशरु नील च् चुडर् मुडि
वानवर् कोनै क् कण्डु
एशरुम् नुम्मै अल्लाल्
मरु नोक्कु इलळ् पेत्तु मर्रे 8

2719 पेत्तु मर्रु ओर् कळेहण्
विनैयाट् टियेन् नान् ओ॑न्रु इलेन्
नीर् त् तिरै मेल् उलवि
इरै तेरुम् पुदा इनङ्गाळ्!
कार् त् तिरळ् मा मुहिल् पोल्
कण्णन् विण्णवर् कोनै-क् कण्डु
वार्त्तेहळ् को॑ण्डु अरुळि उरैयीर्
ऴ् वन्दु इरुन्दे॥ 9

2717 प्रतिमाओ ! जो शारिकासदृश वर्ण है, जो पुंडरीकतुल्यनेत्र है, जो सब चेतन और अचेतन के रूप में अवस्थित मायी है। जो मेरा चक्रधर उपकारी है, तथा जो केशी के प्रबल मुख का विदारक है उसे मेरा वचन सुना कर मुझ पापिनी का वैवर्ण्य हटाओ। (तुम्हें ऐसी शक्ति है न?)।

[प्रतिमाओ—नायिका की विरहवेदना इतनी अत्यधिक हो गई है वह अचेतन प्रतिमाओ को दौत्य में भेजना चाहती है। वह इतना भी नहीं समझ सकती कि वे अचेतन हैं और न उसके भाव समझ सकतीं, न दौत्य में जा सकतीं।] 7

2718 वैवर्ण्य प्राप्त कर पापिनी मैं इस प्रकार कितने (ब्रह्म) कल्प व्यथित हो कर रहूँगी? निर्मलपक्ष धवल सारस! कृपा कर एक दिन विमल नील ज्योतिर्मयकुंतलभारालंकृत नित्यसूरिनाथ को देख कर उससे कहो कि (नायिका की दशा ऐसी है कि) वह दूसरों की निंदा पर ध्यान नहीं देती। (तुम्हारे उपेक्षा करने पर भी) तुम्हें छोड़ कर उसे कोई दूसरा रक्षक नहीं। 8

2719 तुम्हें छोड़ कर मुझ पापिनी का दूसरा कोई रक्षक नहीं जल-तरंगो पर टहल कर आहारान्वेषी बक पक्षियो! वर्षाकाल में एकत्रित महामेघ बृंद सदृश (वर्ण) कान्ह सूरियो के साथ देख कर उनके वचन सुन कर यहां आ के बैठ कर नित्य मुझे सुनाओ। 9

2720. वन्दु इरुन्दु उम्मुडेय
    मणि-च् चेवलुम् नोरुम् ए॑ल्लाम्
अन्दरम् ओ॑न्ऱुम् इन्ऱि
    अलर् मेल् अशैयुम् अन्नङ्गाळ्
ए॑न् तिरु मार्वर्कु ए॑न्नै 'इन्न वारु
    इवळ् काण्मिन्' ए॑न्ऱु
मन्दिरत्तु ओ॑न्ऱु उणर्त्ति
    उरैयीर् मरु मार्ऱङ्गळे ॥ 10

2721. मार्ऱङ्गळ् आय्न्दु कोॅण्डु
    मदु शूद पिरान् अडि मेल्
नार्ऱम् कोॅळ् पूम् पोॅऴिल् शूळ्
    कुरुहूर् च् चडकोपन् शोॅन्न
तोॅर्ऱङ्गळ् आयिरत्तुळ् इवैयुम्
    ओॅरु पत्तुम वल्लार्
ऊर्ऱिन् कण् नुण् मणल् पोल्
    उरुहा निर्पर् नीराये ॥ 11

2720 अपने अपने पति के साथ बिना किसी उपरोध के कमलों पर बैठ कर हिलती रहती हंसियो ! लक्ष्मी से समालिंगित वक्ष से युक्त मेरे प्रभु से (अर्थात् एकांत में) मेरे विषय में यह कह कर कि "ऐसी है उनकी दशा, देखो" यहां आ कर उन के प्रतिवचन मुझे सुनाओ। 10

2721 शब्दों को चुन कर मधुसूदन के चरण पर सुगंधपूर्ण सुंदर उपवनों से परिवृत कुरुहूर के शठकोप से रचित स्वयं आविर्भूत (अर्थात् असंकल्पपूर्वक ही उनके मुंह से निकले) सहस्र (पद्यों) में अद्वितीय इस दशक के पठन में जो कुशल हैं वे स्रोत के समीपस्थ सूक्ष्म सिकता के समान जल में जैसे घुल जाएंगे। 11

VI. ix. नीर् आय् निलन् आय्

2722. नीर् आय् निलन् आय्-त् ती आय्-क्
काल् आय् नॆडु वान् आय्
शीरार् शुडर्हळ् इरण्डु आय्-च्
चिवन् आय् अयन् आनाय् !
कूरार् आळि वॆण् शङ्गु
एन्दि-क् कॊडियेन् पाल्
वाराय् ऒरु नाळ्
मण्णुम् विण्णुम् महिळवे ॥ 1

2723. मण्णुम् विण्णुम् महिळ-क्
कुरळ् आय् वलम् काट्टि
मण्णुम् विण्णुम् कॊण्ड
माय अम्माने !
नण्णि उनै नान् कण्डु
उहन्दु कूत्ताड
नण्णि ऒरु नाळ्
ञालत्तूडे नडवाये ॥ 2

2724. ञालत्तूडे नडन्दुम्
निन्ऱुम् किडन्दु इरुन्दुम्
शाल-प् पल नाळ् उहम् तोऱु
उयिर्हळ् काप्पाने !
कोल-त् तिरु मा महळोडु
उन्नै-क् कूडादे
शाल-प् पल नाळ् अडियेन्
इन्नम् तळर्वेनो ? 3

VI. ix. नीराय्

(जलरूपी)

2722 जलरूपी और भूमिरूपी, अग्निरूपी और वायुरूपी विशाल आकाशरूपी और प्रभान्वित ज्योतिर्द्वयरूपी (अर्थात् सूर्य और चंद्ररूपी), शिवरूपी और अजरूपी होते (भगवान्)! तीक्ष्ण चक्र और धवल शंख धर कर दुःखिनी मेरे पास एक दिन आओ जिससे भूमि और परमधाम (अर्थात् भूलोक वासी और परमधामनिवासी लोक) हर्षित हों। 1

2723 जिसमे भूमि और स्वर्ग हर्षित हो ऐसे वामन बन कर अपना बल दिखा कर भूमि और स्वर्ग का ग्रहण करते मायी स्वामी! जिससे तुम्हें प्राप्त कर के देख कर हर्षित हो के नाच उठूं ऐसे एक दिन आ कर इस पृथिवी से हो कर गमन करो। 2

2724 पृथिवी से हो कर सचार कर के और खड़े हो कर, लेट कर और बैठ कर कितने असंख्य दिन युगयुग मे प्राणियों के रक्षण करते हो? (प्रभु)! सुंदर श्रीमहालक्ष्मी से संयुत तुम्हें नहीं प्राप्त कर मे और कितने ही असंख्य दिन शिथिल होकर रहूं? 3

2725. तळन्दुम् मुरिन्दुम् शकट
अशुरर् उडल् वेरा
पिळन्दु वीय्-त् तिरु क्
काल् आण्ड पॅरुमाने!
किळन्दु पिरमन् शिवन्
इन्दिरन् विण्णवर् शूळ
विळङ्ग ओॅरु नाळ् काण
वाराय् विण् मीदे॥ 4

2726. विण् मीदु इरुप्पाय्! मलै मेल्
निर्पाय्! कडल् शेर्प्पाय्!
मण् मीदु उळल्वाय्! इवर्रुळ्
एॅङ्गुम् मरैन्दु उरैवाय्!
एॅण् मीदु इयन्र पुर
अण्डत्ताय्! एॅनदु आवि
उण् मीदु आडि उरु-क्
काट्टादे ओॅळिप्पायो? 5

2727. पाय् ओर् अडि वैत्तु अदन् कीळ् प्
परवै निलम् एॅल्लाम्
ताय् ओर् अडि आय्
एॅल्ला उलहुम् तड वन्द
मायोन् उन्नै-क् काण्बान्
वरुन्दि एॅनै नाळुम्
तीयोडु उडन् शेर् मॅळुहाय्
उलहिल् तिरिवेनो? 6

2725 जिससे शकटासुर के शरीर की गठन ढीली हो और वह भग्न हो, टूट जाय और गिर पड़े ऐसे सुंदर चरणों से लात मारते स्वामी ! जिससे अत्युत्साह से ब्रह्म और शिव, इंद्र और देववर्ग घेर कर तुम्हारी स्तुति करें, ऐसे भास्वर रूप से एक दिन आकाश में हमें दर्शन देने आओ। 4

2726 परमधाम में विराजमान होगे। (वेंकट) गिरि पर खड़े रहोगे। (क्षीर) सागर पर शयन करोगे। पृथिवी पर घूमते रहोगे। इस के सब (पदार्थों) में अंतर्हित हो कर वास करोगे। असंख्येय बाहर के ब्रह्मांडो में भी विद्यमान होगे। मेरे प्राणो के भीतर घूम-फिर कर रहते हुए भी अपना रूप दिखाए बिना क्या छिप कर ही रहोगे? 5

2727 बढ़ा कर एक चरण रख कर, उसके नीचे की सागर-परिवृत भूमि माप कर, दूसरे चरण से सब लोकों के स्पर्श करते मायी ! तुम्हें देखने की वांछा से विह्वल हो कर कितने ही दिन आग के पास रखे मोम के समान इस लोक में भटकता रहूं ?

[आग के पास रखे मोम के समान—आग में रखा जाय तो मोम जल कर राख हो जायगा। दूर रखें तो कठिन ही रहेगा। नातिदूर रखा जाय तो न कठिन रहेगा, न दग्ध होगा। ऐसे ही भगवान् के दर्शन की संभावना मन को दृढ रखती है ; उत्कंठा मन को पिघला देती है।] 6

2728. उलहिल् तिरियुम् करुम
गतियाय् उलहम् आय्
उलहुक्के ओर् उयिरुम् आनाय् !
पुर अण्डत्तु
अलहिल् पॉलिन्द तिशै पत्तु
आय अरुवेयो !
अलहिल् पॉलिन्द
अरिविलेनुक्कु अरुळाये । 7

2729. अरिवु इलेनुक्कु अरुळाय्
अरिवार् उयिर् आनाय् '
वेरि कॉळ् शोदि मूर्त्ति !
अडियेन् नॅडु माले !
किरि शॅय्दु ऍन्नै-प् पुरत्तु इट्टु
इन्नम् कॅडुप्पायो
पिरिदु ऑन्रु अरिया अडियेन्
आवि तिहैक्कवे ? ४

2730. आवि तिहैक्क ऐवर्
कुमैक्कुम् शिर्रिन्बम्
पावियेनै-प् पल नी
काट्टि-प् पडुप्पायो ?
तावि वैयम् कॉण्ड
तडम् तामरैहट्के
कूवि-क् कॉळ्ळुम् कालम्
इन्नम् कुरुहादो ? 9

2728 लोक में प्रचलित कर्मगति (अर्थात् यागादि साधन भूत क्रियाएं (काम करने के स्थान) लोक. (तथा काम करते) लोगों के अंतरात्मा होते (भगवान्)! बाहर के ब्रह्मांडो में वर्तमान अनगिनत सूक्ष्म (मुक्त) आत्मा होनेवाले भगवान्! मुक्तात्मा जो अपने धर्मभूत ज्ञान से दस दिशाओं में व्यापक हैं। अनगिनत अज्ञान से युक्त मुझ पर कृपा करो। 7

2729 ज्ञानहीन मुझ पर कृपा करो, ज्ञानियों के प्राण होते (भगवान्)! सौगंध्य से समन्वित ज्योतिर्मूर्ति! मुझ दास पर अत्यधिक व्यामोह रखते (प्रेमी)! तुम्हें छोड़ कर और कुछ न जानते मुझ दास की आत्मा जिससे विक्षुब्ध हो कर रहे इस प्रकार कोई उपाय कर (अपने ऊपर प्रेम उत्पन्न कर के) फिर मुझे बाहरी विषयों की ओर ढकेल कर क्या मुझे इसके बाद भी बिगाड दोगे? 8

2730 जिससे मन विक्षुब्ध होवे इस प्रकार पांच (इंद्रियों) के षड्यंत्रपूर्वक दिए विविध अल्प सुखों को मुझ पापी को दिखा कर क्या मुझे गड्ढे में फेंक दोगे? पसार कर भूमि को माप कर ग्रहण करते विशाल कमल को (अर्थात् चरण कमल के पास) मुझे बुला कर अपना बनाने का काल क्या शीघ्र संपन्न नहीं होगा? 9

2731. कुरुहा नीळा इरुदि
कूॅडा एॅनै ऊळि
शिरुहा पॅरुहा अळवु इल्
इनूबम् शेन्दलिुम्
मरु काल् इनूरि मायोन्
उनक्के आळ् आहुम्
शिरु कालत्तै उरुमो
अन्दो तॅरियिले ? 10

2732. तॅरिदल् निनैदल् एॅण्णल्
आहात् तिरु मालुक्कु
उरिय तॉण्डर् तॉण्डर्
तॉण्डन् शङ्कोपन्
तॅरिय-च् चॉन्न ओर्
आयिरत्तुळ् इप्-पत्तुम्
उरिय तॉण्डर् आक्कुम्
उलहम् उण्डार्के ॥ 11

2731 [यदि भगवान् कहते हैं कि अल्प अस्थिर होने से वैषयिक सुख की इच्छा तुम्हें नहीं है तो हम शुद्ध जीवात्मानुभव सुख प्रदान करेंगे जो अनंत, स्थिर और प्रचुर है। संत अगले पद्यमें कहते हैं कि कैवल्याख्य वह शुद्धात्म सुख भी हमें नहीं चाहिए क्यों कि तुम्हारे क्षणमात्र कैंकर्य करने के सुख के आगे वह तुच्छ है।]

जिस के स्वरूप मे लघुता या दीर्घता नही जो (नित्य होने से) अंतरहित है, सब कल्पों में भी जिसकी न क्षय है न वृद्धि, तथा जो अपरिच्छिन्न है, (शुद्धात्मानुभव जनित) ऐसा आनंद मिलने पर भी उत्तर क्षण में अनुवृत्ति के बिना क्षण काल के लिए ही तुम्हारा दास हो कर क्रियमाण सेवा-सुख के सामने क्या वह टिक सकता है? सोच-विचार कर हम कहते है। हाय! यह भी तुम्हे नही विदित है? 10

2732 श्रवण-मनन निदिध्यासन के अगोचर श्रीमन्नारायण के अनुरूप दासो के दासों के दास शठकोप के रचित विशदज्ञानजनक अद्वितीय सहस्रगीति मे यह दशक लोक-भक्षक भगवान् के अनन्यार्ह दास बना देगा। 11

VI. x. उलहम् उण्ड

2733. उलहम् उण्ड पॆरु वाया !
उलप्पु इल् कीर्त्ति अम्माने।
निलवुम् शूडर् शूळ् ऑळि मूर्त्ति !
नॆडियाय्। अडियेन् आर् उयिरे !
तिलदम् उलहुक्कु आय निन्ऱ
तिरु वेङ्गडत्तु ऎम् पॆरुमाने।
कुल तॊल् अडियेन् उन पादम्
कूडुम् आऱु कूऱाये॥ 1

2734 कूऱाय् नीऱु आय् निलन् आहि क्
कॊडु वल् अशुरर् कुलम ऎल्लाम्
शीऱा ऎरियुम् तिरु नेमि वलवा।
दॆय्व-क् कोमाने !
शेऱु आर् शुनै त् तामरै शॆम् ती
मलरुम् तिरु वेङ्गडत्ताने।
आऱा अन्बिल अडियेन् उन्
अडि शेर् वण्णम् अरुळा ये॥ 2

2735 वण्णम् अरुळ् कॊळ् अणि मेह
वण्णा। माय अम्माने।
ऎण्णम् पुहुन्दु तित्तिक्कुम्
अमुदे। इमैयोर् अदिपदिये।
तॆण्णल् अरुवि मणि पॊन् मुत्तु
अलैक्कुम् तिरु वेङ्गडत्ताने.
अण्णले। उन् अडि शेर
अडियेऱ्कु 'आ ! आ!' ऎन्नाये॥ 3

VI. x. उलहम् उण्ड

(लोकभक्षक)

[संत अपनी इष्ट-प्राप्ति के लिये श्रीमहालक्ष्मी के साथ विराजमान सर्वलोकेश्वर श्रीवेंकटाचल के भगवान् के चरणकमलों में परिपूर्ण शरणागति करते हैं]

श्रीवेंकटाचल क्षेत्र (बालाजी)

2733 लोकभक्षक विपुल वदन! अनवधिक कीर्तियुक्त स्वामी! सर्वव्याप्त प्रभापरिवृत तेजोमयमूर्ति! (अर्थात् तेजोमय विग्रहयुक्त!) सर्वोत्कृष्ट! मुझ दास के प्रिय प्राण! लोक के तिलकसदृश स्थित श्रीवेंकटाचल में विराजमान हमारे भगवान्! कुल परंपरा से अनादि दास मैं जिससे तुम्हारा पाद प्राप्त करूं वह प्रकार बताओ। 1

2734 क्रूर और बलिष्ठ असुरों के सारे कुल को छिन्न भिन्न कर के, भस्म कर के, तथा मिट्टी में मिला कर, फिर भी कोप से जलते सुंदर नेमि दक्षिण हस्त मे रखते (प्रभु)! नित्यसूरिनायक! जिसके पंकपूर्ण तडागों मे कमल अग्निसदृश विकसित हो कर दीप्तियुक्त हैं, ऐसे श्रीवेंकट (गिरि) के स्वामी! अपरिच्छेद्य प्रेम से युक्त दास मै जिससे तुम्हारा चरण प्राप्त करूं वह प्रकार बताने की कृपा करो। 2

2735 (शरीर के) वर्ण से मोहजनक सुंदर मेघसवर्ण! अद्भुतरूपयुक्त स्वामी! मन में प्रविष्ट हो कर मधुर लगते अमृत! अनिमेष देवों के अधीश्वर! जहां स्वच्छ और पावन झरने मणि, कांचन और मोती तरंगो से ला कर बिखेरते हैं ऐसे श्रीवेंकट (गिरि) में विराजमान (भगवान्)! स्वामी! (मेरी दीन दशा देख कर अनुकंपा से) हाय! हाय! बोलते हुए मुझ दास पर कृपा करो जिससे मैं तुम्हारे चरण प्राप्त करूं। 3

2736. आ आ एन्नादु उलहत्तै
अलैक्कुम् अशुरर् वाळ्. नाळ्. मेल्
ती वाय् वाळि मळै पोॅळिन्द
शिलैया ! तिरु मा महळ्. केळ्वा !
देवा ! शुरर्हळ्. मुनि-क् कणङ्गळ्.
विरुम्बुम् तिरु वेङ्गडत्ताने !
पूवार् कळल्हळ्. अरु विनैयेन्
पोॅरुन्दुम् आरु पुणराये ॥

2737. पुणरा निन्र मरम् एळ्. अन्रु
ऍय्द ओॅरु विल् वलवा !
पुणरेय् निन्र मरम् इरण्डिन्
नडुवे पोन मुदल्वा !
तिणरार् मेहम् एॅन-क् कळिरु
शेरुम् तिरु वेङ्गडत्ताने !
तिणरार् शार्ङ्गत्तु उन पादम्
शेर्वदु अडियेन् एॅन् नाळे ?

2738. 'एॅन् नाळे नाम् मण् अळन्द
इणै-त् तामरैहळ्. काण्बदर्कु' एॅन्रु
एन् नाळुम् निन्रु इमैयोर्हळ्.
एत्ति इरैञ्जि इनम् इनमाय्
मेॅय्-न् ना मनत्ताल् वळि पाडु
शेॅय्युम् तिरु वेङ्गडत्ताने !
मेॅय्-न् नान् ऍय्दि एॅन् नाळ्. उन्
अडि-क् कण् अडियेन् मेवुवदे ?

2736 हाय! हाय! कहे बिना (अर्थात् कृपा किए बिना) लोक को पीड़ा देते असुरों की आयु पर अग्निमुख बाणों की वर्षा करते धनुर्धर! श्रीमहालक्ष्मी वल्लभ! (कांति से युक्त) देव! सुर-गण तथा मुनिजनों के वांछनीय श्रीवेंकट (गिरि) पर विराजमान प्रभो! ऐसा एक उपाय बताओ जिससे दास मैं तुम्हारे पुष्पभूषित पदकमल प्राप्त कर सकूं। 4

2737 पुरा काल में सटे खड़े सप्त (साल) वृक्षों पर एक बाण चलाते हे धनुर्धर। परस्पर सटे हुए खड़े दो (अर्जुन) वृक्षों से हो कर चले हे प्रथम (कारण)! विपुलरूप मेघसदृश गजों से समाश्रित श्रीवेंकट (गिरि) में विराजमान! दृढ़ता से युक्त शार्ङ्ग धरते तुम्हारे पदयुग दास मैं किस दिन प्राप्त करूं? 5

2738 "भूमि के मापक (चरण) कमलयुगल का दर्शन हमें किस दिन होगा?" इस वांछा से सदैव देव-गण झुंड के झुंड खड़े हो कर जहां मन से प्रार्थना कर, वाक् से स्तुति कर, और शरीर से सेवा करते हैं उस वेंकट (गिरि) निवासी! (मानसानुभव से न हो कर) प्रत्यक्ष ही किस दिन दास मैं तुम्हारे चरण प्राप्त कर सकूं? 6

2739. अडियेन् मेवि अमर्हिन्र
अमुदे ! इमैयोर् अदिपदिये !
कोॅडिया अडु पुळ् उडैयाने !
कोल-क् कनि वाय्-प् पेॅरुमाने !
शेॅडि आर् विनैहळ् तीर् मरुन्दे !
तिरु वेङ्गडत्तु एॅम् पेॅरुमाने !
नोॅडि आर् पोॅळुदुम् उन पादम्
काण नोलादु आर्रेने ॥ 7

2740. नोलादु आर्रेन् उन पादम्
काण एॅन्रु नुण् उणर्विल्
नीलार् कण्डत्तु अम्मानुम्
निरै नान्मुहनुम् इन्दिरनुम्
शेल एय् कण्णार् पलर् शूळ
विरुम्बुम् तिरु वेङ्गडत्ताने !
मालाय् मयक्कि अडियेन् पाल्
वन्दाय् पोले वाराये ॥ 8

2741. वन्दाय् पोले वारादाय् !
वारादाय् पोल् वरुवाने !
शेॅन्तामरै-क् कण् शेॅम् कनि वाय्
नाल् तोळ् अमुदे ! एॅनदु उयिरे !
शिन्दा मणिहळ् पहर् अल्लै-प्
पहल् शेॅय् तिरुवेङ्गडत्ताने !
अन्दो ! अडियेन् उन पादम्
अहल किल्लेन् इरै युमे ॥ 9

2739 मुझ दास के सप्रीति अनुभूयमान अमृत! (अर्थात् अमृतवत् भोग्य!) देवताओं के अधिपति! शत्रुनिरसनशील विहंग (गरुड़) को ध्वज में रखते गरुड़ध्वज! सुंदर बिंबाधर भगवान्! झाड़-झंखाड़ तुल्य पापों के निवर्तन शील औषध! श्रीवेंकट (गिरि) में विराजमान हमारे स्वामी! यद्यपि तुम्हारे पदों के दर्शन के लिए मैंने किसी भी व्रत का अनुष्ठान नहीं किया, फिर भी त्रुटिमात्र काल का विलंब भी मुझे असह्य है। 7

2740 'तुम्हारे पाद-दर्शन के अपेक्षित साधन का अनुष्ठान नहीं करने पर भी उसे देखे बिना मुझ से रहा नहीं जाता" ऐसा कहते हुए सूक्ष्मार्थदर्शी (अर्थात् सर्वज्ञ) नीलकंठ भगवान, (ज्ञान शक्त्यादि से) पूर्ण चतुर्मुख, तथा इंद्र मीनलोचन अनेक देवियों से परिवृत हो कर जिसकी वांछा करते हैं ऐसे श्रीवेंकट (गिरि) पर विराजमान (प्रभु)! श्यामसुंदर बन कर (गोपियों को) मोहित कर के जैसे उनके पास उपस्थित हुए वैसे मुझ दास के पास आओ। 8

2741 (प्रतिकूलों को) आते हुए दीखने पर भी तुम आते नहीं (अर्थात् सुलभ दीखने पर भी दुष्प्राप हो)। (अनुकूलों को) न आते हुए दीखने पर भी आते ही (अर्थात् दुर्लभ दीखते दीखते सुलभ होते हो।) ऐसे स्वभाव से युक्त भगवान्! अरुण पंकजलोचन अरुण बिंबाधर चतुर्भुज अमृत! हे मेरे प्राण! जहाँ चिंतामणियों की प्रभा रात्रि को दिवस बना देती है ऐसे श्रीवेंकट (गिरि) पर विराजित स्वामी! हाय! दास मैं तुम्हारे पाद से एक क्षण भी बिछुड़ नहीं सकता। 9

2742. 'अहल किल्लेन् इरैयुम्' एॅन्रु
अलर् मेल् मङ्गै उरै मार्बा!
निहर् इल् पुहळाय्! उलहम् मून्रु
उडैयाय्! एॅन्नै आळ्वाने!
निहर् इल् अमरर् मुनि-क् कणङ्गळ्
विरुम्बुम् तिरु वेङ्गडत्ताने!
पुहल् ओॅन्रु इल्ला अडियेन् उन्
अडि-क् कीळ् अमर्न्दु पुहुन्देने॥ 10

2743. 'अडि-क् कीळ् अमर्न्दु पुहुन्दु अडियीर्!
वाळ्मिन्' एॅन्रु एॅन्रु अरुळ् कोॅडुक्कुम्
पडि-क् केॅळ् इल्ला-प् पेॅरुमाने-प्
पळन-क् कुरुहूर्-च् चडकोपन्
मुडिप्पान् शोॅन्न आयिरत्तु-त्
तिरु वेङ्गडत्तुक्कु इवै पत्तुम्
पिडित्तार् पिडित्तार् वीऱ्रिरुन्दु
पेॅरिय वानुळ् निलावुवरे॥ 11

2742 'क्षण मात्र भी (तुम से) बिछुड़ नहीं सकती" यह कहती पद्मासीन लक्ष्मीसमाश्रित वक्ष से युक्त (श्रीमन्नारायण)! (मंगल गुण कृत) निरुपमकीर्तिमंत! लोक त्रय नायक! मेरे रक्षक! विस्तुल अमर मुनिगण वांछित श्रीवेंकट (गिरि) में विराजमान (प्रभु)! शरणांतररहित दास मैं तुम्हारे पाद मूल में सीधे शरण लेता हूं। [श्रीवैष्णव संप्रदाय में इस पद्य का विशेष आदर किया जाता है। क्यों कि संत शठकोप भगवान् के श्रीचरण में पूर्ण शरणागति इसी मे करते हैं। इस दशक के पिछले नौ पद्यों में शरण्यस्वरूप और शरणागत्यधिकारि स्वरूप बतलाए गए हैं। यह दसवां पद्य द्वय-मंत्र के पूर्वार्ध का विवरणात्मक है।] 10

2743 "दासजनो! पादमूल में अनन्य भाव से प्रविष्ट हो कर (अर्थात् शरण ले कर) सुखी रहो" कह कह कर कृपा करते निरुपम दयालु सर्वेश्वर पर जलाशय-समन्वित कुरुहूर (नगर) के स्वामी संत शठकोप के कृतकृत्य हो जाने के लिए कथित सहस्र में श्रीवेंकट गिरि विषयक इस दशक का आश्रय लेनेवालों का आश्रय जो करते हैं, वे महाकाश में (अर्थात् परमधाम में) प्रतिष्ठा के साथ विराजमान हो कर नित्य रहेंगे। 11

VII. i उळ् निलाविय

2744. उळ् निलाविय ऐंवराल् कुमै तीरुरि
ऍन्नै उन् पाद पङ्कयम्
नण्णिला वहैये नलिवान्
इन्नम् ऍण्णुहिन्राय्
ऍण्णिला-प् पॆरु मायने ! इमैयोर्हळ्
एत्तुम् उलहम् मून्रु उडै
अण्णले ! अमुदे ! अप्पने !
ऍन्नै आळ्वाने ! 1

2745. ऍन्नै आळुम् वन् को ओर् ऐन्दु इवै
पॆय्दु इरा-प् पहल् मोदुवित्तिटट्टु
उन्नै नान् अणुहा वहै
शॆय्दु पोदि कण्डाय् !
कन्नले ! अमुदे ! कार् मुहिल् वण्णने
कडल् ञालम् काक्किन्र
मिन्नु नेमियिनाय् !
विनैयेनुडै वेदियने ! 2

2746. वेदिया निर्कुम् ऐवराल् विनैयेनै
मोदुवित्तु उन् तिरु अडि-च
चादिया वहै नी तडुत्तु
ऍन् पॆरु दि ? अन्दो !
आदि आहि अहल् इडम् पडैत्तु
उण्डु उमिळ्न्दु कडन्दु इडन्दिटट्
शोदि नीळ् मुडियाय् !
तॊण्डनेन् मदुशूदनने ! 3

VII. i. उण्णिलाविय

(भीतर ही वर्तमान)

[इंद्रिय-परतंत्र सांसारिक जीवन से रक्षा करने की प्रार्थना]

2744 (शरीर के) भीतर ही वर्तमान पांच (इंद्रियों) से मुझे पीड़ा दे कर तुम्हारा पादपंकज जिससे मैं नहीं प्राप्त करूं ऐसे तुम मुझे फिर सताने की बात ही सोच रहे हो। असंख्येय विचित्र शक्तियुक्त! देवों से संस्तुत लोकत्रय नायक! हे अमृत! मेरे रक्षक! 1

2745 मुझे अपने वश में रख कर मेरी नियंत्री होती, प्रबल और स्वतंत्र विलक्षण पांच (इंद्रियो) मे रात-दिन पीड़ा दिला कर, तुमने ऐसा कर दिया, देखो, जिससे मै तुम्हारे पास फटकूं ही नहीं। इक्षुरसखंड! हे अमृत! कालमेघवर्ण! सागर-परिवृत भूमि की रक्षा करते दीप्तियुक्त नेमि से भूषित! मुझ पापी के लिए वेदैकवेद्य ही होनेवाले। (मैं आंखों से देखना चाहता हूं तो सामने नहीं आ कर वेद पढ कर ध्यान करने की आज्ञा दे कर अदृश्य रहते हो।) 2

[नेमि – चक्र]

2746 वेधन करती पांच (इंद्रियों) द्वारा मुझ पापी को पीड़ा दे कर जिससे मैं तुम्हारे चरण न प्राप्त करूं ऐसा रोकने से तुम क्या (लाभ) प्राप्त करते हो? हाय! आदि (कारण) हो कर विशाल भुवन की सृष्टि कर, निगल के उगल कर, माप कर और उद्धरण करते ज्योतिर्मय दीर्घ किरीटी! मुझ दास के मधुसूदन! (अर्थात् विरोधि निरासक!) । 3

2747. शूदु नान् अरिया वहै शुळर्रि ओर्
ऐवरै-क् काट्टि उन् अडि-प् पोदु
नान् अणुहा वहै शॅय्दु
पोदि कण्डाय्
यादुम् यावरुम् इन्रि निन् अहम् पाल्
ऑडुकि ओर् आलिन् नीळ् इलै
मीदु शेर् कुळवि। विनैयेन्
विनै तीर् मरुन्दे।

2748. तीर् मरुन्दु इन्रि ऐन्दु नोय् अडुम्
शॅकिल् इट्टु-त् तिरिक्कुम् ऐवरै
नेर् मरुङ्गु उडे-त् तावडैत्तु
नॅहिळ्प्पान् ऑक्किन्राय्
आर् मरुन्दु इनि आहुवार्? अडल्
आळि एन्दि अशुरर् वन् कुलम्
वेर् मरुङ्गु अरुत्ताय्।
विण्णुळार् पॅरुमानेयो।

2749 विण्णुळार् पॅरुमार्क् अडिमै
शॅरवारैयुम् शॅरुम् ऐम पुलन् इवै
मण्णुळ् एन्नै प् पॅर्राल् ऍन् शेय्या
मर्रु नीयुम् विट्टाल्?
पण् उळाय्। कवितन् उळाय। पत्तियिन्
उळ्ळाय्। परम् ईशने। वन्दु ऍन्
कण्णुळाय्। नॅञ्जुळाय्।
शॉल्लुळाय्! ऑन्रु शॉल्लाये॥

2747 जिससे मैं तुम्हारी वंचना नहीं समझ लूं ऐसा मुझे घुमा कर (अर्थात् मेरे मन में भ्रान्तिज्ञान उत्पन्न कर के) और पांच (इंद्रियों) को दिखा कर तुमने ऐसा कर ही दिया जिससे मैं तुम्हारे चरण कमल के पास फटकूं ही नहीं। सब (चेतन) तथा सब (अचेतन) इनमें एक को भी छोड़े बिना अपने उदर में समा कर एक वट के विशाल पत्र पर शयित होते शिशु। मुझ पापी के पापों की निरासक औषध। 4

2748 परिहारक औषधशून्य विषयाख्य पंच व्याधि द्वारा हिंसा करते (शरीराख्य) तैलयंत्र में डाल कर घुमाती पंच (इंद्रियो) को सामने और पार्श्वों में स्थापित कर के अपने ऊपर मेरे विश्वास को भी ढीला करने वाले के समान हो। अब मेरी औषध होनेवाला कौन है? (शत्रु) विनाशक चक्र धर कर असुरों के प्रबल कुल का उपमूल सहित उन्मूलन करते प्रभो। नित्यसूरिनायक। 5

2749 नित्यसूरिनायक की सेवा करते नित्यसूरियों को भी पीड़ा देने के शक्त ये पांच इंद्रिय भूलोक में (दुर्बल) मुझे प्रास करती हैं तो तथा यदि तुम भी मुझे तज देते तो वे क्या ही नहो करेंगी? (न तो तुम दूरस्थ हो, न अशक्त, यतः) तुम मेरे गीत में हो। कविता में हो। भक्ति में हो। परमेश! स्वयम् उपस्थित हो कर मेरे नयन में हो। मन में हो। वचन में हो। (आश्वासन का) एक वचन कहो। 6

2750. ओॅन्रु शोॅल्लि ओॅरुत्तिनिल् निर्किलाद
ओर् ऐवर् वन् कयवरै
एॅन्रु यान् वॅल् हिर्पन्
उन् तिरु अरुळ्‌ इल्लै येल् ?
अन्रु देवर् अशुरर् वाङ्ग अलै कडल्
अरवम् अळावि ओर्
कुन्रम् वैत्त एॅन्दाय् !
कोॅडियेन् परुहु इन् अमुदे ! 7

2751. इन् अमुदु एॅन-त् तोन्रि ओर् ऐवर्
यावरैयुम् मयक्क नी वैत्त
मुन्न मायम् एॅल्लाम्
मुळु वेर् अरिन्द् एॅन्नै उन्
चिन्नमुम् तिरु मूर्त्तियुम् शिन्दित्तु
एत्ति-क् कै तोॅळवे अरुळ्‌ एॅनक्कु
एॅन् अम्मा ! एॅन् कण्णा !
इमैयोर् तम् कुल मुदले ! 8

2752. कुल मुदल् अडुम् ती विनै-क् कोॅडु
वन् कुळियिनिल् वीळ्क्कुम् ऐवरै
वल मुदल् कॅडुक्कुम्
वरमे तन्दु अरुळ्‌ कण्डाय्
निल मुदल् इनि एॅव् उलहुक्कुम्
निर्पन शॅल्वन एॅन पोॅरुळ्‌
पल मुदल् पडैत्ताय् !
एॅन् कण्णा ! एॅन् परम् शुडरे ! 9

2750 एक (विषय) मांग कर (उसे प्राप्त करने तक भी) उस में स्थिर न रहती (अर्थात् विषयांतरों को मांगती) इंद्रियों को, जो विलक्षण शक्तियुक्त नीच हैं, कैसे मैं जीत सकता, विशेष कर जब तुम्हारी कृपा मुझ पर नहीं? पुरा काल में देवों और असुरों को तरंगित (क्षीर) सागर मन्थन में सहायता देने के लिए तुमने एक सर्प को लपेट कर एक पर्वत को स्थापित किया मेरे जनक! मुझ पापी के पीयमान मधुरामृत! 7

2751 (शब्द, स्पर्श, रूप, रस गंधात्मक) पंच विषय पहले अमृत सम दिखाई देते हैं, परंतु पश्चात् विषतुल्य हो जाते हैं। सभी जीवों को मोहित करने के लिए शब्दादि रूप से अनादि माया (अर्थात् प्रकृति) को तुमने रखा। तुम मुझ पर कृपा करो जिससे मैं उस माया का पूर्णतया उन्मूलन कर तुम्हारे असाधारण चिह्नों का तथा मूर्ति का ध्यान कर के, स्तुति कर के वंदना करूं। मेरी माता! (अर्थात् माता के समान प्रियकारी स्वामी!) मेरे कान्ह! देवों के कुलनायक! 8

2752 समूल वंशनाशक घोरपापजनक पंचविषयात्मक गर्त में गिराती पांच इंद्रियों का बल समूल (अर्थात् वासनासहित) मिटाने का वर ही (मैं चाहता हूं) तुम देने की कृपा करो। पृथिव्यादि सब लोकों में विद्यमान स्थावर तथा जंगम रूप अनेक पदार्थों की सृष्टि पहले तुमने ही की, मेरे कान्ह! मेरे परंज्योति! 9

2753. 'एॅन् परम् शुडरे' एॅन्रु उन्नै
अलर्रि उन् इणै-त् तामरैहट्कु
अन्बु उरुहि निर्कुम् अदु निर्क-च्
चुमडु तन्दाय्
वन् बरङ्गळ् एॅडुत्तु ऐवर् तिशै तिशै
वलित्तु एॅर्रुहिन्रनर्
मुन् परवै कडैन्दु
अमुदम् कोॅण्ड मूर्त्तियो ! 10

2754. कोॅण्ड मूर्त्ति ओर् मूवराय्-क् कुणङ्गळ्
पडैत्तु अळिप्पु-क् कॅडुक्कुम् अप्
पुण्डरीक-क् कोॅप्पूळ्-प्
पुनल् पळ्ळि अप्पनुक्के
तोॅण्डर् तोॅण्डर् तोॅण्डर् तोॅण्डन् शडकोपन्
शोॅल् आयिरत्तुळ् इप्-पत्तुम्
कण्डु पाड वल्लार् विनै
पोम् कडुगुलुम् पहलै ॥ 11

2753 'मेरे परंज्योति!' कह कर तुम्हें पुकार कर तुम्हारे (चरण) कमलयुग के प्रेम से घुल कर अवस्थित होने की दशा है मेरी। उसके रहते रहते तुमने यह बोझ (शरीर) भी दे रखा है। इस पर बड़े बड़े बोझ लाद कर दिश दिश में घसीट कर पांचों इंद्रियां दुःख देती हैं। पुरा काल समुद्रमन्थन कर अमृत ग्रहण करते हे मूर्ति! 10

2754 गुणत्रयाश्रय त्रिमूर्ति ही कर, (ब्रह्मांतर्यामी हो के) सृष्टि कर, (स्वयं विष्णु रूप से) रक्षा कर, (रुद्रांतर्यामी हो के) संहार करते पुंडरीकनाम सागर-शायी स्वामी के ही दासों के दासों के दासों के दास शठकोप से रचित सहस्र में इस दशक को (अर्थसहित) जान कर गाने में जो समर्थ हैं, उनके रात-दिन के पाप निश्शेष छूट जाएंगे। 11

VII. ii. कङ्गुलम् पहलुम् •

2755 कङ्गुलम् पहलम् कण् तुयिल् अरियाळ्

कण्ण नीर् कैहळाल् इरैक्कुम्

'शङ्गु शक्करङ्गळ्' एॅन्रु कै कुप्पुम्

'तामरै-क कण्' एॅन्रे तळरुम्

'एङ्ङने दरिक्केन् उन्नै विट्टु ?' एॅन्नुम्

इरु निलम् कै तुळा इरुक्कुम्

शैम् कयल् पाय् नीर्-त् तिरु अरङ्गत्ताय्!

इवळ् तिरत्तु एॅन् शैय्हिन्राये ? 1

2756. 'एॅन् शैय हिन्राय् ? एॅन् तामरै क् कण्णा'

एॅन्नुम् कण्णीर् मल्ह इरुक्कुम्

'एॅन् शैय्हेन् ? एॅरि नीर्-त् तिरु अरङ्गत्ताय्!'

एॅन्नुम् वैव् वुयित्तु उयित्तु उरुहुम्

'मुन् शैय्द विनैयै ! मुहप्पडाय्' एॅन्नुम्

'महिल् वण्णा ! तहुवदो ?' एॅन्नुम्

मुन् शैय्दु इव् उलहम् उण्डु उमिळ्न्दु अळन्दाय्

एॅन् कोलो मुडिहिन्रद्दु इवट्के ? 2

2757. वट्किलळ् इरैयुम् 'मणि वण्णा'! एॅन्नुम्

वानमे नोक्कुम् मै याक्कुम्

'उट्कुडै अशुरर् उयिर् एॅल्लाम् उण्ड

ओॅरुवने !' एॅन्नुम् उळ् उरुहुम्

'कट्किली ! उन्नै क् काणुमारु अरुळाय्

काकुत्ता ! कण्णने !' एॅन्नुम्

तिट् कॉडि मदिळ् शूळ् तिरु अरङ्गत्ताय्!

इवळ् तिरत्तु एॅन् शैय्दिट्टाये ? 3

VII. ii. कङ्गुलुम् पहलुम्

(रात और दिन)

[श्रीरंग क्षेत्र]

[नायिका की माता भगवान् श्रीरंगराज से विरह से पीड़ित और मूर्छित पराकुश नायिका को भगवान् के आगे लिटा कर उसे देख के उस पर कृपा करने की प्रार्थना करती है।]

2755 रात और दिन यह (मेरी कन्या) सोती नहीं। आंखों के आंसू हाथों से उलीचती है। 'शंख-चक्र' कह कर हाथ जोड़ती है (वाक्य पूरा नहीं बोल पाती)। 'कमलनयन' कह कर क्लांत हो जाती है। कहती है—तुम्हारे बिना मैं प्राणो को धारण कैसे करूं? विशाल भूमि पर हाथ फेरती रहती है। उछलते सुंदर मत्स्यों से युक्त जल से परिवृत श्रीरंग में विराजमान भगवान्! इसके विषय में तुम क्या करना चाहते हो? 1

2756 "क्या करना चाहते हो (मेरे विषय में)? अंबुजलोचन!" कहती है। आंखो से आंसू बहाती रहती है। "क्या करूं मैं? तरंगित जल-परिवृत श्रीरंग में विराजमान (नाथ)!" —कहती है। उष्ण श्वास ले ले कर घुल जाती है। 'पूर्व कृत मेरे कर्म! प्रत्यक्ष हो जाओ'—कहती है। मेघवर्ण! क्या यह अनुरूप है (तुम्हारे)? —कहती है। पुरा काल में इस लोक की सृष्टि, निगिरण और उद्गिरण के कर्ता भगवान्! न जाने इसकी दशा का क्या परिणाम होगा? 2

2757 इसे लज्जा कुछ भी नहीं। (मुंह खोल कर) "मणिवर्ण" कहती है। (तुम्हारे आगमन की प्रतीक्षा में) आकाश की ओर देखती है। (वहां न देख कर) मोह में आ जाती है। "पराक्रमी असुरों के सर्वप्राणहारी अद्वितीय (वीर)" कहती है। मन में द्रवित हो जाती है। "नयनागोचर! अपने को दिखाने की कृपा करो"—कहती है। "काकुत्स्थ! कान्ह!" बोल उठती है। सुदृढ़ ध्वजालंकृत प्राचीरों से परिवृत श्रीरंग के नाथ! तुमने क्या (अर्थात कौन इंद्रजाल) कर दिया इसके विषय में? 3

2758. इट्ट काल् इट्ट कैयळाय् इरुक्कुम्
एॅऴुन्दु उलाय् मयङ्गुम् कै कूप्पुम्
'कट्टमे कादल!' एॅन्रु मूर्च्चिक्कुम्
'कडल् वण्णा! कडियै काण्' एॅन्नुम्
'वट्ट वाय् नेमि वलम् कै या!' एॅन्नुम्
'वन्दिडाय्' एॅन्रु एॅन्रे मयङ्गुम्
शिट्टने! शॅऴु नीर्-त् तिरु अरङ्गत्ताय्!
इवळ तिरत्तु एॅन शिन्दित्तायेॽ 4

2759. शिन्दिक्कुम् तिशैक्कुम् तेरुम् कै कूप्पुम्
'तिरु अरङ्गत्तु उळ्ळाय्!' एॅन्नुम्
वन्दिक्कुम् आङ्गे मऴै-क् कण्णीर् मल्ह
'वन्दिडाय्' एॅन्रु एॅन्रे मयङ्गुम्
अन्दि प् पोदु अवुणन् उडल् इडन्दाने!
अलै कडल् कडैन्द आर् अमुदे!
शन्दित्तु उन् चरणम् शार्वदे वलित्त
तैयलै मैयल् शॅय्दाने! 5

2760. 'मैयल् शॅय्दु एॅन्नै मनम् कवर्न्दाने!'
एॅन्नुम् 'मा मायने' एॅन्नुम्
'शॅय्य वाय् मणिये!' एॅन्नुम् तण् पुनल् शूऴ
तिरु अरङ्गत्तु उळ्ळाय्!' एॅन्नुम्
वॅय्य वाळ् तण्डु शङ्गु शक्करम्
विल् एन्दुम् विण्णोर् मुदल्!' एॅन्नुम्
पै कॉळ् पाम्बु अणैयाय्! इवळ् तिरत्तु अरुळाय्
पावियेन् शेय्यर् पालदुवे॥ 6

2758 (नायिका के शरीरावयव इतने अस्वाधीन हैं कि सखियों ने) इसके हाथ और पैर जहां रखे वहीं पड़े रहते हैं। सहसा उठ के संचरण करती है, फिर मूर्छित हो जाती है। कहती है—"सागर वर्ण! कठिन ही हो तुम"। कहती है—"वर्तुलमुख नेमि भूषित दक्षिण हस्त!" "आ जाओ" कह कह कर मोहित हो जाती है। हे शिष्ट! सुंदर जलाशय-परिवृत श्रीरंग के नाथ! इसके विषय में तुम क्या सोच रहे हो? 4

2759 (तुम्हारा ही) चिंतन करती है। मोह में आ जाती है। लब्धसंज्ञा होती है। अंजलि करती है। "श्रीरंग में वास करते नायक"। कह कर पुकारती है। वंदना करती है। वहीं बैठ कर आंखों में धारा-से आंसू बहाते हुए "आ जाओ" कह कह कर मूर्छित हो जाती है। संध्या काल में असुर शरीर के विदारक! तरंगित सागर का (अमृत-प्राप्ति के लिए) मन्थन करते पूर्णामृत। तुम से मिल कर तुम्हारे चरण का आश्रय ले कर जीवित रहने की कामना से आई कन्या को मोहित कर दिया (तुमने)। 5

2760 "मुझे मोह में डाल कर मेरा मन उसने हर लिया"—कहती है। "महामायावी है वह" कहती है। "रक्ताधर मणि" कह कर पुकारती है। "शीत जलपरिवृत श्रीरंग में विराजते नाथ"—कहती है। "उग्र खड्ग, गदा, शंख चक्र और धनुष धरते नित्यसूरियों के नियामक!" पुकारती है। विस्तृतफण सर्पशायी! कृपया बताओ कि पापिनी मैं इसके विषय में क्या करूं? 6

2761. 'पाल तुन्बङ्गळ् इन्बङ्गळ् पडैत्ताय्!
परु इलार् पर्र निन्राने!
काल शक्करत्ताय्! कडल् इडम कॉण्ड
कडल् वण्णा! कण्णने!' ए॓न्नुम्
'शॆल् कॉळ् तण् पुनल् शूळ् तिरु अरङ्गत्ताय्!
ए॓न्नुम् 'ए॓न् ती र्त्तने!' ए॓न्नुम्
कोल मा मळै-क् कण् पनि मल्ह इरुक्कुम्
ए॓न्नुडै-क् कोमळ-क् कॉळुन्दे॥ 7

2762. 'कॉळुन्दु वानवर्हट्कु' ए॓न्नुम् 'कुनरु एन्दि-क्
को निरै कात्तवन्!' ए॓न्नुम्
अळुम् तॉळुम् आवि अनल वॆव्वुयिक्कुम्
'अञ्जन वण्णने' ए॓न्नुम्
ए॓ळुन्दु मेल् नोक्कि इमैप्पु इलळ् इरुक्कुम्
'ए॓ङ्ङने नोक्कुहेन्?' ए॓न्नुम्
शॆळुम् तडम् पुनल् शूळ् तिरु अरङ्गत्ताय्!
ए॓न् शॆय्हेन् ए॓न् तिरु महट्के? ८

2763. 'ए॓न् तिरु महळ् शेर् मार्वने! ए॓न्नुम्
ए॓न्नुडै आवियेॆ!' ए॓न्नुम्
'निन् तिरु ए॓यिर्राल् इडन्दु नी कॉण्ड
निल महळ् केळ्वने!' ए॓न्नुम्
'अन्रु उरु एळुम् तळुवि नी कॉण्ड
आय् महळ् अन्बने!' ए॓न्नुम्
तॆन् तिरु अरङ्गम कोयिल् कॉण्डाने!
तॆळिहिलेन् मुडिवु इवळ् तनक्के॥ 9

2761 उस उस व्यक्ति के (दुष्कृत और सुकृत के) अनुसार दुःख और सुख के स्रष्टा! रक्षकावलंबन शून्यों का अवलंबन हो कर स्थित (उपकारी!) (अर्थात् अशरण्यशरण्य!) काल चक्रप्रवर्तक! सागर को शयनस्थान बनाते सागरवर्ण! काःह "कह कर पुकारती है। मत्स्यों से आश्रित शीत जल से परिवृत श्रीरंग के ईश्वर!" कह कर तथा "मेरे तीर्थ" कह कर पुकारती है। मेरी कोमल पल्लव (सदृश कुमारी) के मनोहर और विशाल नयनों से अश्रु-प्रवाह बहता रहता है। 7

2762 पुकारती है "नित्यसूरियों के पल्लव" कह कर। "(गोवर्धन) गिरि उठा कर गो-समूह की रक्षा करते (गोपाल)!" कहती है। रोती है। प्रणाम करती है। मानो आत्मस्वरूप ही अनलमय (अर्थात् अग्निमय) हो गया हो दीर्घ और उष्ण उच्छ्वास छोड़ती है। "हे अजनवर्ण!" कह कर पुकारती है। उठ के आकाश की ओर देख कर निर्निमेष रहती है। "तुम्हें कैसे मैं देखूं?" पूछती है। दर्शनीय और विशाल (कावेरी के) जल से परिवृत श्रीरंग के ईश्वर! लक्ष्मीसदृश मेरी कन्या के विषय में क्या करूं? 8

2763 "महालक्ष्मी समाश्रित वक्षःस्थल से युक्त नाथ" कहती है। "मेरे प्राण!" कह कर पुकारती है। "अपने रम्य दंष्ट्र से खोद कर उद्धृत भूमिदेवी के नायक!" कहती है। "पुरा काल में भयंकर सप्त वृषभों को दमन कर स्वीकृत गोपकुमारी (नप्पिन्नै) के प्रियतम!" कहती है। सुंदर श्रीरंग को अपना आवास करते श्रीरंगराज! न जानती कब इस के दुःख का अंत होगा? 9

2764. 'मुडिवु इवळ् तनक्कु ओॅन्रु अरिहिलेन्'
एॅन्नुम् 'मू उलहु आळिये!' एॅन्नम्
'कडि कमळ् कॊॅन्रै-च् चडैयने!' एॅन्नुम्
'नान् मुह-क् कडवुळे!' एॅन्नुम्
'वडिवु उडै वानोर् तलैवने!' एॅन्नुम्
'वण् तिरु अरङ्गने!' एॅन्नुम्
अडि अडैयादाळ् पोल् इवळ् अणुहि
अडैन्दनळ् मुहिल् वण्णन् अडिये॥ 10

2765. मुहिल् वण्णन् अडियै अडैन्दु अरुळ् शूडि
उय्न्दवन् मोॅय् पुनल् पोरुनल्
तुहिल् वण्ण-त् तू नीर्-च् चेर्प्पन् वण्
पोॅळिल् शूळ् वण् कुरु हूर्-च् चडकोपन्
मुहिल् वण्णन् अडि मेल् चोॅन्न शोॅल् मालै
आयिरत्तु इप-पत्तुम् वल्लार्
मुहिल् वण्ण वानत्तु इमैयवर् शूळ
इरुप्पर् पेर् इनूब वॆळ्ळत्ते॥ 11

2764 यह कहती है कि मैं अपने दुःख का कोई अंत नहीं जानती। कहती है 'हे लोकत्रयेश्वर!" "सुगंध प्रवाहित शम्याक पुष्पालंकृत जटाधर!" कहती है। "हे चतुर्मुख देव!" पुकारती है। "सुरूपवंत देवों के अधिप!" कहती है। (अर्थात् ब्रह्मा, रुद्र, इंद्र सब के अंतर्यामी सर्वेश्वर!)" सुंदर श्रीरंग के नाथ!" कहती है। जो चरणप्राप्ति से वंचित सी थी मेघवर्ण तुम्हारा चरण उसने प्राप्त कर ही लिया। 10

2765 जो मेघवर्ण का चरण प्राप्त कर उसकी कृपा शिरोधार्य कर समुज्जीवित हुए समृद्धजल पोरुनल नदी (अर्थात् ताम्रपर्णी) के शुभ्र दुकूल वर्ण पावन जल से सिंचित रम्य उपवनों से परिवृत मनोहर कुरुहूर के संत शठकोप ने मेघवर्ण भगवान् के चरण पर यह शब्दमाला सहस्र की रचना की। उसमें इस दशक के पठन में जो कुशल हैं, वे मेघवर्ण परमात्मा के परमधाम में नित्यसूरियों से परिवृत हो कर निरवधिक आनंदसागर में निमग्न रहेंगे। 11

VII. iii. वॆ॑ळ्ळै-च् चुरि शङ्गु

2766. वॆ॑ळ्ळै-च् चुरि शङ्गॊ॑ड्डु आळि एन्दि त्
तामरै-क् कण्णन् ऍन् नॆ॑ञ्जिन् ऊडे
पुळ्ळै-क् कडाहिनूर आऱ्ऱै क् काणीर्
ऍन् शॊ॑ल्लि-च् चॊ॑ल्लुहेन् अन्नैमीर्हाळ् !
वॆ॑ळ्ळ-च् चहम् अवन् वीऱ्ऱिरुन्द
वेद ऒ॑लियुम् विळा ऒ॑लियुम्
पिळ्ळै-क् कुळा विळैयाट्टु ऒ॑लियुम्
अरा-त् तिरु-प् पेरॆ॑यिल् शेर्वन् नाने ॥ 1

2767. नान क् करुम् कुळल् तोळिमीर्हाळ् !
अन्नैयर्हाळ् ! अयल् चेरियीर्हाळ् !
नान् इत् तनि नॆ॑ञ्जम् काक्क माट्टेन्
ऍन् वशन् अन्रु इदु इरा प् पहल् पोय्
तेन् मॊ॑य्त्त पूम् पॊ॑ळिल् तण् पणै शूळ्
तॆ॑न् तिरु प् पेरॆ॑यिल् वीऱ्ऱिरुन्द
वान प् पिरान् मणि वण्णन् कण्णन्
शॆ॑म् कनिवायिन् तिरत्तदुवे ॥ 2

2768. शॆ॑ङ् कनि वायिन् तिरत्तदायुम्
शॆ॑म् शुडर् नीळ् मुडि ताळ्न्ददायुम्
शङ्गॊ॑ड्डु शक्करम् कण्डु उहन्दुम्
तामरै-क् कण्गळुक्कु अऱ्ऱु-त् तीन्दुम्
तिङ्गळुम् नाळुम् विळा अराद
तॆ॑न् तिरु-प् पेरॆ॑यिल् वीऱ्ऱिरुन्द
नङ्गळ् पिरानुक्कु ऍन् नॆ॑ञ्जम् तोळी !
नाणुम् निरैयुम् इळन्ददुवे ॥ 3

VII. iii. वेळ्ळै-च्-चुरि शंगु

(धवल और दक्षिणावर्त)

[तिरु-प्-पेर्-एयिल् क्षेत्र]

[पिछले दशक के अंत में जो भगवत्प्राप्ति हुई वह मानसानुभव मात्र था। बाह्य संश्लेषापेक्षा होने पर उसकी अप्राप्ति से नायिकावस्था ही ठहरी। पास के तिरुप्पेरेयिल क्षेत्र में उपस्थित भगवान् के पास चलने को उद्यत होती है पराकुश नायिका। उसकी माता और सखियां बाहर निकलने से रोकना चाहती है तो नायिका उनसे कहती है -]

2766 धवल और दक्षिणावर्त शंख और चक्र धर कर अंबुजलोचन के मेरे मन के भीतर विहग (गरुड़) चलाने का ढंग तुम देख नहीं पातीं। क्या बोल कर मैं तुम्हें बताऊं, माताओ। (निकल कर मैं तिरु-प्-पेर्-एयिल (क्षेत्र) चली ही जाऊंगी जहां वह प्रतिष्ठा के साथ विराजमान है, और जिस में वेद-घोष और उत्सव-कोलाहल और बालक-झुंड की विहार ध्वनि कभी रुकती नहीं।

[तिरु-प्-पेर्-एयिल् - शठकोप के कुरुहूर नगर के समीपस्थ एक क्षेत्र जहां भगवान् मकरकुंडलकर्ण नाम से विराजमान हैं।] 1

2767 (कस्तूरी से) सुगंधित नीलकेशी सखियो! माताओ! पड़ोस की ग्रामवासिनियो! मैं इस अद्वितीय (अर्थात् स्वतंत्र) मन को रोक नहीं सकती। वह मेरे वश में नहीं। रात-दिन वह मुझ से निकल कर सुंदर तिरु-प्-पेरेयिल क्षेत्र में प्रतिष्ठा के साथ विराजमान परमधाम के नायक मणिवर्ण कान्ह के पक्वबिंबफलाधर (के सौंदर्य) में ही लग गया है। —तिरुप्पेरेयिल, जो भ्रमरासीन पुष्पयुत उपवनों से तथा जलाशयों से परिवृत है। 2

2768 अरुण (बिंब) फलाधर के अधीन हो कर, रक्त ज्योतिर्मय दीर्घ किरीट शोभा में मग्न हो कर, शंख के साथ चक्र देख कर सुप्रीत हो कर, और कमल नयन से विजित हो कर, जो उसके अधीन ही रहता है, वह मेरा मन, प्रतिमास और प्रतिदिन अविच्छिन्न मनाये जाते उत्सवों से युक्त तेन्-तिरुप्-पेरेयिल में प्रतिष्ठा सहित विराजमान हमारे उपकारक के हाथ अपनी लज्जा और पूर्णता खो के बैठा है, सखि! 3

2769. इळन्द ऍम् मामै तिरत्तु-प् पोन
ऍन् नॅञ्जिनारुम् अङ्गे ऒऴिन्दार्
उळन्दु इनि यारै-क् कॊण्डु ऍन् उशाहो?
ओद-क् कडल् ऒलि पोल ऍङ्गुम्
ऍऴुन्द नल् वेदत्तु ऒलि निन्ऱु ओङ्गु
तॆन् तिरु-प् पेरॆयिल् वीऱ्ऱिरुन्द
मुळङ्गु शङ्ग-क् कैयन् मायत्तु आऴ्न्देन्
अन्नैयर्हाळ्! ऍन्नै ऍन् मुनिन्दे? 4

2770. मुनिन्दु शकडम् उदैत्तु माय-प्
पेय् मुलै उण्डु मरुदु इडै पोय्
कनिन्द विळवुक्कु-क् कन्ऱु ऍऱिन्द
कण्ण पिरानुक्कु ऍन् पॆण्मै तोऱ्ऱेन्
मुनिन्दु इनि ऍन् शॆय्दीर्? अन्नैमीर्हाळ्
मुन्नि अवन् वन्दु वीऱ्ऱिरुन्द
कनिन्द पॊऴिल् तिरु-प् पेरॆयिऱ्‌के
कालम् पॆर ऍन्नै-क् काट्टुमिने॥ 5

2771. कालम् पॆर ऍन्नै-क् काट्टुमिन्गळ्
कादल् कडलिन् मिह-प् पॆरिदाल्
नील मुहिल् वण्णत्तु ऍम् पॆरुमान्
निऱ्कुम् मुन्ने वन्दु ऍन् कैक्कुम् ऍय्दान
आलत्तु अवन् वन्दु वीऱ्ऱिरुन्द
नान् मऱैयाळरुम् वेळ्वि ओवा
कोल-च् चॆन्नॆऱ्कळ् कवरि वीशुम्
कूडु पुनल् तिरु-प् पेरॆयिऱ्‌के॥ 6

2769 (नायक से) अपहृत हमारी शरीर कांति को (उस को जीत कर छीन) लाने के लिए निकले मेरे मानस-महाशय भी वहीं ठहर गए। इसके बाद व्याकुल हुई मैं किस के साथ क्या वार्तालाप करती रहूं? तरंगित सागर के गर्जन के समान उठती उत्तम वेदों की ध्वनि सर्वत्र जहां बढ़ती है उस तेन्-तिरुप्-पेरेयिल में प्रतिष्ठा के साथ विराजमान ध्वनित-शंखहस्त की माया में मग्न हो गई। माताओ! इसके बाद मुझ से कुपित होने से क्या लाभ है? 4

2770 कोप से शकट पर लात मार कर, मायायुत पिशाचिनी का स्तन पी कर, अर्जुन वृक्षों के बीच से चल कर, पक्व-फलों से लदे कपित्थ-वृक्ष पर बछड़े को फेंकते उपकारी कान्ह के हाथ में अपना स्त्रीत्व खो बैठी। मुझ से कुपित हो कर तुम करती ही क्या हो, माताओ! (मेरी प्रतीक्षा करते हुए) पहले ही आ कर जहां वह प्रतिष्ठा के साथ विराजमान है, पक्वफल-पूर्ण आरामों से युक्त तिरुप्पेरेयिल में बिना विलंब के मुझे पहुंचा कर उसका दर्शन कराओ। 5

2771 नीलमेघवर्ण मेरे स्वामी आ कर मेरे सामने खड़े हैं। परंतु हस्तगत नहीं होते। प्रेम तो सागर से भी अति विपुल है, हाय! विलंब के बिना मुझे तेन्-तिरुप्पेरेयिल ले जाकर उन्हें दिखाओ जहां इस संसार में आ कर वे प्रतिष्ठा के साथ विराजमान हैं, चतुर्वेदज्ञ सज्जनों से पूर्ण है, जहां यज्ञादि का अनुष्ठान निरंतर चलता है, अतिरमणीय परिणत शालिधान चंवर ढलते हैं, और जो सुप्रसन्न सलिल ताम्रपर्णी नदी से परिवृत है। 6

2772. पेर् एॅयिल् शूळ् कडल् तॅन् इलङ्गै
शॅऱ्‌र पिरान् वन्दु वीऱ्‌ऱिरुन्द
पेरॅयिऱ्‌के पुक्कु एॅन् नॅञ्जम् नाडि-प्
पेऱ्‌ऱु वर एॅङ्गुम् काण माट्टेन्
आरै इनि इङ्गु उडैयम्? तोळि!
एॅन् नॅञ्जम् कूव वल्लारुम् इल्लै
आरै इनि-क् कॉण्डु एॅन् शादिक्किन्ऱदु?
एॅन् नॆञ्जम् कण्डदुवे कण्डेने॥ 7

2773. कण्डदुवे कॉण्डु एॅल्लारुम् कूडि-क्
कार् क् कडल् वण्णनोडु एॅन् तिरत्तु-क्
कॉण्डु अलर् तूऱ्‌ऱिऱ्‌ऱदु मुदला-क्
कॉण्ड एॅन् कादल् उरैक्किल् तोळी!
मण् तिनि ञालमुम् एळ् कडलुम्
नीळ् विशुम्बुम् कळिय प् पॅरिदाल्
तॅण् तिरै शूळ्न्दु अवन् वीऱ्‌ऱिरुन्द
तॅन् तिरु-प् पेरॅयिल् शर्वन् शॅन्ऱे॥ 8

2774. शॅर्वन् शॅन्ऱु एॅन्नुडै-त् तोळिमीर्हाळ्!
अन्नैयर्हाळ्! एॅन्नै-त् तेऱ्‌ऱवेण्डा
नीर्हळ् उरैक्किन्ऱदु एॅन् इदऱ्‌कु?
नॅञ्जुम् निऱैवुम् एॅनक्कु इङ्गु इल्लै
कार् वण्णन् कार्-क् कडल् ञालम् उण्ड
कण्ण पिरान् वन्दु वीऱ्‌ऱिरुन्द
एऱ्‌वळ ऑण् कळनि-प् पळन-त्
तॅन् तिरु-प् पेरॅयिल् मा नहरे॥ 9

2772 अत्युन्नत प्राकारों से तथा जलधि से परिवृत सुंदर लंका को ध्वस्त करते वीर जहां आ कर प्रतिष्ठा के साथ विराजमान हैं, उस पेरेयिल (नगर) में प्रवेश कर के मेरा मानस उनका अन्वेषण करता है और वहां से उसके लौट आने का चिह्न ही नहीं दीखता। ऐसी दशा में कौन है यहां जो हमारी साथिन है, सखि! मेरा मन बुला लाने मे समर्थ कोई भी नहीं। इसके बाद किस का सहाय ले कर मैं कौन पुरुषार्थ सिद्ध करूं? मेरे मन ने जो देखा उसी को मै भी देखूंगा। (अर्थात् अपने मन के पीछे मैं जाऊंगी।) 7

2773 प्रत्यक्ष जो है उसी के आधार पर सब लोग मिल कर नीलसागरवर्ण प्रभु के साथ मेरा संबंध जोड़ कर निंदा के वचन बोलने लगीं। तब से ले कर मेरे मन में जो प्रेम उपजा है उसका वर्णन करती हूं, सुनो, सखि! मृण्मय पृथिवी सप्त सागर, विपुल आकाश (अर्थात् अति विपुल परमधाम) सब को घेर कर उससे भी अत्यधिक है, हंत। सुप्रसन्न जल ताम्रपर्णी से परिवृत तेन् तिरुप्पेरेयिल पहुंच जाऊंगी ही मैं जहां वह प्रेमी आ कर प्रतिष्ठा के साथ विराजमान है। 8

2774 मेरी सखियो! माताओ मेरा प्रतिरोध मत करो। इस दशा में तुम्हारे वचन भी कैसे हैं? (अर्थात् किस काम के हैं?) न तो मेरा मन यहां है, न गुणपूर्ति (अर्थात् मर्यादा का विचार)। तेन्-तिरुप्पेरेयिल महानगर में चली ही जाऊंगी जहां श्यामलवर्ण नीलसागर परिवृत पृथिवी भक्षक उपकारी कान्ह आ कर प्रतिष्ठा के साथ विराजमान हैं, तथा जो हलों से समृद्ध सुंदर क्षेत्रों से तथा जलाशयों से समन्वित है। 9

2775. नहरमुम् नाडम् पिरवुम् तेर्वेन्
नाण् ऍनक्कु इल्लै ऍन् तोळिमीर्हाळ्!
शिकरम् अणि नॅडु माडम् नीड्
तॅन् तिरु-प् पेरॅयिल् वीऱ्रिरुन्द
मकर नॅडम् कुळै-क् कादन् मायन्
नूऱ्रुवरै अन्रु मड्ग नूऱ्र
निहर्-इल् मुहिल् वण्णन् नेमियान ऍन्
नॅञ्जम् कवन्दु ऍनै ऊळियाने? 10

2776. ऊळि तोरु ऊळि उरुवुम् पेरुम्
शॅय्हैयुम् वेरवन् वैयम् काक्कुम्
आळि नोर् वण्णनै अच्चुदनै
अणि कुरुहूर्-च् चडकोपन् शॉन्न
केळ् इल् अन्दादि ओर् आयिरत्तुळ्
इवै तिरु-प् पेरॅयिल् मेय पत्तुम्
आळि अम् कैयनै एत्त वल्लार्
अवर् अडिमै तिरत्तु आळियारे॥ 11

2775 नगर और जनपद तथा अन्य देश में भी जा कर मैं उसका अन्वेषण करूंगी। लज्जा तो मेरे है ही नहीं, मेरी सखियो! (पर्वत) शिखर तुल्य उन्नत मणिमय, प्रासादों से युक्त विशाल तेन्-तिरुप्पेरेयिल में जो सप्रेम बिराजमान हैं, जो दीर्घ मकरकुंडलभूषितकर्ण मायी हैं जिन्होंने (दुर्योधनादि) शत (भ्राताओं) का संहार करने का संकल्प किया था, तथा जो निरुपम जलद वर्ण चक्रधर हैं, उसके मेरा मन हर लेने के बाद कितने ही ब्रह्मकल्प बीत गए? 10

2776 कल्प कल्प में जिनके रूप, नाम और क्रियाएं भिन्न भिन्न है, जो जगद्रक्षक हैं, जो सागर जलवर्ण हैं, अच्युत हैं, उन पर सुंदर कुरुहूर के संत शठकोप के रचित अनुपम और अद्वितीय अंत्यादि सहस्रगीति में तिरुप्पेरेयिल नगर विषयक इन दस पद्यों से सुंदर चक्रपाणि की स्तुति करने में जो समर्थ हैं, वे सदैव उनकी सेवा में लीन होते हैं। 11

VII. iv. आऴि ए॑ऴ

2777 आऴि॑ एऴ-च् चङ्गम्
विल्लुम् ए॑ऴ. तिशै
वाऴि ए॑ऴ-त् तण्डम्
वाळुम् ए॑ऴ. अण्डम्
मोऴै ए॑ऴ. मुडि
पादम् ए॑ऴ. अप्पन्
ऊऴि ए॑ऴ. उलहम्
कोण्ड वारे ॥

2778. आरु मलैक्कु ए॑दित्तु॑
ओङ्गम् ओ॑लि अरवु
ऊरु शुलाय् मलै
तेय्क्कुम् ओ॑लि कडल्
मारु शुळन्रु अऴैक्किन्र
ओ॑लि अप्पन्
शारु पड अमुदम्
को॑ण्ड नान्रे ॥

2779 नान्रिल एऴ् मण्णुम्
तानत्तवे पिन्नुम्
नान्रिल एऴ् मलै
तानत्तवे पिन्नुम्
नान्रिल एऴ् कडल्
तानत्तवे अप्पन्
ऊन्रि इडन्दु ए॑यिऱ्रिल्
को॑ण्ड नाळे ॥

VII. iv. आळि एळ

(चक्र बढ़ा)

(सर्वेश्वर अपनी विजयपरंपरा दिखा कर श्रीशठकोप को आश्वासन देते हैं।)

2777 सर्वेश्वर के लोक माप कर ग्रहण करने का ढंग कैसा अद्भुत है! तब चक्र बढ़ा और शंख और धनुष बढ़े। दिशाओं में 'जय हो' की ध्वनि बढ़ी। गदा और खड्ग बढ़े। (ब्रह्मांड को तोड़ कर त्रिविक्रम चरण के ऊपर बढ़ने से) अंडावरण-जल के बुदबुद बढ़े। (लोक-क्रमण से) (एक नया) कल्प ही बढ़ा। 1

2778 जिस से समुद्र सारहीन हो इस प्रकार सर्वेश्वर के सागरमन्थन कर के अमृतग्रहण करते समय, प्रतीप-प्रवाह से पर्वतों की ओर नदियों की बहने की ध्वनि (सुन पड़ी)। लपेटे सर्वशरीर से पर्वत के रगड़ने की ध्वनि; सागर के सीधे और उलटे घूमने से जनित ध्वनि (सुन पड़ी)। 2

2779 सर्वेश्वर के (वराह बन कर) (अपना दंष्ट्र) भोंक कर भूमि को उठा कर दंष्ट्र में रखने के दिन बिना सरके सप्त द्वीप अपने स्थान पर रहे। फिर सप्त कुल पर्वत बिना सरके अपने स्थान पर रहे। फिर बिना सरके सप्त सागर अपने स्थान पर रहे। 3

2780. नाळुम् ऍॅळ निल
    नीरुम् ऍॅळ विण्णुम्
कोळुम् ऍॅळ ऍॅरि
    कालुम् एळ मलै
ताळुम् ऍॅळ-च् चुडर्
    तानुम् ऍॅळ अप्पन्
ऊळि ऍॅळ उलहम्
    उण्ड ऊणे ॥ 4

2781. ऊण् उडै मल्लर् तदर्न्द
    ऑॅलि मन्नर्
आण् उडै-च् चेनै
    नडुङ्गुम् ऑॅलि विण्णुळ्
एण् उडै-त् तेवर्
    वॅॅळिप्पट्ट ऑॅलि अप्पन्
काण् उडै-प् पारदम्
    कैयरै पोळ्दे ॥ 5

2782. पोळ्दु मॅॅलिन्द पुन्
    शॅॅक्करिल् वान् तिशै
शूळ्म् ऍॅळुन्दु उदिर-प्
    पुनला मलै
कीळ्दु पिळन्द शिङ्गम्
    ऑॅत्तदाल् अप्पन्
आळ् तुयर् शॅॅय्दु
    अशुरै-क् कॉॅल्लुम् आरै 6

2780 (प्रलय काल में) जिससे चूषण का शब्द सुन पड़े ऐसे सर्वेश्वर ने लोकमय आहार भक्षण किया, (तब दिन रात आदि विभागयुक्त कालतत्व) उखड़ गया ; पृथिवी और जल उखड़ गए। आकाश और ग्रह उखड़ गए। अग्नि तथा वायु उखड़ गए। पर्वत समूल उखड़ गया। (चंद्र सूर्य आदि) ज्योतिश्चक्र भी उखड़ गया। 4

2781 दर्शनीय भारत युद्ध में सर्वेश्वर के रश्मि खींच कर अश्वों को सँभाल कर रथ चलाते समय मदकर द्रव्य खाने से बलिष्ठ मल्लो के झड़ कर गिरने की ध्वनि, राजाओं के पौरुषयुक्त सैनिकों की कंपध्वनि, आकाश में महिमवंत (ब्रह्मादि) देवों के प्रकट हो कर कृष्ण की स्तुति करने की ध्वनि (सुन पड़ी)। 5

2782 (नृसिंहावतार में) सर्वेश्वर के अत्यधिक दुःख दे कर असुर की संहार करने का ढंग ऐसा था कि मानो दिन ढलने पर रक्तवर्ण से युक्त आकाश और दिशाएं रक्तप्रवाह से भर गई हों, और पर्वत को गिरा कर एक सिंह उसे फाड़ रहा हो। अद्भुत था। 6

2783. मारु निरैत्तु
इरैक्कुम् शरङ्गळ इन
नूरु पिणम् मलै
पोल् पुरळ कडल्
आरु मडुत्तु उदिर-प्
पुनला अप्पन्
नीरु पड इलङ्गै
शॆ̆र्र नेरे ॥ ७

2784. नेर् शरिन्दान् कॊ̆डि-क्
कोळि कॊ̆ण्डान् पिन्नुम
नेर् शरिन्दान् ऎ̆रियुम्
अनलोन् पिन्नुम्
नेर् शरिन्दान् मुक्कण्
मूर्त्ति कण्डीर् अप्पन्
नेर् शरि वाणन् तिण्
तोळ् कॊ̆ण्ड अन्रे ॥ ८

2785. अन्रु मण् नीर् ऎ̆रि
काल् विण् मलै मुदल्
अन्रु शुडर् इरण्डु
पिरवुम् पिन्नुम्
अन्रु मळै उयिर्
तैवुम् मर्रुम् अप्पन्
अन्रु मुदल्
उलहम् शॆ̆य्ददुमे ॥ ९

2783 (रामावतार में) सर्वेश्वर के लंका को भस्मसात् कर के नाश करने की कुशलता (ऐसी थी कि)—युद्धभूमि में अतिवेग से संचार कर चारों ओर से चलाए बाण परस्पर टकराने से ध्वनित हो उठे और सैकडों शवों के ढेर पर्वत के समान लुढक पडे और रुधिर प्रवाह से पूरित सागर नदियों में बहने लगा। 7

2784 पीठ दिखा कर भागते बाण (असुर) के दृढ भुजों को सर्वेश्वर के काट डालने के दिन मयूरध्वज (देवसेनापति स्कंद) पीठ दिखा कर भागा। फिर ज्वलित अग्निदेव पीठ दिखा कर भागा। उसके ऊपर त्रिनेत्र मूर्ति रुद्र भी पीठ दिखा कर भाग खडा हुआ। यह जगत् प्रसिद्ध है। 8

2785 सर्वेश्वर ने सृष्टि काल में जब प्रथम सृष्टि की, तब पृथिवी, जल, अग्नि, वायु और आकाश (पंचभूत) सृष्ट हुए। पर्वत आदि पदार्थ सृष्ट हुए। उसके ऊपर तब (सूर्य-चंद्र) ज्योतिर्द्वय तथा अन्य (नक्षत्र आदि) सृष्ट हुए। तब वर्षा सृष्ट हुई। प्राणिवर्ग तथा देवता-गण तथा अन्य भूत वर्ग भी सृष्ट हुए। 9

2786. मेय् निरै कीळ् पुह
मा पुरळ शुनै
वाय् निरै नीर् पिळिरि-च
चोरिय इन
आनिरै पाडि अङ्गे
ओँडुङ्ग अप्पन्
ती मळै कात्तु क्
कुन्ऱम् एँडुत्ताने ॥ 10

2787. कुन्ऱम् एँडुत्त पिरान
अडियारोँडुम्
ओँन्ऱि निन्ऱ शडकोपन्
उरै शेँयल्
मन्ऱि पुनैंद ओर्
आयिरत्तुळ् इवै
वेँन्ऱि तरुम् पत्तुम्
मेवि-क् कऱ्पार्क्के ॥ 11

2786 सर्वेश्वर (श्रीकृष्ण) ने नाशकारी वर्षा का निवारण कर के (गोवर्धन) गिरि उठाया : तब चरती गायों का समूह गिरि के नीचे प्रवेश कर खडा हो गया। (पर्वत को औंधा धरने के कारण) उपरि वर्तमान गज-यूथ लुढक कर गिर पडे। झरनों के मुख पर का जल घोष के साथ प्रवाहित हो उठा। बृंद बृंद से गोप और गाएं तथा गोकुल ग्राम शरण लेने आए। 10

2787 (गोवर्धन) गिरिधारी उपकारी (श्रीकृष्ण) के दासो के साथ एक हो कर स्थित संत शठकोप के रचित वाक्-वृत्त्यात्मक सब के हितकारी अद्वितीय सहस्र गीति में (भगवान् की विजय-परंपरा प्रकाशक) इस दशक को सप्रीति जो सीखते हैं, उन्हें यह दशक विजयप्रद होता है। 11

VII. v. कऱ्पार् इराम पिरानै·

2788. कऱ्पार् इराम पिरानै अल्लाल्
मऱ्ऱुम् कऱ्परो ?
पुऱ्पा मुदला-प् पुल् ऍऱुम्बु आदि
ऒन्ऱु इन्ऱिये
नऱ्पाल् अयोत्तियिल् वाऴ्म्
चराचरम् मुऱ्ऱवुम्
नऱ् पालुक्कु उय्त्तनन्
नान्मुहनार् पॆऱ्ऱ नाट्टुळे ॥ 1

2789. नाट्टिल् पिरन्दवर्
नारणर्कु आळ् अन्ऱि आवरो
नाट्टिल् पिरन्दु पडादन पट्टु
मनिशर्क्का
नाट्टै नलियुम् अरक्करै
नाडि-त् तडिन्दिट्टु
नाट्टै अळित्तु उय्य-च् चॆय्दु
नडन्दमै केट्टुमे ? 2

2790. केट्पार्हळ् केशवन् कीर्त्ति
अल्लाल् मऱ्ऱुम् केट्परो
केट्पार् शॆवि शुडु कीऴ्मै
वशवुहळे वैयुम्
शेट्पाल् पऴम् पहै वन्
शिशुपालन् तिरुवडि
तट्पाल् अडैन्द तन्मै
अऱिवारै अऱिन्दुमे ? 3

VII. v. करपार्

(ज्ञानार्थी)

2788 (अपने प्रिय और हित के हेतु के) ज्ञानार्थी (प्रिय हितकारी) श्रीरामचंद्र प्रभु के व्यतिरिक्त क्या और किसी को जानने का प्रयत्न करेंगे? उत्तम स्थान अयोध्या मे जीवित (रहने के सौभाग्य से युक्त) फैलते दूर्व आदि अचर और अत्यल्प पिपीलिका आदि चर सब को यद्यपि पुरुषार्थ प्राप्ति का कोई साधनानुष्ठान उन्होने नहीं किया था—चतुर्मुख के सृष्ट जगत् मे ही (रामविरह मे हर्षित और राम सश्लेष मे आनंदित होने के) उत्तम स्वभाव से युक्त श्रीरामने बना दिया था। 1

2789 (मनुष्य) लोक मे जन्म ले कर, उनसे भी अननुभूत दुःखों का जिसने अनुभव किया, (कृतज्ञता विहीन) मनुष्यों (की भलाई) के लिए लोक हिसक राक्षसों का अन्वेषण कर के सहार कर, लोक की रक्षा कर के जीवन दे कर जो अपने परमधाम चले, उस नारायण का यह सब (उपकार) सुन कर भी इस लोक मे जन्म लेते मनुष्य नारायण के व्यतिरिक्त क्या और किसी के दास बन कर रहेंगे? 2

2790 (रुचि के साथ भगवन्निदा के) श्रोताओं के कर्णदाहक परुष और नीच वचनो से गाली देते शिशुपाल ने—जो कि अतिपूर्व काल मे ही पुराना विरोधी था—स्वामी (श्रीकृष्ण) के चरणों से सायुज्य प्राप्त किया। इस चरित्र से अभिज्ञ सज्जनो को पहचान कर उनसे श्रवण करने के इच्छुक लोग (केशिहंता) केशव की कीर्ति के व्यतिरिक्त क्या और कुछ श्रवण करेंगे? 3

2791. तन्मै अरिपवर् ताम्
अवर्कु आळ् अन्रि आवरो
पन्मै-प् पडर् पॊरुळ आदुम् इल्
पाळ नॆडुम् कालत्तु
नन्मै-प् पुनल् पण्णि
नान्मुहनै-प् पण्णि तन् उळ्ळे
तॊन्मै मयक्किय
तोर्रिय शूळ्ल्हळ् शिन्दित्ते ? 4

2792. शूळ्ल्हळ् शिन्दिक्किल् मायन्
कळल् अन्रि-च् चूळ्वरो
आळ-प् पॆरुम् पुनल् तन्नुळ्
अळुन्दिय ञालत्तै
ताळ-प् पडामल् तन् पाल्
ऒरु कोट्टिडैत् तान् कॊण्ड
केळल् तिरु उरु आयिर्रु क्
केट्टुम् उणर्न्दुमे ? 5

2793. केट्टुम् उणर्न्दवर् केशवर्कु
आळ अन्रि आवरो
वाट्टम् इला वण् कै मावलि
वादिक्क वादिप्पु उण्डु
ईट्टम् कॊळ् देवर्हळ् शॆन्रु
इरन्दार्कु इडर् नीक्किय
कोट्टङ्गै वामनन् आय्-च् चॆय्द
कूत्तुक्कळ् कण्डुमे ? 6

2791 (देवमनुष्यादि रूप से) विभिन्न बिखरे पड़े पदार्थों का भगवान् के संकल्प से जब लय हुआ और जब कोई भी पदार्थ नहीं था उस सर्वशून्य दीर्घ (प्रलय) काल के अंत में, भगवान् ने हितकर जल की सृष्टि कर, चतुर्मुख की सृष्टि कर, फिर से सब पदार्थों को प्रकाशित किया। उन की इस कुशलता का ध्यान कर परमात्मा का (सर्वकारण होने का) स्वभाव जानते (विवेकी) जन क्या उनके व्यतिरिक्त और किसी के दास बनेंगे? 4

2792 गंभीर महासागर जल में मग्न पृथिवी को जिससे वह न गल जाय ऐसा अपने शरीर के दंष्ट्र में रखते भगवान् के मनोहररूप वराह बन जाने का वृत्तांत (शास्त्रों में) श्रवण कर, मनन कर, अपने (निस्तार के) उपाय का चिंतन करनेवाले विवेकीजन आश्चर्य शक्तियुक्त (मायी) के चरण के व्यतिरिक्त क्या और किसी का समाश्रयण करेंगे? 5

2793 कलातिरहित (अर्थात् अविच्छिन्न) उदारहस्त महाबलि की बाधा से बाधा प्राप्त कर एकत्रित देवों के (भगवान् के पास) जा कर प्रार्थना करने पर उन का दुःख दूर करने के लिए जो याचना में सुंदर हस्त बढ़ाते वामन बने, उनके खेले नाटकों को देख कर और सुन कर भी विवेकी-जन (प्रशस्त केशों से युक्त) केशव के व्यतिरिक्त क्या और किसी के दास बनेंगे? 6

2794. कण्डुम् तेळिन्दुम् कऱ्ऱार्
कण्णऱ्कु आळ् अन्ऱि यावरो
वण्डु उण् मलर्-त् तोॅङ्गल्
मार्क्कण्डेयनुक्कु वाळ्नाळ्
इण्डै-च् चडै मुडि ईशन्
उडन् कोॅण्डु उशा-च् चेॅल्ल
कोॅण्डु अङ्गु-त् तन्नोडुम् कोॅण्डु
उडन् शेॅन्ऱदु उणर्न्दुमे ? 7

2795. शेॅल्ल उणर्न्दवर् शेॅल्वन् तन्
शीर् अन्ऱि-क् कऱ्परो
ऍल्लै इलाद पेॅरुम्
तवत्ताल् पल शेॅय् मिऱै
अल्लल् अमररै-च् चेॅय्युम्
इरणियन् आहत्तै
मल्लल् अरि उरु वाय्-च् चेॅय्द
मायम् अरिन्दुमे ? 8

2796. मायम् अरिपवर् मायवऱ्कु
आळ् अन्ऱि आवरो
तायम् शेॅरुम् ओॅरु नूऱ्ऱुवर्
मङ्ग ओर् ऐवर्क्कु आय्
देशम् अरिय ओर् शारदियाय्-च्
चेॅन्ऱु शेनैयै
नाशम् शेॅय्दिट्टु नडन्द
नल् वार्त्तै अरिन्दुमे ? 9

2794 भ्रमरों से पीयमान (मधुस्यंदि) पुष्पमालालंकृत मार्कंडेय के जीवन-काल की वृद्धि प्राप्त करने के लिए पुष्पमालायुक्त जटाधर ईश उसको साथ ले कर श्रीकृष्ण के पास गया तो श्रीकृष्ण ने मार्कंडेय को रक्षणीय मान कर उसको अपने ही साथ रखकर अनन्य भक्त बना दिया। इसको सुन कर और (पुराणों में) देख कर और (गुरुमुख से स्पष्ट रीति से) सीख लेने वाले (विवेकीजन) श्रीकृष्ण के अतिरिक्त क्या और किसी के दास बनेंगे ? 7

2795 अपरिमित महा तपोबल से अमरों को सता कर दुखी बनाते हिरण्य के शरीर को सुंदर (नर) हरि रूप ले कर विदीर्ण करने की अद्भुत शक्ति को जान कर परमपुरुषार्थ तक जाने के विवेक से युक्त लोग श्रीमान् (नरसिंह) के (आश्रितवात्सल्य आदि) मंगल गुणों के व्यतिरिक्त क्या और किसी की शिक्षा में लग जाएंगे ? 8

2796 (पांडवों को) दाय प्राप्त राज्य का उपहार करते अद्वितीय शत (कौरवों) का संहार करने के लिए असहाय पांच (पांडवों) के हो कर, लोकप्रसिद्ध विलक्षण सारथी बन के जा कर, सेना ध्वस्त कर के (अंत में अपना परमधाम) जाने की वार्ता जान कर भी श्रीकृष्ण की भक्त-पराधीनतात्मक आश्चर्यमय गुण जाननेवाले अद्भुत शक्ति से युक्त उस मायावी (श्रीकृष्ण) के व्यतिरिक्त क्या और किसी के दास बनेंगे ? 9

2797. वार्त्तै अरिपवर् मायवर्कु
आळ् अन्रि आवरो
पोर्त्त पिरप्पॊडु नोयॊडु
मूप्पॊडु इरप्पु इवै
पेर्त्तु पॆरुम् तुन्बम् वेर् अर
नी कि-त् तन् ताळिन् कीळ्-च
चेर्त्तु अवन् शॆय्युम्
शेमत्तै ऍण्णि-त् तॆळिवु उर्रे? 10

2798. तॆळिवु उररु वीवु इन्रि
निन्रवक्कु इन्ब-क् कदि शॆय्युम्
तॆळिवु उरर कण्णने-त्
तॆन् कुरुहूर्-च् चडकोपन् शॊल्
तॆळिवु उरर आयिरत्तुळ्
इवै पत्तुम् वल्लार् अवर्
तॆळिवु उरर शिन्दैयर
पा मरु मू उलहत्तुळ्ळे ॥ 11

2797 (आत्मस्वरूप के) तिरोधानकारी जन्म के साथ, रोग के साथ, जरा के साथ मरण आदि सब को दूर कर, (गर्भ नरक आदि) महा दुःखों को समूल हटा कर, अपने पाद मूल में भक्तों को रख कर श्रीकृष्ण जो क्षेम (अर्थात् रक्षा) करता है उसका चिंतन कर के प्रसन्नमानस हो कर उसकी वार्ता का ज्ञान रखते (भक्त) आश्चर्यभूत मायावी (श्रीकृष्ण) के व्यतिरिक्त क्या और किसी के *दास बनेंगे?*

[वार्ता–भगवद्‌गीता में प्रोक्त उपदेश–"*माम् एकं शरणं व्रज*"–एक मेरी शरण में आओ।

क्षेम–"अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि"–(मैं तुम्हें सभी पापों से छुड़ा दूंगा।) 10

2798 (श्रीमन्नारायण ही प्राप्य तथा प्रापक हैं)–इस विशद ज्ञान को प्राप्तकर उसी में विना भ्रंश के खड़े भक्तों को आनंद-गति (अर्थात् निरतिशयानंदरूप पुरुषार्थ) प्रदान करते प्रसन्नचित्त कान्ह पर सुंदर कुरुकूर (नगर के संत) शठकोप के कथित विशद अर्थों से युक्त सहस्र पद्यों में इन दस पद्यों के पठन में जो कुशल हैं, वे पाप-भूमिपिष्ठ लोकत्रय में ही ज्ञान वैशद्य से संपन्न चित्त से युक्त होते हैं। 11

VII. vi. पा मरु मू उलहुम्

2799. पा मरु मू उलहुम्
पडैत्त पर्पनाभाबो !
पा मरु मू उलहुम्
अळन्द पर्प पादावो !
तामरै-क् कण्णा
तनियेन् तनि आळावो !
तामरै-क् कैयावो !
उनूनै एॅनूरु कोॅलॅ शार्वदुवे ? 1

2800. एॅनूरु कोॅल् शार्वदु ? अन्दो !
अरन् नान्मुहन् एत्तुम् शेॅय्य
निन् तिरु-प् पादत्तै यान्
निलम् नीर् एॅरि काल विण उयिर्
एॅनूरु इवै ताम् मुदला
मुर्रुम् आय् निनूर एन्दा यो !
कुनूरु एॅडुत्तु आ निरै मेय्त्तु
अवै कात्त एॅम् कूत्तावो ! 2

1801. कात्त एॅम् कूत्तावो !
मलै एन्दि-क् कल् मारि तनूनै
पू-त् तण् तुळाय् मुडियाय् ! पुनै
कोॅनूरै अम् शेॅम् शडैयाय् !
वाय्त्त एॅन् नान्मुहने ! वन्दु
एॅन् आर् उयिर् नी आनाल
एत्तरुम् कीर्त्तियिनाय् ! उननै
एॅङ्गु-त् तलैप्पेॅय्वने ? 3

VII. vi. पामरु मूवुलहुम्

(विस्तार से समन्वित)

[श्रीशठकोप ऊंचे स्वर से परमात्मा का आह्वान कर प्रार्थना करते है प्रकृति का संबंध काट कर अपने चरण मे पहुचाओ ।]

2799 विस्तार से समन्वित त्रिलोको के स्रष्टा हे पद्मनाभ ! विस्तार से युक्त त्रैलोक्य के मापक हे पद्मपाद ! हे पुंडरीकाक्ष ! हे असहाय मेरे अद्वितीय रक्षक ! हे कमलहस्त ! (बता दो) कब मै तुम्हे प्राप्त करूं ? 1

2800 बताओ कब मै तुम्हारे चरण प्राप्त करूं, हाय ! हर और चतुर्मुख से सस्तुत तुम्हारे सुदर और अरुण चरण। भूमि जल, अग्नि, वायु, आकाश, प्राणिवर्ग आदि सभी पदार्थो के रूप मे खडे हे मेरे स्वामी ! गोसमूह चरा कर, और गोवर्धन गिरि उठा कर (वर्षा का) निवारण कर उन की रक्षा करते हमारे हे नटवर 2

2801 गिरि धर कर शिलावर्ष का वारण करते हे मेरे नटवर ! विकसित शीत तुलसी से अलंकृत किरीटधारी ! कर्णिकार से भूषित सुंदर अरुण जटाधर ! (नाभीकमल से) उत्पन्न मेरे चतुर्मुख ! (अर्थात् जटाधर रुद्र के और कमलोद्भव चतुर्मुख के अन्तर्यामी !) स्तुत्यगोचर कीर्तिमंत ! आ कर तुम मेरी प्रिय आत्मा रहे। तिस परभी मैं कैसे तुम्हें प्राप्त करूं ! (बिना तुम्हारी कृपा के) 3

2802. ऍङ्गु त् तलै प्पॅय्दवन् नान् ?
 ऍव्विल् मू उलहुम् नी से
अङ्गु उयर् मुक्कट् पिरान्
 पिरमन् पॅरुमान् अवन् नी
वॅम् कदिर् वच्चिर-क् कै
 इन्दिरन् मुदला त् तॅय्वम् नो
कॉङ्गु अलर् तण् अम् तुळाय् मुडि
 ऍन्नुडै-क् कोवलने। 4

2803. ऍन्नुडै क् कोवलने।
 ऍन् पॉल्ला क् करु माणिक्कमे!
उन्नुडै उन्दि मलर्
 उलहम् अवै मून्रुम् परन्दु
उन्नुडै-च् चोदि वॅळ्ळत्तु
 अहम्पाल् उन्नै क् कण्डु कोण्डिट्टु
ऍन्नुडै आर् उयिरार्
 ऍङ्ङने कॉल् वन्दु ऍय्दुवरे! 5

2804. वन्दु ऍय्दुम् आरु अरियेन्
 मल्हु नील-च् चुडर् तळैप्प
शॅम् शुडर्-च् चोदिहळ् पूत्तु
 ऑरु माणिक्कम् शेर्वदु पोल्
अन्दर मेल् शॅम् पट्टोडु
 अडि उन्दि कै मार्वु कण् वाय्
शॅम् शुडर्-च् चोदि विड
 उरै ऍन् तिरु मार्बनैये॥ 6

2802 कैसे मैं तुम्हें प्राप्त कर सकता ? सुंदर लोक त्रय भी तुम ही हो। उसके सर्वश्रेष्ठ भगवान् त्रिणेत्र (रुद्र) और भगवान् ब्रह्म नाम से प्रसिद्ध वह तुम हो। प्रतापोज्ज्वल वज्रहस्त इंद्र आदि देवतागण तुम हो। मधु-प्रवाहित और विकसित शीत और सुंदर तुलसी मालालंकृत किरीट से शोभित मेरे गोपाल !

ब्रह्म रुद्रादि सब तुम हो—कहने का तात्पर्य है उनका वैभव तुम्हारे अधीन है। 4

2803 मेरे गोपाल ! मेरे नटखट नीलरत्न ! मेरे प्रिय प्राण महाशय, जो तुम्हारी नाभीकमल जात तीन लोकों के सुख सगी है तुम्हारे ज्योतिप्रवाह (परमधाम) मे कैसे आएंगे और तुम्हें देख कर कैसे प्राप्त करेंगे ?

[प्यारे प्राणमहाशय--तुच्छ आत्म वस्तु] 5

2804 अपनी नील कांति फैलाते हुए रक्तप्रभान्वित ज्योति विकास से संपन्न एक माणिक्य गिरि के लेटे रहने के जैसे, कटि में रक्त पीतांबर के साथ चरण और नाभी, ह[illegible] और वक्षःस्थल, नयन और वदन से निकलती रक्तप्रभान्वित ज्योति के साथ परमधाम में वास करते लक्ष्मीसमालिंगित वक्षस्क मेरे प्रभु को वहां जा कर प्राप्त करने का प्रकार मैं नहीं जानता। 6

280 ऍन् तिरु मार्बन् तन्नै
    ऍन् मलै महळ् कूरन् तन्नै
ऍन्रुम् ऍन् ना महळै
    अहम् पाल् कॉण्ड नान्मुहनै
निन्र शचि पदियै निलम्
    कीण्डु ऍयिल् मून्रु एरित्त
वॅन्रु पुलम् तुरन्द
    विशुम्बु आळियै-क् काणनो ! 7

2806. आळियैक् काण् परियाय्
    अरि कण् नरि आय् अरक्कर्
ऊळै इटट अन्रु इलङ्गै
    कडन्दु पिलम् पुक्कु ऑळित्त,
मोक्ष अम् पुळ्ळैक् कडाय् नेरि
    माळियै-क् कॉन्रु पिन्नुम्
आळ् उयर् कुन्रङ्गळ्
    अडत्तानैयुम् काण्डुम् कॉलो ! 8

2807. काण्डुम् कॉलो नॅञ्जमे !
    कडिय विनैये मुयलुम्
आण् तिरल् मीळि मॉयम्बिल्
    अरक्कन् कुलत्तै त् तडिन्दु
मीण्डुम् अवन् तम्बिक्के
    विरि नीर् इलङ्गै अरुळि
आण्डु तन् शोदि पुक्क
    अमरर् अरि एर्रिनैये ? 9

2805 जो मेरे लक्ष्मीवक्षस्क है, जो शैलजा से स्वीकृत शरीरार्ध से युक्त हैं (अर्थात् अर्धनारीश्वर रुद्र है), जो सदैव वाग्देवी को मुख में रखता चतुर्मुख है (अर्थात् सरस्वति वल्लभ ब्रह्म है), जो (ब्रह्म रुद्रादि के साथ परिगणित हो कर) खड़ा शचीपति (इंद्र) है, जिसने पृथिवी का उद्धरण किया (रुद्रांतर्यामी हो कर) त्रिपुरदहन किया, (ब्रह्मांतर्यामी हो कर) सृष्टि करने के लिये इंद्रियों को जीत कर भगाया, (इंद्रांतर्यामी हो कर) स्वर्ग का शासन किया क्या मैं उस प्रभु को कभी देख भी पाऊंगी? 7

2806 शरभ को देख कर पशु की भांति और (अर्थात् सिंह) को देख कर शृगाल की भांति, (मालि सुमालि) युद्ध के दिन बचे राक्षस जिस में भूंकते हुए लंका में भाग कर बिल में (अर्थात् पाताल में) छिप जायं, ऐसे बलिष्ठ और सुंदर विहग (गरुड) को चला कर पराक्रमी सुमाली का संहार कर और उसके ऊपर हत सैनिकों के शव-पर्वत का ढेर सा बना कर ध्वस्त करते वीर को देख सकता हूं क्या? ८

2807 मानस' क्रूरकर्म में ही निरत और पौरुष शक्ति तथा भुजबल में युक्त राक्षस (रावण) का कुल ध्वस्त कर के, उसके अनुज (विभीषण) ही को विशाल सागर-परिवृत लंका-राज्य प्रदान कर, (अयोध्या) लौट कर राज्य की रक्षा कर (अंत में) अपने ही ज्योतिर्मय (परमधाम) चले नित्यसूरियों के राजसिंह को क्या हम देख सकते हैं? ९

2808. एऱ्ऱरुम् वैकुन्दत्तै
अरुळुम् नमक्कु आयर् कुलत्तु
ईऱ्ऱिळम् पिळ्ळै ओॅन्ऱु आय्-प्
पुक्कु मायङ्गळे इयऱ्ऱि
कूऱ्ऱु इयल् कञ्जनैक् कोॅन्ऱु
ऐवर्क्काय्-क् कोॅडुम् शेनै तडिन्दु
आऱ्ऱल् मिक्कान् पेॅरिय
परम शोदि पुक्क अरियै ॥ 10

2809 पुक्क अरि उरुवु आय्
अवुणन् उडल् कीण्डु उहन्द
शक्कर-च् चेॅल्वन् तन्नैक
कुरुहूर्-च् चडकोपन् शोॅन्न
मिक्क ओर् आयिरत्तुळ्
इवै पत्तुम् वल्लारवरै
तोॅक्कु-प् पल्लाण्डु इशैत्तु-क्
कवरि शेॅय्वर् एळैयरे ॥ 11

2808 गोप-कुल में एक नवजात बाल शिशु बन के प्रवेश कर के अत्यद्भुत लीलाए कर के, मृत्यु-स्वभाव से युक्त कंस का संहार कर और पांचो (पांडवों) के लिए क्रूर सेना को जीतते अतिपराक्रमी हरि (श्रीकृष्ण), जो अपरिच्छिन्न परंज्योति (परमधाम) पहुंचा, क्या हमें दुष्प्राप वैकुंठ प्रदान करेगा। 10

2809 (नर) हरि रूप से निकल कर असुर शरीर चीर कर प्रसन्न होते चक्रधर श्रीमान पर कुरुहूर के (संत) शठकोप के रचित अतिमहिमवत एक सहस्र में इन दस पद्यों के पठन में जो कुशल हैं उनके सामने सुंदर स्त्रियां एकत्रित हो कर मंगलाशासन करते हुए और चामर-वीजन करते हुए परिचर्या करेंगी। 11

VII. viii. एळैयर् आवि

2810. एळैयर् आवि उण्णुम् इणै-क्
कूर्रम् कॉलो ? अरियेन्
आळि अम् कण्ण पिरान तिरु-क्
कण्गळ् कॉलो ? अरियेन्
शूळवुम् तामरै नाण् मलर् पोल्
वन्दु तोन्रुम् कण्डीर्
तोळि यर्गाळ् ? अन्नैमीर् !
ऍन् शॅय्हेन् तुयराट्टियेने ? 1

2811. आट्टियुम् तूर्रियुम् निन्रु
अन्नैमीर् ! ऍन्नै नीर् नलिन्दु ऍन ?
माट्टु उयर कर्पहात्तिन् वल्लियो !
कॉळ्न्दो ? अयियेन्
ईट्टिय वॅण्णॅय् उण्डान्
तिरु मूक्कु ऍनदु आवियुळ्ळे
माट्टिय वल् विळक्किन् शुडर् आय
निर्कुम् वालियदे ॥ 2

2812. वालियदु ओर् कनि कॉल् ?
विनै याट् टियेन् वल् विनै कॉल ?
कोलम् तिरळ् पवळ क् कॉळुम्
तुण्डम् कॉला ? अरियेन्
नील नॅडु मुहिल् पोल् तिरु मेनि
अम्मान् तॉण्डै वाय्
एलुम् तिशैयुळ् ऍल्लाम् वन्दु
तोन्रुम् ऍन् इन उयिर्क्के ॥ 3

VII. vii. एळैयर् आवि

(सुंदरियो के प्राण)
[परांकुश नायिका की विरहवेदना
नायक के सौंदर्य का स्मरण कर]

2810 मुग्ध सुंदरियो के प्राणहारी भृत्ययुगल है क्या ये ? न जाने। अथवा सागर सदृश गंभीर और मनोहर प्रभु के रम्य नयन है ये ? न जाने। तरुण कमलपुष्प की भांति चारो ओर आ कर दीखते है, तुम नही देखतीं ? सखियो ! माताओ दुःखभागिनी मैं क्या करूं ? 1

2811 नाच नाच कर और अपवाद करते हुए खड़ी हो कर मुझे बाधा देने से, माताओ ! क्या प्रयोजन है ? मे नही जानती कि क्या वह पास उपजी कल्प की वल्ली है अथवा पल्लव है ? राशीकृत नवनीत के भक्षक की सुंदर नासिका मेरे हृदय के अंदर आरोपित स्थिर दीप की महाज्वाला की भांति प्रकाशमान हो कर जलाती है। 2

2812 पक्व अमृतरसमय एक फल है क्या वह ? अथवा मुझ पापिनी का प्रबल पाप है ? अथवा सौंदर्यराशिमय प्रबाल का मनोहर खंड है ? न जाने। नील महामेघ सदृश रमणीय रूपवान, स्वामी का बिंबाधर मेरी आत्मा का अंत करने के लिए सब दिशाओ मे आ कर दिखाई देता है जहां जहां बच कर भागने का प्रयत्न करती हूं। 3

2813. इन् उयिक्कुॅ एळै यर् मेल्
वळैयुम् इणै नील विल् कोल् ?
मन्निय शीर् मदनन् करुप्पु-च्
चिलै कोल् ? मदनन्
तन् उयिर्-त् तादै कण्ण पेरुमान्
पुरुवम् अवैये
एन् उयिर् मेलनवाय्
अडुकिन्रन एन्रुम् निन्रे ॥ 4

2814. एॅन्रुम् निन्रे तिहळुम् [illegible]य्य
ईन् शुडर् वॅण् मिन्नु[illegible] कोॅ[illegible] ?
अन्रु एॅन् आवि अडम्
अणि मुत्तम् कोॅला ? अ[illegible]येन
कुन्रम् एॅडत्त पिरान्
मुरुवल् एॅनदु आवि अडुम
ओॅन्रुम् अरिहिन्रिलेन्
अन्नैमीर् ! एॅनक्कु उय्वु इडमे 5

2815. 'उय्वु इडम एळैयक्कुॅम्
अशुरक्कुॅम् अरक्कर्हट्कुम्
एॅव्विडम् ?" एॅनरु इलङ्गि
मकरम् तळैक्कुम् तळिर् कोॅल्"
पै विड-प् पाम्बु अणैयान्
तिरु-क् कुण्डल-क् कादुहळे
व विडल् ओॅन्रुम् इन्रि
अडुकिन्रन काण्मिनगळे ॥ 6

2813 क्या ये मुग्ध कामिनियों के प्रति उनके प्रिय प्राण हरने के लिए झुके नील धनुर्युगल हैं? अथवा स्थिर सौंदर्य मे युक्त मदन के इक्षु-कोदंड है? वे तो मदन के प्राणजनक प्रभु कान्ह की भ्रूलताएं है जो मेरे प्राणो को ही लक्ष्य बना कर सदैव एक ही प्रकार से पीड़ा देती रहती है। 4

2814 नित्य स्थिर रह कर प्रकाशमान और अरुणप्रभा जनक धवल विद्युत है क्या यह नही तो मेरे प्राणहिंसक सुंदर मोती है क्या? न जाने। गिरिधारी प्रभु कान्ह का मन्द स्मित मेरी आत्मा को दुखाता है। इस से बच कर जाने का कोई भी स्थान मुझे विदित नही होता, माताओ। 5

2815 "अबलाओं को, असुरों को, तथा राक्षसों को बच कर रहने का स्थान कहां है?" क्या वह यह प्रश्न करता ज्वलन पल्लव है जिसमे मकर (कुंडल) अंकुरित होता है? विकसितफण विषसर्प शय्या पर शयित भगवान् के सुंदर कुंडल-भूषित कान ही है ये जो स्वल्प भी हस्त हटाए बिना (अर्थात् लगातार) हिंसा करते है। तुम ही देखो। 6

2816. 'काण्मिन्गळ् अननैमीर्हाळ्' ऍन्रु
काट्टम् वहै अरियेन्
नाण् मन्नु वॅण् तिङगळ् कॉल् ?
नयन्दार्हट्कु नच्चु इलै कॉल्'
शेण् मन्नु नाल् तडम तोळ्
पॅरुमान् तन् तिरु नुदले
कोळ् मन्नि आवि अडम्
कॉडियेन् उयिर् कोळ् इळैत्ते 7

2817. काळ् इळै त् तामरैयुम्
कॉडियुम् पवळमुम् विल्लुम्
कोळ् इळै त् तण मुत्तमुम्
ताळिरुम् कुळिर् वान् पिरैयुम्
कोळ् इळैया उडैय कॉळम्
शोदि वटटम् कॉल्' कण्ण न
कोळ् इळै वाळ् मुहमाय् क्
कॉडियेन उयिर कॉळ्हिन्ऱदे' 8

2818 कॉळ्हिन्र कोळ् इरुळै-च्
चुहिन्दिट्ट कॉळुम् शुरुळिन्
उळ् कॉण्ड नील नन् नूल्
तळै कॉल्' अन्रु मायन् कुळल
विळ्हिन्र पूम् तण् तुळाय्
विरै नार वन्दु ऍन उयिरै
कळ्हिन्र आरु अरियीर्
अननैमीर्' कळरा निर्रिरे ॥ 9

2816 "यह देखो, माताओ!" कह कर दुखद वस्तुओं को दिखाने का मार्ग मैं नही जानती। क्या यह है निर्मल (अर्ध) चंद्र जो (घटे या बढ़े बिना अष्टमी के) दिन स्थिर रहता है? अथवा प्रेमिकाओं को (दुखद) विषपर्ण है? यह स्थिर दीर्घ विशाल चार भुजाओंसे युक्त परमात्मा का ललाट ही है जो मेरे पाप हरने का निश्चय कर के उसमे स्थिर रह कर मुझ पापिनी की आत्मा को हिसा देता है। 7

2817 अपनी कांति से सुशोभित कमल और लता, प्रवाल और चाप, अपनी कांति से शोभायमान शीत मोती और पल्लव शीत और श्लाघनीय (अष्टमी के अर्ध चंद्र) कला इन सब से युक्त और अपनी प्रभा से अलकृत ज्वलत ज्योतिमंडल है क्या यह? यह तो कान्ह का सौंदर्य से अलंकृत भासमान मुख हो कर मुझ पापिनी के प्राण हरता है। 8

[कमल-(कमल सदृश) नेत्र; लता-नासिका (लता)। प्रवाल-अधर, चाप भ्रू; मोती-मदस्मित, पल्लव कर्ण, चंद्रकला-ललाट, ज्योतिमंडल-ज्वलत मखमंडल।

2818 (जगत्भर) व्याप्त होते गाढ़ अंधकार को सँवार कर (सारांश निकाल कर उसे गोल बना कर) सारभूत गगन के मध्य भाग से आते हुए नील और सुंदर नागों का समूह है क्या यह? नही। वह मायी (कृष्ण) का कुंतल है। खिलते पुष्पों से युक्त तथा तरुण तुलसी की सुगंध-प्रवाह से युक्त वह कुंतल आ कर मेरी आत्मा को हर लेता है जिसे तुम नहीं जानती, माताओ! दुखद वचन बोलती हो। 9

2819. 'निऱ्ऱि मुऱ्ऱत्तुळ्' ऍन्ऱु
नेरित्त कैयराय् ऍन्नै नीर
शुऱ्ऱियुम् शूळ्न्दुम् वैदिर्
शुडर्-च् चोदि मणि निरम् आय्
मुऱ्ऱ इम् मू उलहुम्
विरिहिन्ऱ शुडर् मुडिक्के
ऒऱ्ऱुमै कॊण्डदु उळ्ळम्
अन्नैमीर्' नशै ऍन् नुङ्गट्के ? 10

2820. कट्कु अरिय पिरमन् शिवन
इन्दिरन् ऍन्ऱु इवर्क्कुम्
कट्कु अरिय कण्णनैक्
कुरहूर्-च् चडकोपन् शॊन्न
उट्कुडै आयिरत्तुळ इवैयुम्
ऒरु पत्तुम् वल्लार्
उट्कुडै वानवरोडु
उडनाय् ऍन्ऱुम् मायारे ॥ 11

2819 "(खुले) आंगन में आ कर खड़ी हो गई तुम" कह कर, हाथ मल कर तुम चारों ओर घेर कर मुझे धिक्कारती हो। फैलती ज्योति से युक्त मणिवर्ण से संपन्न तथा सारे त्रिलोक मे विकसित प्रभा से युक्त किरीट से मेरा मन एक हो गया। माताओ! मुझ से वांछा रखने से तुम्हे क्या प्रयोजन है? 10

2820 दुर्दर्श ब्रह्मा, शिव, इंद्र कहलाते देवों को भी दुर्दर्श कण्णन पर कुरुहूर के शठकोप के कथित सहस्रगीति मे जो (भगवान् के गुण रूप आदि कहने में) शक्तियुक्त है इस दशक के पठन में जो समर्थ है वे (परिपूर्ण भगवदनुभव करने मे) शक्तियुक्त नित्यसूरियो के साथ रह कर सदैव अंतहीन रहते है। (अर्थात् वहां से वियुक्त नहीं होते।) 11

VII. viii. माया' वामनने'

2821. माया' वामननै'
मदुशूदा' नी अरुळाय्
तीयाय् नीरय् निलनाय्
विशुम्बाय्-क् काल् अदाय्
तायाय् त् तन्दैयाय् मक्कळाय्
मर्रुम् आय् मुर्रुम् आय्
नी आय् नी निन्र आरु
इवै ए॔न्न नियायङ्गळे' 1

2822. अङ्कण मलर्-त् तण तुळाय्
मुडि अच्चुदने' अरुळाय्
तिङ्गळुम् ञायिरुम् आय् च्
चॆ॔ळुम् पल् शुडर् आय् इरुळ् आय्
पॊ॔ङ्गु पॊ॔ळि मळै आय् प्
पुहळ् आय्-प् पळि आय् प् पिन्नुम् नी
वॆ॔ङ्कण् वॆ॔म् कूर्रमुम् आम्
इवै ए॔न्न विचित्तिरमे' 2

2823 चित्तिर-त् तेर् वलवा'
तिरु च् चक्करत्ताय्' अरुळाय्
ए॔त्तनै ओर् युगमुम् अवै आय्
अवर्रुळ् इयलुम्
ऒ॔त्त ऒ॔ण् पल् पॊ॔रुळ्हळ्
उलप्पिल्लन आय् वियवाय्
वित्तहत्ताय्' निर्रि नी
इवै ए॔न्न विडमङ्गळे! 3

VII. viii. माया। वामनने।

(मायी। वामन।)

[सर्वेश्वर के विचित्र जगदाकार रूप को देख कर संत विस्मित हो कर उसका वर्णन करते है।]

2821 हे मायी! (अर्थात् स्वाभाविक आश्चर्यावह शक्ति युक्त!) हे वामन! हे मधुसूदन! तुम ही बताने की कृपा करो (और मेरा सदेह दूर करो) अग्नि हो कर और जल हो कर, पृथिवी हो कर और आकाश हो कर और वायु हो कर, माता हो कर और पिता हो कर, संतान हो कर और अन्य (बांधव) हो कर तथा (तत्सबंधी अन्य सब हो कर एवं तुम स्वय आप भी हो। तुम्हारे इस प्रकार अवस्थित होने का तत्त्व क्या है, (बताओ)। 1

2822 सुंदर मधुस्यंदि पुष्पित और शीत तुलसी से समलकृत किरीटधर अच्युत! चंद्र और सूर्य हो कर, दर्शनीय विविध नक्षत्र हो कर और अंधकार हो कर, पूर्ण हो कर बरसाती जलद हो कर, कीर्ति हो कर और अपकीर्ति हो कर उसके ऊपर तुम क्रूरेक्षण क्रूरस्वभाव मृत्यु भी हो। (तुम्हारे) ये सब (प्रकार) विचित्र है। (इसका तत्त्व तुम ही) बताओ। 2

2823 चित्ररथ संचारण समर्थ! श्रीचक्रधर कितने ही प्रसिद्ध और विलक्षण युग हो और उनमे विद्यमान विविध और असंख्येय चारु पदार्थ भी हो जो एक रूप मे परस्पर तुल्य है और प्रकारांतर से विसदृश है। ऐसे विस्मयनीय आकार से तुम अवस्थित हो ये कौन विषम आकार है तुम्हारे? बताओ। 3

2824. कळ् अविळ् तामरै-क् कण्
कण्णने। ऍनक्कु ऒन्रु अरुळाय्
उळ्ळदुम् इल्लदुम् आय्
उलप्पु इल्लन आय वियवाय्
वॆळ्ळत् तडम् कडलुळ्
विड नागु अणै मेल् मरुवि
उळ्ळ-प् पल् योहु शॆय्दि
इवै ऍन्न उपायङ्गले! 4

2825. पाशङ्गळ् नीक्कि ऍन्नै
उनक्के अर-क् कॊण्डिट्टु नी
वाश मलर्त् तण तुळाय्
मुडि मायवने! अरुळाय
कायमुम् शीवनुम् आय्
कळिवु आय् प् पिऱप्पु आय् प् पिन्नुम् नी
मायङ्गळ् शॆय्दु वैत्ति
इवै ऍन्न मयक्कुहळे! 5

2826. मयक्का! वामननै!
मदि याम् वण्णम् ऒन्रु अरुळाय
अयप्पु आय-त् तेर्रनुम् आय्
अळल् आय्-क् कुळिर् आय् वियवाय्
वियप्पु आय् वॆन्रिहळ् आय्
विनै आय्-प् पयन् आय् प् पिन्वुम् नी
तुऩक्कु आय नी निन्र आरु
इवै ऍन्न तुयरङ्गळे! 6

2824 मधुस्यंदि और प्रफुल्ल कमलसदृश नयन से युक्त कान्ह! मुझे एक बात बताओ। सत् और असत् हो कर, असंख्येय आत्मवस्तु हो और तद्भिन्न अचेतन वस्तु हो जलपूर्ण विशाल सागर पर विषसर्पशय्या पर सप्रीति शयित हो कर हृदय में नाना प्रकार के रक्षण-योग (अर्थात् रक्षण-चिंतन) करते हो। ये उपाय कौन से है?

[सत्—आत्म वस्तु जिसके स्वरूप में कोई विकार नहीं और जो नित्य कहा जाता है।

असत्—अचेतनपदार्थ जिसके स्वभाव में विविध विकार होते है और जो अनित्य कहलाता है।] 4

2825 सुगंधपुष्पयुक्त शीत तुलसी से अलंकृत किरीटधर मायावी! बताओ तुम। (मोह) पाशों को दूर कर मुझे तुमने अनन्यार्ह अपना दास बना दिया। काय और जीव हो कर, (इनके) विनाश और उत्पत्ति हो। इसके ऊपर तुमने (अविद्या कर्म आदि) माया कार्य कर के मुझे संसार मे रख दिया। ये क्या दुर्ज्ञेय कार्य हैं तुम्हारे. 5

2826 मोहक! वामन! मुझे समीचीन मति (अर्थात् सत्यज्ञान) देने की कृपा करो। विस्मरण और विशद ज्ञान हो कर, उष्ण हो कर और शीत हो कर, विस्मयनीय (विषय) और विस्मय हो कर, विजय हो कर, (पुण्यपापरूप) कर्म हो कर उनका फल भी तुम हो। उसके ऊपर तुम अन्यथा ज्ञान जनक हो। ये हैं तुम्हारे अवस्थित होने के प्रकार। (भले ही ऐसा होने में तुम्हें कोई क्लेश नहीं हो, परंतु लीला हो।) हमें तो ये दुःखजनक हैं। 6

2827. तुयरङ्गळ् शॅय्युम् कण्णा !
शुडर् नीळ् मुडियाय्! अरुळाय्
तुयरम् शॅय् मानङ्गळ् आय्
मदनाहि उहवै हळ् आय्
तुयरम् शॅय् कामङ्गळ् आय्
तुलै आय् निलै आय् नडै आय्
तुयरङ्गळ् शॅय्दु वैत्ति
इवै ऍन्न शुण्डायङ्गळे ! 7

2828. ऍन्न शुण्डायङ्गळाल् निन्र्रिट्टाय्
ऍन्नै आळुम् कण्णा !
इन्नदु ओर् तन्मैयै ऍन्रु उन्नै
यावर्क्कुम् तेर्ररियै
मुन्निय मू उलहुम् अवै आय्
अवर्रै-प् पडैत्तु,
पिन्नुम् उळ्ळाय् ! पुरत्ताय् !
इवै ऍन्न इयर्कैहळे ! ८

2829. ऍन्न इयर्कैहळाल् ऍङ्ङने
निन्र्रिट्टाय् ? ऍन् कण्णा !
तुन्नु कर चरणम् मुदलाह
ऍल्ला उरुप्पुम्
उन्नु शुवै ऑळि ऊरु
ऑलि नार्रम् मुर्रुम् नीये
उन्नै उणर उरिल्
उलप्पु इल्लै नुणुक्कङ्गळे ॥ ९

2827 (कर्मानुरूप) दुःख देनेवाले कान्ह! ज्वलंत दीर्घ किरीटधर! बताओ हमें। दुःख हेतु (जाति विद्यादि जनित) अभिमान हो कर, गर्व हो कर तथा प्रीति हो कर, दुःखकारी विषयकाम हो कर, तथा तुला हो कर (अर्थात् वस्तुओं के तारतम्य ज्ञापक प्रमाण हो कर), स्थिति हो कर और गति हो कर इस प्रकार तुमने दुःखप्रद कार्य ही कर रखे हैं। ये कैसी लीलाएं हैं तुम्हारी, जो हमारे लिए दुःखावह हैं। 7

2828 कैसी लीलाएं करते हुए खड़े हो? मेरे रक्षक कान्ह! "इस प्रकार का है तुम्हारा स्वभाव" ऐसा तरहे समझना पूर्ण ज्ञानियों को भी दुष्कर है। अनादि लोकत्रय तुम हो। इसके ऊपर तुम उसकी सृष्टि कर उनके भीतर हो और बाहर भी हो। (अर्थात् उनके अन्तर्यामी हो और धारक भी हो। ये कैसे विचित्र हैं तुम्हारे स्वभाव। 8

2829 कैसे कैसे (विचित्र) स्वभावों से युक्त हो कर किस प्रकार से तुम खड़े हो (यह दुर्ज्ञेय है) मेरे कान्ह! अंतरंग कर, चरण आदि (शरीर के) सब अवयव, चिंतनीय रस, तेज, स्पर्श शब्द और गंध सब तुम ही हो। यदि तुम्हें समझने का प्रयत्न करें तो तुम्हारे सूक्ष्म स्वभावों का अंत ही नहीं। 9

2830. इल्लै नुणुक्कङ्गळे इदनिल्
पिरिदु ऍन्नुम् वण्णम्
तॊल्लै नन् नूलिल् चॊन्न
उरुवुम् अरुवुम् नीये
अळि त् तुळाय् अलङ्गल
अणि मार्ब! ऍन् अच्चुदने'
वळ्ळदु ओर् वण्णम् शॊन्नाल्
अदुवे उनक्कु आम् वण्णमे॥ 10

2831. आम् वण्णम् इन्नदु ऒन्रु
ऍन्रु अरिवदु अरिय अरियै
आम् वण्णत्ताल् कुरुहूर् च्
चडकोपन् अरिन्दु उरैत्त
आम् वण्ण ऒण् तमिळहळ् इवै
आयिरत्तुळ् इप्-पत्तुम्
आम् वण्णत्ताल् उरैप्पार्
अमैन्दार तमक्कु ऍन्रैक्कुमे॥ 11

2830 (प्रलयदशा में चिद् और अचिद्वस्तुओं को) इस से भी बढ़ कर कोई सूक्ष्मता नहीं"—इस रीति से प्राचीन श्रेष्ठ (वेद आदि) शास्त्रों में उपदिष्ट सूक्ष्म (चित्) और स्थूल (अचित्) तुम ही हो। मनोहर दल तुलसी माला से अलंकृत वक्ष! मेरे अच्युत! अपनी शक्ति के अनुसार कुछ कहते हैं तो क्या उतना ही तुम्हारा प्रकार! (तुम वाङ्मानस अगोचर हो।) 10

2831 'यह है उनके स्वरूप का प्रकार"—ऐसे ज्ञान के अगोचर हरि पर उनके यथार्थ प्रकार न समझ कर कुरुहूर शठकोप के रचित छंदोबद्ध मधुर तमिल की सहस्रगीति में इस दशक का अपनी शक्ति अनुसार जो पठन करते हैं वे सब काल के लिए कृतकृत्य होते हैं। 11

VII. ix. ऍन्ऱैक्कुम् ऍन्नै

2832. ऍन्ऱैक्कुम् ऍन्नै
उय्य-क् कॊण्डु पोहिय
अन्ऱैक्कु अन्ऱु ऍन्नै त्
तन् आक्कि एन्नाल् तनन्नै
इन् तमिळ पाडिय
ईशनै आदियाय्
निन्ऱ ऍन् शोदियै
ऍन् शोल्लि निऱ्पनो ? 1

2833. ऍन् शॊल्लि निऱ्पन् ? ऍन्
इन् उयिर् इन्ऱु ऑन्ऱाय
ऍन् शॊल्लाल् यान् शॊन्न
इन् कवि ऍन्बित्तु
तन् शॊल्लाल् तान् तनन्नै-क
कीर्त्तित्त मायन् ऍन्
मुन् शोल्लुम्
मू उरु आम् मुदल्वने ॥ 2

2834. आम् मुदल्वन् इवन् ऍन्ऱु
तऱ्ऱेऱि ऍन
ना मुदल् वन्दु पुहुन्दु
नल् इन् कवि
तू मुदल् पत्तर्क्कु-त् तान्
तन्नै च् चॊन्न ऍन्
वाय् मुदल् अप्पनै
ऍन्ऱुम मऱप्पनो ? 3

VII. ix. एन्रैक्कुम्

(सब काल के लिए)

2832 सब काल के लिए (मुझे दास ग्रहण कर उससे) मेरा उद्धरण कर के, बीतते दिन-दिन मुझे अपने समान (ज्ञानशक्तिसंपन्न) बना कर, मेरे द्वारा मधुर तमिल (भाषा) से अपने गुण-गान करते ईश को, तथा सब के आदि हो मर खड़े मेरे ज्योतिर्मय विग्रह से युक्त स्वामी के उपकार कैसे वर्णन कर आत्मधारण करूं। 1

2833 मेरी प्रिय आत्मा आज उनके लिए एक (आदरणीय) वस्तु हो गई है। अपने वचनों मे अपना गुण-कीर्तन करते मायी (अर्थात् अद्भुतशक्तियुक्त प्रभु) जो त्रिमूर्ति होते प्रथम है, और जो (मेरे भीतर रह कर) बोलते हैं (जिसका अनुकरण मात्र में करता हूं) प्रकट करते हैं कि अपने शब्दों मे मेरी (अर्थात् शठकोप के) रचित मधुर कविताएं हैं। 2

2834 सर्वप्रथम (सर्वेश्वर) ने मेरे विषय में यह निश्चय कर लिया कि यह मेरे गुणगान करने में सुकुशल है और मेरी जिह्वा पर स्वयं आ कर बैठ कर, परमपावन भक्तों द्वारा भोग्य उत्तम और मधुर कविताएं अपने पर आपने रचीं। इसप्रकार मेरी वाक् की प्रथम प्रवृत्ति ही के हेतु स्वामी को मैं कब भूल जाऊंगा अर्थात् कभी नहीं भूलूंगा। 3

2835. अप्पनै ऍन्रु मरप्पन्
 ऍन् आहिये
तप्पुदल् इन्रि-त् तनै-क्
 कवि तान् शॉल्लि
ऑप्पु इला-त् ती विनैयेनै
 उय्य-क् कॉण्डु
शॅप्पमे शॅय्दु तिरिहिन्र
 शीर् कण्डे ? 4

2736. शीर् कण्डु कॉण्डु
 तिरुन्दु नल् इन् कवि
नेर् पड यान् शॉल्लुम्
 नीर्मै इलामैयिल्
एर्वु इला ऍन्नै-त् तन् आक्कि
 ऍन्नाल् तन्नै
पार् परवु इन् कवि
 पाडुम् परमरे ॥ 5

2837. इन् कवि पाडुम्
 परम कविहळाल
तन् कवि तान् तन्नै-प्
 पाडुवियादु इन्रु
नन्गु वन्दु ऍन्नुडन् आक्कि
 ऍन्नाल् तन्नै
वन् कवि पाडुम् ऍन्
 वैकुन्द नादनॆ ॥ 6

2835 मैं ही हो. कर (अर्थात् मुझे उपकरण के रूप में ले कर) अपने विषयक निर्दुष्ट कविताएं स्वयं जिन्होंने रचीं, तथा अतुल दुष्कर्मी मेरे निस्तार के लिए मुझे स्वीकार कर के मुझ से आर्जवता के साथ बरतते रहते प्रभु की शीलता देख कर भी मैं कैसे उन्हें कभी भूल सकता हूं? 4

2836 कल्याण गुणों का साक्षात्कार कर के काव्य लक्षण लक्षित उत्तम और मधुर कविताए जिसमे सिद्ध हो इस प्रकार की कविता करने की योग्यता से शून्य होने से मै असमान था। मुझे अपने ही समान (सर्वज्ञ) बना कर मेरे द्वारा अपने विषयक जगद्विख्यात मधुर कविताए करते है परम (पुरुष)। (उन्हें मैं कैसे कभी भूल सकता हूं?)। 5

2837 मधुर कविता (रच कर) गाने में कुशल परम कवियों से अपने विषयक कविता को अपनी तृप्ति के लिए आप ही गान कराए बिना, आज भले प्रकार से आ कर मुझे अनन्यार्ह उपकरण बना कर मेरे द्वारा वैकुंठनाथ अपने गुणों का, चारु कविताओं का गान करता है।

[परम कवि—वाल्मीकि, व्यास, पराशर आदि महर्षि जो इतिहास पुराणो द्वारा भगवान् का गुणगान करते है। अथवा भूत सर, बेताल नामक दक्षिण भारत के तमिल-संत जो अपने तमिल प्रबंधों से भगवान् के गुण गाते है।] 6

2838. वैकुन्द नादन् ए॑न्
वल् विने मायुन्दु अर-च्
चे॑य् कुन्दन् तन्ने ए॑न् आक्कि
ए॑न्नाल् तन्ने
वैकुन्दन् अहि-प् पुहळ
वण् तीम् कवि
शे॑य् कुन्दन् तन्ने ए॑न् नाळ्
शिन्दित्तु आर्वनो ।

2839. आर्वनो आळि अम् कै
ए॑म् पिरान् पुहळ्
पार् विण् नीर् मुर्रुम्
कलन्दु परुहिलुम्
एवु इला ए॑न्ने-त् तन् आक्कि
ए॑न्नाल् तन्ने
शीर् पे॑र इन् कवि
शो॑न्न तिरत्तुक्के ।

2840. तिरत्तुक्के तुप्पुरवु आम्
तिरु मालिन् शीर्
इरप्पु ए॑दिर् कालम्
परुहिलुम् आर्वनो
मरप्पु इला ए॑न्ने-त् तन् आक्कि
ए॑न्नाल् तन्ने
उर-प् पल इन् कवि
शो॑न्न उदविक्के ?

2838 वैकुंठनाथ और मेरे प्रबल पापों का अंत करते सत्त्वस्वरूप भगवान् ने मुझे अपने समान (सर्वज्ञ और सर्वशक) बना कर मेरे द्वारा अपनी स्तुति कराई जिससे वह वैकुंठ बना। ऐसी उदार और मधुर (स्तुत्यात्मक) कविता करते पावन प्रभु का (कृतज्ञता के साथ) स्मरण करूंगा। (उसका उपकार बहुत है और मेरा स्मरण करने का काल अत्यल्प है।) इस दशा में मुझे कैसे तृप्ति होगी? [वैकुंठ—अर्थात् दोष रहित।] 7

2839 योग्यताशून्य मुझको अपने समान (सर्वज्ञ-सर्वशक्त) बना कर, मेरे द्वारा मधुर कविताएं रचवाने की भगवान् की सुशीलता को, सुंदर चक्रहस्त मेरे प्रभु की कीर्ति को, भूमि और स्वर्ग मे रहने मनुष्यों के और देवो के वागाद्युपकरण और भोक्तृत्वशक्ति से युक्त हो कर पीने पर भी (अर्थात् भोग करने पर भी) क्या मैं तृप्त हो जाऊंगा? ८

2840 [कहते हैं कि न केवल सब चेतनों की शक्ति को ले कर भगवान् की स्तुति करने से तृप्त नहीं होता, सर्वकाल करने पर भी नहीं।]

(ज्ञानशून्य) मुझे अपने समान विस्मृतिविहीन बना कर मेरे द्वारा स्वविषयक परिपूर्ण अनेक मधुर कविताएं रचवाकर श्रीमन्नारायण ने उपकार किया। संकल्पित कार्य पूरा करने में समर्थ श्रीमन्नारायण के सुगुणों को अतीत तथा अनागत सब काल में पीने पर भी क्या मैं तृप्त हो जाऊंगा? ९

2841. उदवि-क् कैम्मारु ऍन्
उयिर् ऍन्न उऱु ऍण्णिल
अदुवुम् मऱ्‌ऱु आङ्गु अवन्
तनॣनदु ऍन्नाल् तन्नै
पदविय इन् कवि
पाडिय अप्पनुक्कु
ऍदुवुम् ऑन्ऱुम् इल्लै
शॆय्वदु इङ्गुम् अङ्गे ॥ 10

2842. इङ्गुम् अङ्गुम् तिरु माल् अन्ऱि
इन्मै कण्डु
अङ्ङने वण् कुरुहूर्-च्
चडकोपन् शॉल
इङ्ङने शॉन्न ओर
आयिरत्तु इप् पत्तुम्
ऍङ्ङने शॉल्लिलुम्
इन्बम् पयक्कुमे ॥ 11

2841 "उसके कृत उपकार के प्रत्युपकार के रूप में क्या अपनी आत्मा को दे सकता हूं ?" ऐसा विचार कर देखने पर (यह विदित होता है कि) वह आत्मा और उससे संबद्ध अन्य वस्तुएं सब उसी की हैं। मेरे द्वारा अपने विषयक और अपने अनुरूप मधुर कविताएं करते मेरे स्वामी को (प्रत्युपकार के रूप में) देने योग्य वस्तु न यहां है, न वहां। (अर्थात् न संसार में है, न परमधाम में।) 10

2842 "यहां और वहां (अर्थात् साधन दशा में और फलदशा में (दिव्यदंपती) लक्ष्मी और विष्णु के व्यतिरिक्त (रक्षक) कोई भी नहीं"—इस तत्व का साक्षात्कार कर के उसी भाव के अनुसार उदार कुरुहूर के संत शठकोप के उसी भावना के साथ रचित अतुल सहस्र पद्यों में यह दशक, चाहे जैसे भी हो, पढ़ने पर निरतिशयानंद प्रदान करता है।

[जैसे भी हो—उपकारस्मृति सहित हो अथवा अर्थ ज्ञानरहित हो।] 11

VII. x. इन्बम् पयक्क

2843. इन्बम् पयक्क ऍ ळिल् मलर् मादरुम
तानुम् इव् एळ् उलहै
इन्बम् पयक्क इनिदु उडन् वीऱ्रिरुन्दु
आळ् हिन्ऱ ऍङ्गळ् पिरान्
अन्बु उऱु अमन्दु उरैहिन्ऱ अणि पॊ ळिल्
शूळ् तिरुवारन् विळै
अन्बु उऱु अमन्दु वलम् शॆय्दु
कै तोळुम् नाळ्हळुम आहुम् कॊलो ? 1

2844. आहुम् कॊल् ऐयम् ऒन्ऱु इन्ऱि ?
अहल् इडम् मुररवुम् ईर् अडियॆ
आहुम् परिशु निमिन्द तिरु क् कुरळ
अप्पन् अमन्दु उरैयुम्
मा कम् तिहळ् कॊ डि माडङ्गळ् नीडुम्
मदिळ् तिरु वारन् विळै
मा कन्द नीर् कॊण्डु तूवि वलम् शॆय्दु
कै तोळ-क् कूडुम् कॊलो ? 2

2845. कूडुम् कॊल् वैहलुम् गोविन्दनै
मदुशूदनै-क् कोळ् अरियै
आडुम् परवै मिशै-क् कण्डु कै तॊ ळुदु
अन्ऱि अवन् उरैयुम्
पाडुम् पॆरुम् पुहळ् नान् मरै
वेळ्वि ऐन्दु आरु अङ्गम् पन्निनर् वाळ्
नीडु पॊ ळिल् तिरुवारन् विळै तॊ ळ
वायक्कुम् कॊल् निच्चलुमे ? 3

VII. x. इनपम् पयक्क

(जिसमे आनंद प्राप्त हो)

[तिरुवारन् विळै क्षेत्र]

[कहते हैं कि सहस्रगीति-गान सुनने के लिए भगवान् लक्ष्मी के साथ इस क्षेत्र में विराजमान है ।]

2843 जिससे आनद प्राप्त हो इस प्रकार सौंदर्य से सपन्न पद्मजा लक्ष्मी और स्वयं भगवान् मधुर प्रकार से एक साथ विराजमान हो कर सात लोको को आनद प्रदान करते हुए और रक्षा करते हुए जहा सप्रीति वास करते है सुंदर उपवन परिवृत उस तिरुवारन् विळै (क्षेत्र) मे प्रेम कर के सादर परिक्रमा कर के जब हम हाथ जोड़ेंगे क्या ऐसे दिन भी हमे प्राप्त होगे ? 1

2844 क्या निस्सदेह हमे यह प्राप्त होगा ? जिसमे सारा विशाल लोक दो पगों मे ही आ जाए इस प्रकार बढ़ने श्रीवामन भगवान् जहा सप्रीति नित्यवास करते है, जो आकाश तक फैल कर प्रकाशमान ध्वजो से युक्त प्रासादों से तथा उन्नत प्राचीरो से समन्वित है, उस तिरुवारन् विळै (क्षेत्र की वीथियो मे उत्तम गध से सपन्न जल छिड़क कर, नगर की परिक्रमा कर हाथ जोड़ कर वदना करने का सौभाग्य भी क्या हमे प्राप्त होगा ? 2

2845 क्या नित्य ही हमे यह (भाग्य प्राप्त होगा ? गोविन्द मधुसूदन अनिरुद्ध नर) हरि को हर्ष से नर्तित विहग (गरुड़ पर देख कर हाथ जोड़ के वंदना करेगे । उसके अतिरिक्त जहां वह नित्य वास करता है और जहां अधीयमान महाप्रसिद्ध चार वेद, पच (महा) यज्ञ, तथा षट् अग इनके अभ्यास में कुशल सज्जन सप्रीति रहते है, और जो विशाल उपवनों से समन्वित है उस तिरुवारन् विळै (क्षेत्र) में वंदना करने का भाग्य क्या हमे प्राप्त होगा ? 3

2846. वायक्कुम् कों ल् निच्चलुम् एॅप्पों ळुदुम्
मनत्तु ईङ्गु निनैक्क-प् पेॅर
वाय्क्कुम् करुम्बुम् पेरुम शॅन् नेलुम्
वयल् शूळ् तिरुवारन् विळै
वाय्क्कुम् पेॅरुम् पुहळ् मू उलहु ईशन्
वड मदुरै-प् पिरन्द
वाय्क्कुम् मणि निर-क् कण्ण पिरान् तन्
मलर् अडिप् पोदुहळे ? 4

2847. मलर् अडि प् पोदुहळ् एॅन् नेॅञ्जत्तु
एॅप् पॉळुदुम् इरुत्ति वणङ्ग
पलर् अडियार् मुन्वु अरुळिय पाम्बु अणै
अप्पन् अमन्दु उरैयुम्
मलरिल् मणि नेॅडु माडङ्गळ् नीडु
मदिळ तिरु वारन विळै
उलहम् मलि पुहळ् पाड नम् मेल विनै
ओॅनरुम निल्ला केॅडुमे ॥

2848 ओॅन्रुम् निल्ला केॅडुम् मुररवुम् ती विनै
उळ्ळि त् तॉळुमिन् तॉण्डीर् !
अन्रु अङ्गु अमर् वेॅन्रु उरुप्पिणि नङ्गै
अणि नेॅडुम् तोळ् पुणर्दान्
एॅन्रुम् एॅप्पोदुम् एॅन् नेॅञ्जम् तुदिप्प
उळ्ळे इरुक्किन्र पिरान्
निन्र अणि तिरुवारन् विळै एॅन्नुम्
नॅऱ् नहरम् अदुवे ॥

2846 समृद्ध इक्षु और महान् शालिधान खेतो से परिवृत तिरुवारन्-विळै (क्षेत्र) में समृद्ध महाकीर्ति से संपन्न त्रिलोकाधीश, उत्तर मधुरा में अवतरित महार्घ नील रत्नसवर्ण प्रभु कान्ह के विकसित चरण कमलों को नित्य प्रतिक्षण मन में यहीं ध्यान करते रहने का सौभाग्य क्या हमें प्राप्त होगा? 4

2847 विकसित चरण कमलों को मेरे मन में सदैव रख कर अर्थात् ध्यान कर) उसकी वंदना करने के अनुकूल प्रकार से अनेक दासों के सन्निधान में कृपा करते सर्पशायी भगवान् जहां सप्रीति वास करते है, पुष्पो से समृद्ध मणिमय उन्नत प्रासादो तथा प्राचीरो से युक्त तिरुवारन् विळै के जगद्व्यापी कीर्ति के गान करे तो एक भी पाप हम पर नहीं टिकेगा, सब पाप मिट जाएगे। 5

2848 पुरा काल में (राजाओं को) जीत कर कन्या रुक्मिणी की भूषित सुंदर भुजाओं क. जिसने आलिंगन किया, तथा जो मेरे मन में विराजमान प्रभु है जिससे सब काल में प्रतिक्षण मेरा मन उसकी स्तुति करते रहे, उससे अधिष्ठित सुंदर तिरुवारन्-विळै नामक विशाल नगर ही का ध्यान कर प्रणति करो, दासो! दुष्कर्म एक भी नहीं टिकेगा, सब मिट जाएंगे। 6

2849 नीळ् नहरम् अदुवे मलर्-च् चोलैहळ्
शूळ् तिरु वारन् विळै
नीळ् नहरत्तु उरै हिन्र पिरान् नैँडु
माळ् कण्णन् विण्णवर् कोन्
वाण पुरम् पुकक्कु मुक्कण पिरानै त् ।
तोँलैय वैँम् पोहळ् शेय्दु
वाणनै आयिरम् तोळ् तुणित्तान्
शरण् अन्रि मरु ओँन्रु इलमे ॥ 7

2850. 'अनरि मरुरु ओँन्रु इलम् निन् शरणे'
एँनरु अहल् इरुम् पोँय्हैयिन् वाय्
निन्रु तन् नीळ् कळल् एत्तिय आनैयिन
नैँञ्जु इडर् तीर्त्त पिरान्
शेँन्रु अङग् इनिदु उरैहिन्र शैँळुम्
पोँळिल् शूळ् तिरु वारन् विळै
ओँन्रि वलम शेँय्य ओँन्रुमो ? तो विनै
उळ्ळत्तिन् शावु उळवे ॥ 8

2851. तो विनै उळ्ळत्तिन् शावु अल आहि त
तैँळि विशुम्ब् एरल् उरल्
नाविन् उळ्ळुम् उळ्ळत्तु उळ्ळुम अमैन्द
तोँळिलिन् उळ्ळुम् नविन्रु
यावरुम् वन्दु वणङ्गुम् पोँळिल्
तिरु वारन् विळै अदनै
मेवि लम् शेँय्दु कै तोळ-क् कूडुम् कोँल ?
एँन्नुम् एँन् शिन्दनैये । 9

2849 पुष्पोद्यानों से परिवृत तिरुवारन्-विळै नामक नगर ही सर्वश्रेष्ठ है। उस श्रेष्ठ नगर में नित्य वास करते प्रभु सर्वेश्वर नित्यसूरियों के अधीश्वर कान्ह बाण (असुर) के नगर में प्रविष्ट हुए और जिससे घोर युद्ध में त्रिणेत्र भगवान् (रुद्र) भाग खडा हुआ ऐसा युद्ध कर के बाण के सहस्र भुज भी काट डाले। उनके व्यतिरिक्त हमें दूसरी शरण नहीं। (अर्थात् दूसरा प्रापक नहीं। तिरुवारन्विळै के व्यतिरिक्त प्राप्य भी नहीं।) 7

2950 विशाल और गहरे झील में खडे हो कर जो गजेंद्र चिल्लाया कि तुम्हारे व्यतिरिक्त हमें दूसरी कोई शरण नहीं, और जो भगवान् के चरणों का ही ध्यान करता रहा, उसकी मानसिक व्यथा दूर करते उपकारी भगवान स्वयं जा कर जहां सप्रीति निच्चवास करते हैं, तथा जो समृद्ध उपवनों मे परिवृत है, उस तिरुवारन्विळै का आश्रय ले कर उसकी परिक्रमा करने का सौभाग्य भी क्या हमे प्राप्त होगा? (यदि वह भाग्य प्राप्त हो तब दुष्कर्म मन में नहीं टिकेंगे। 8

2851 (मेरे) दुष्कर्म मन में स्थान पा कर न रहें और मैं स्वयंप्रकाश परमधाम चढ़ जाऊं, फिर भी मेरे चित्त का मनोरथ यही है कि जिह्वा में, मन में, तथा तदनुरूप क्रिया मे वांछा कर के सब लोगों से आ कर वंदित उपवनसमन्वित तिरुवारन्विळै को सादर प्राप्त कर उसकी परिक्रमा कर उसकी प्रगति करते रहने का सौभाग्य क्या प्राप्त होगा? 9

2852. शिन्दै मऱ्ऱु ऒॅन्ऱिन् तिऱत्तदु अल्लां त्
तन्मै देव पिरान् अऱियुम्
शिन्दैयिनाल् शॅय्व तान् अऱियादन
मायङ्गळ् ऒॅन्ऱुम् इल्लै
शिन्दैयिनाल् शॊॅल्लिनाल् शॅय्हैयाल्
निल-त् तेवर् कुऴु वणङ्गुम्
शिन्दै महिऴ् तिरुवारन् विळै उऱै
तीर्त्तनुक्कु अऱ्ऱ पिन्ने ॥ 10

2853. 'तीर्त्तनुक्कु अऱ्ऱ पिन् मऱ्ऱु ओर्
शरण् इल्लै' ऍन्ऱु ऍण्णि तीर्त्तनुक्के
तीर्त्त मनत्तनन् आहि-च् चॅळुम्
कुरुहूर्-च् चडकोपन् शॊॅन्न
तीर्त्तङ्गळ् आयिरत्तुळ् इवै पत्तुम्
वल्लार्हळै देवर् वैहल्
तीर्त्तङ्गळे ऍन्ऱु पूशित्तु नल्हि
उरैप्पर तम् देवियर्क्कें ॥ 11

2852 चित्त से, वाक् से, तथा क्रिया से, (अर्थात् त्रिकरणो से) भूदेव गणों से वंदित तथा चित्त को हर्षदायी तिरुवारन्‌विळै के तीर्थ के (अर्थात् परम पावन के) हो कर रहने के अनंतर मेरा चित्त और किसी विषय की कामना नहीं करता, यह देवाधिप जानते है। ऐसी कोई भी माया (अर्थात् वंचन क्रिया) जो चित्त से की जाय नही है, जिसे वह भगवान् नही जानता हो। (वह सर्वज्ञ है। कुछ भी उसको अविदित नहीं।) 10

2853 यह निश्चय कर के कि तीर्थ के ही (अर्थात् परमपावन श्रीमन्नारायण के ही) हो जाने के पश्चात् कोई शरणांतर नही, जिन्होंने अपना मन तीर्थ ही के लिए अर्पित कर दिया, समृद्ध कुरुहूर के उन शठकोप के कथित तीर्थ भूत (परमपवित्र) सहस्रगीति मे इन दस पद्यों के पठन मे जो समर्थ है, नित्य उनकी पूजा कर के देववर्ग अपनी देवियों को सप्रीति बताते है कि ये तीर्थ है (अर्थात् परमपवित्र है।) 11

VIII i. देविमार् आवार्

2854. देविमार् आवार् तिरुमहळ् वूमि एव
मरुरु अमरर् आट् चेॅय्गार्
मेन्रिय उलहम् मूनूरु अवै आटचि
वेण्डु वेण्डु उरुवम् निन् उरुवम्
पावियेन् तन्नै अडुहिन्र कमल क्
कण्णदु ओर् पवळ वाय् मणिये!
आदिये! अमुदे! अलै कडल् कडैन्द
अप्पने! काणुम् आरु अरुळाय्॥ 1

2855. 'काणुम् आरु अरुळाय्' एॅन्रु एॅन्रे
कलङ्गि क् कण्ण नीर् अलमर विनैयेन्
पेणुम् आरु एॅल्लाम् पेणि निन् पेॅयरे
पिदर्रुमारु अरुळ् एॅनक्कु अन्दो
काणुमारु अरुळाय् काकुत्ता! कण्णा!
तोॅण्डनेन् कर्पह-क् कनिये!
पेणुवार् अमुदे! पेॅरिय तण पुनल् शूळ्
पेॅरु निलम् एॅडुत्त पेराळा! 2

2856 एॅडुत्त पेराळन् नन्दगोपन् तन्
इन् उयिर् च चिरुवने! अशोदैक्कु
अडुत्त पेर् इन्ब क् कुल इळम् कळिरे!
अडियनेन् पेॅरिय अम्माने!
कडुत्त पोर् अवुणन् उडल् इरु पिळवा क्
कै उहिर् आण्ड एॅङ् कडले!
अडुत्तदु ओर् उरु आय् इन्रु नी वाराय्
एॅङ्ङनम् तेरुवर उमरे? 3

VIII. i. देविमार् आवार्

(देवियां होती हैं)

2854 (तुम्हारी) देवियां होती है श्रीमहालक्ष्मी और भूमिदेवी। इसके ऊपर आज्ञा पाते ही सेवा करनेवाले हैं अमर (अर्थात् नित्यसूरि)। (तुम्हारे) आश्रय मे रहते लोकत्रय रक्षणीय हैं। जिस जिस रूप की इच्छा है वह तुम्हारा रूप है। मुझ पापी के दुःखद कमलनयन अतुल विद्रुमाधर नीलमणि (सदृश दिव्य रूप)! मेरे प्राण! अमृत! तरंगित सागर का मन्थन करते स्वामी! कृपा करो जिससे मै (तुम्हें) देख सकूं। 1

2855 "कृपा करो जिससे मैं देख सकूं" कहते कहते मैं व्याकुल होता हूं। नयन अश्रुपूर्ण होते हैं। आदर करने के सभी प्रकार से तुम्हारा आदर करता रहता हूं। तुम्हारा नाम ही जपता रहता हूं। क्या यह दशा ही तुम्हारी कृपाप्रसाद है? हाय! जिससे मै देख सकूं ऐसी कृपा करो। हे काकुत्स्थ! हे कान्ह! मुझ दास के कल्प(वृक्ष) फल! प्रेमियों के अमृत! तीन महासागर से परिवृत महापृथिवी का उद्धरण करते महापुरुष 2

2856 अचिन्तित रूप से आगत तुम्हे (अप्राप्त लब्ध निधि की भांति) अपनाते नन्दगोप के प्राणसम प्रिय बालक! स्वयं ही यशोदा के पास जा कर खड़े निरतिशयानन्ददायी कुलीन गजपोत! मुझ दास के (दुर्लभ) महास्वामी! भयंकर युद्धकारी असुर (हिरण्य) के शरीर को दो भागों मे विदीर्ण करने के लिए हस्त नखों का परिचालन करते मेरे सागर! मेरे योग्य एक रूप ले कर आज तुम आते नहीं। (मेरी प्रार्थना अनसुनी करते हो तो) त्वदीय (भक्तजन) कैसे तुम पर विश्वास करेंगे? 3

2857. उमर उहन्दु उहन्द उरुवम् निन् उरुवम्
आहि उन् तनक्कु अन्बर् आनार्
अवर् उहन्दु अमर्न्द शॅय्है उन मायै
अरिवु ऑन्रुम् शङ्किप्पन् विनैयेन्
अमर् अदु पण्णि अहल् इडम् पुडै शूळ्
अडु पडै अविळ्त्त अम्माने!
अमरर् तम् अमुदे! अशुरर्हळ् नञ्जे!
ऍन्नुडै आर् उयिरेयो! 4

2858. आर् उयिरेयो! अहल् इडम् मुळ्दुम्
पडैत्तु इडन्दु उण्डु उमिळ्न्दु अळन्द
पेरुयिरेयो! पॅरिय नीर् पडैत्तु अङ्गु
उरैन्दु अदु कडैन्दु अडैत्तु उडैत्त
शीरियरेयो! मनिशर्क्कुत् तेवर्
पोलत् तेवर्क्कुम् देवावो!
ओरुयिरेयो! उलहङ्गट्कु ऍल्लाम्
उन्नै नान् ऍङ्गु वन्दु उरुहो? 5

2859 ऍङ्गु वन्दु उरुहो? ऍन्नै आळ्वाने!
एळ् उलहङ्गळुम् नीये
अङ्गु अवर्क्कु अमैन्त दॅय्वमुम् नीये
अवर्रवै करुममुम् नीये
पॉङ्गिय पुरम्बाल् पॉरुळ् उळवेलुम्
अवैयुमो नी इननै आनाल्
मङ्गिय अरुवाम् नेर्प्पमुम् नीये
वान् पुलन् इरन्ददुम् नीये॥ 6

2857 प्रसिद्ध (भारत) युद्ध कर के विस्तीर्ण भूमि भर में व्याप्त हननशील (शत्रु) सेना के नाशकारी स्वामी! अमरो के अमृत! असुरों के विष! मेरे प्रिय प्राण! तुम्हारे भक्तों को तुम्हारा जो जो रूप आनंदजनक है, वह वह रूप ले कर तुम आते हो। तुम्हारे प्रेमियों को तुम्हारी जो क्रियाए संतोषजनक और अनुरूप है वे ही अद्भुत क्रियाएं तुम करते हो। (यद्यपि तुम इस प्रकार भक्त वत्सल हो, फिर भी मेरी प्रार्थना सुन कर मेरे पास नही आते हो। अतः तुम्हारे भक्तवात्सल्य विषयक) मेरा जो ज्ञान है उस पर मुझे शका उत्पन्न होती है। (अर्थात् मुझे संदेह होता है कि मेरा ज्ञान ठीक है या नही। तुम मे वह गुण नही। मै ने गलती से समझा कि वह गुण तुम मे है।) 4

2858 प्रिय प्राण! कृत्स्न विशाल भूमि की सृष्टि और उद्धरण, निगरण और उद्गिरण तथा विक्रमण करते सर्वोत्कृष्ट आत्मा! (अर्थात् सर्वजगत्प्राण!) महासागर की सृष्टि कर के, उस पर शयन कर के, उसका मन्थन कर के, उस पर सेतु बांध कर अत मे उस सेतु को तोड देते गुणवान्! मनुष्यो की अपेक्षा देव वर्ग के उत्कृष्ट होने की भांति देवों की अपेक्षा उत्कृष्ट होते देव! सब लोकों के अद्वितीय आत्मा! (अपने प्रयत्न से) मै कैसे तुम्हे प्राप्त कर सकता हूं? 5

2859 मेरे रक्षक! सप्त लोक भी तुम हो। उन लोक-वासियों की पूजा प्राप्त करने के लिये नियुक्त देवता वर्ग भी तुम हो। उन देवताओ के विभिन्न कर्म भी तुम हो। एक से एक बढ कर इस अंड के बाहर (महदादि) पदार्थ है तो वे भी तुम हो। कार्याकार के विनाश के बाद सूक्ष्म रूप मे रहती प्रकृति भी तुम हो। उस से उत्कृष्ट इंद्रियागोचर आत्मवस्तु भी तुम हो। यदि तुम इस प्रकार अवस्थित हो तो (अर्थात् सर्वान्तर्यामी हो तो) मै कैसे आ कर तुम्हें प्राप्त करू? 6

2860. इरन्ददुम् नीयै ऍदिन्ददुम् नीयै
निहळ्वदो नी इन्ने आनाल्
शिरन्द निन् तन्मै अदु इदु उदु ऍन्नरु
अरिवु ऒन्नरुम् शङ्किप्पन् विनैयेन्
करन्द पाल् नॆय्यॆ! नॆय्यिन् इन् शुवैये!
कडलिन् उळ् अमुदमे! अमुदिल्
पिरन्द इन् शुवैये! शुवैयदु पयने!
पिन्नै तोळ् मणन्द पेराया! 7

2861. मणन्द पेर् आया! मायत्ताल् मुळ्दुम्
वल् विनैयेनै ईर्हिन्र
गुणङ्गळै उडैयाय्! अशुरर् वन् कैयर्
कूर्रमे! कॊडिय पुळ् उयर्त्ताय्!
पणङ्गळ् आयिरमुम् उडैय पैन्-नाहप्
पळ्ळियाय्! पार् कडल् शेर्प्पा!
वणङ्गुम् अरु अरियेन् मनमुम् वाचकमुम्
शॆय्हैयुम् नी ताने॥ ८

2862. यानुम् नी ताने आवदो मॆय्ये
अरु नरहु अवैयुम् नी आनाल्
वान् उयर् इन्बम् ऍय्दिल् ऍन्? मर्रै
नरहमे ऍय्दिल् ऍन्? ऍनिलुम्
यानुम नी तानाय् त् तॆळि तोरुम् नन्रुम्
अञ्जुवन् नरहम् नान् अडैदल्
वान् उयर् इन्बम् मन्नि वीररिरुन्दाय्!
अरुळ् निन् ताळ्हळै ऍनक्के॥ 9

2860 भूतकाल भी तुम हो। भविष्यकाल भी तुम हो। वर्तमानकाल तुम हो। (अर्थात् कालत्रय पदार्थ तुम हो।) यदि यह तत्त्व हो तो (दूरस्थ पदार्थ) वह (समीपस्थ पदार्थ) यह, (अदूरविप्रकृष्ट) यह—सब तुम्हारे सर्वोत्कृष्ट स्वभाव हैं। (मुझ पर तुम्हारे कृपा नहीं करने से) तुम्हारे विषयक मेरा जो ज्ञान है उसमे भी शंका होने लगती है मुझ पापी को! हे दुहे दूध! उसके सारभूत घृत! घृत के मधुर रस! समुद्र से जात अमृत! अमृत से उत्पन्न मधुर रस! उस रस से निकलते फल! नप्पिन्नै की भुजाओं का आलिंगन करते तद्वल्लभ! महाप्रभाव से युक्त! (श्रीकृष्ण)! 7

2861 प्रेम से (नप्पिन्नै से) विवाह करते महा गोप! (श्रीकृष्ण)! मुझ प्रबल पापी को दुःख ही देते गुणो से संपन्न! प्रबल हस्त असुरो की मृत्यु! भयावह गरुड को ध्वज मे रखते (भगवान्)! विकसित सहस्रफण कोमल नागपर शयित (स्वामी)! क्षीरसागरशायी! मेरा मन और वाक् और क्रिया और मै भी तुम ही हो। (इतना अस्वतंत्र) मै तुम्हारी वदना करने का प्रकार नहीं जानता। 8

2862 मै भी तुम ही हो—यह सत्य है। वैसे दुस्सह नरक (अर्थात् नरकतुल्य संसार) में विद्यमान पदार्थ भी तुम हो। तत्त्व यह है तो परमधाम का निरतिशय आनंद प्राप्त करने में क्या उत्कर्ष है? उससे भिन्न नरक (अर्थात् नरकतुल्य संसार) को प्राप्त करने से क्या हानि है? फिर भी जब मुझे यह विशद ज्ञान होता है कि मैं भी तुम ही हो, नरक (तुल्य संसार) प्राप्त करने से डरता हूं। (क्यो कि संसार विपरीत ज्ञानजनक है।) परमधाम में निरतिशयानंद से युक्त हो कर विराजमान (प्रभु)! अपने चरण मुझे प्रदान करने की कृपा करो। 9

2863. ताळ्हळै ऍनक्के तलै-त्-तलै-च् चिरप्प-त्
तन्द पेर् उदवि-क् कैम्मारा
तोळ्हळै आर-त् तळुवि ऍन् उयिरै
अर विलै शॆय्दनन् शोदी '
तोळ्हळ् आयिरत्ताय्! मुडिहळ् आयिरत्ताय्!
तुणै मलर्-क् कणगळ् आयिरत्ताय्!
ताळ्हळ् आयिरत्ताय्! पेर्हळ् आयिरत्ताय्!
तमियनेन् पॆरिय अप्पने! 10

2864. पॆरिय अप्पनै-प् पिरमन् अप्पनै
उरुत्तिरन् अप्पनै मुनिवर्क्कु
उरिय अप्पनै अमरर् अप्पनै
उलहुक्कु ओर् तनि अप्पन् तन्नै
पॆरिय वण् कुरुहूर् वण् शडकोपन्
पेणिन आयिरत्तुळ्ळुम्
उरिय शॊल् मालै इवैयुम् पत्तु इवर्राल्
उय्यलाम् तॊण्डीर् नङ्गट्के ॥ 11

2863 परमात्मा ने अपने चरणों को उत्तरोत्तर उत्कृष्ट रीति से मुझे प्रदान किया। इस महोपकार के प्रत्युपकार के रूप में मैं ने अपनी आत्मा को भुजाओं के आलिगन से संमानित कर तुम्हारे हाथ में विक्रय कर दिया जिससे वह अनन्यार्ह रहे। ज्योति! सहस्रभुज! सहस्रशीर्ष! सहस्रयुगलकमलाक्ष! सहस्रपाद! सहस्रनाम! असहाय मेरे महोपकारक! 10

2864 जो महोपकारी है, जो ब्रह्मा का जनक और रुद्र का जनक है, मुनियों का समुचित जनक और अमरों का जनक है, तथा लोकों का अद्वितीय जनक है, उस पर विशाल और सुंदर कुरुहूर के उदार शठकोप के सादर कथित सहस्रगीति में (भगवद्वैभव के) समुचित पद्य हैं ये दस पद्य। दासजनो! इनके पठन से हमारा निस्तार होगा। 11

VIII. ii. नङ्गळ् वरि वळै

2865. नङ्गळ् वरि वळै आयङ्गाळो!
नम्मुडै एदलर् मुन्बु नाणि
नुङ्गट्कु यान् ऑन्रु उरैक्कु मार्रम्
नोक्कुहिन्रेन् ऍङ्गुम् काण माट्टेन्
शङ्गम् शरिन्दन शाय् इळन्देन्
तड मुलै पॉन् निरमाय् त् तळर्न्देन्
वॆङ् कण् परवैयिन् पाहन् ऍङ्कोन्
वॆङ्गड वाणनै वेण्डि-च् चॆन्रे॥ 1

2866. वेण्डि च् चॆन्रु ऑन्रु पॆरु किर्पारिल्
ऍन्नुडै त् तोळियर् नुङ्गट्केलुम्
ईण्डु इदु उरैक्कुम् पडियै अन्दो!
काण्गिन्रिलेन् इडराट्टियेन् नान्
काण् तहु तामरै-क् कण्णन् कळ्वन्
विण्णवर् कान् नङ्गळ् कोनै-क् कण्डाल
ईण्डिय शङ्गुम् निरैवुम् कॉळ्वान्
ऍत्तनै कालम् इळैक्किन्रेनॆ॥ 2

2867. कालम् इळैक्किल अल्लाल् विनैयेन्
नान् इळैक्किन्रिलन् कण्डु कॉण्मिन्
ञालम् अरिय प् पळि शुमन्देन्
नन् नुदलीर्! इनि नाणि-त् तान् ऍन्?
नील मलर् नॆडुम् शोदि शूळ्न्द
नीण्ड मुहिल् वण्णन् कण्णन् कॉण्ड
कोल् वळैयॊडु मामै कॉळ्वान्
ऍत्तनै कालमुम् कूड-च् चॆन्रे? 3

VIII. ii. नम्नळ् वरिवळै

(हमारी सुंदरवलया)

(तिरु-क्-कुळन्दै क्षेत्र)

[विरहिणी परांकुश नायिका अपनी सखियों से कहती है कि मैं नायक के पास चली जाऊंगी। यहां किसी पर मैं आसक्त नहीं।]

2865 सुंदरवलया हमारी सखियो! (मुझ से जिन्हें सहानुभूति नहीं, अतः) जो हमारे प्रतिकूल होती है, उनके आगे लज्जित हूं और तुम से अपनी दशा कहने के लिए वचन ढूंढती हूं, एकवचन भी नही देख पाती। क्रूर नयन विहंग (गरुड) पर आरूढ मेरे स्वामी वेंकट (गिरि) के ईश्वर की कामना करते हुए मैं चली। उसकी अप्राप्ति से मेरे शंख (के बनाए कंकण) खिसक गए। (शरीर की) छाया (अर्थात् कांति) छूट गई। पीन पयोधर पीले पड गए। मै विह्वल हो गई।

[तिरु-क्-कुळन्दै—आजकल पेरुङ्गुळम् नाम से प्रसिद्ध है। संत के जन्मस्थान कुरुहूर के पास है।] 1

2866 मेरी सखियो! मेरे पास आ कर अपना अभीष्ट प्राप्त करने का अधिकार तुम लोगों को ही है। ऐसी प्यारी सखियो से भी अपनी दशा बताने को कोई शब्द अब दुःखिनी मै देख नहीं पाती। दर्शन करने योग्य मनोहर कमलनयन चोर नित्यसूरियों के अधिप मेरे नायक को देखूं तो उनके पास जुडे शंख (के बने) अपने वलय और पूर्णता लेना चाहती हूं। कितने ही दीर्घ काल से मै यह चाहती रहती हूं। परंतु न प्राप्त करने से विह्वल होती ही रहती हूं। 2

2867 नील विस्तृत और अपरिच्छेद्य ज्योति से परिवृत महामेघवर्ण कान्ह द्वारा अपहृत अपने सुंदर वलयों के साथ शरीर शोभा को भी ले लेने के लिए कितने ही दीर्घ काल तक उनके साथ ही चलती रही। इससे जगद्विदित अपवाद की भागिनी ही रही (कि स्त्रियों की स्वाभाविक नम्रता छोड कर यह अभिसारिका बन कर नायक के पीछे चलने लगी।) सुंदरललाट सखियो! इसके अनंतर लज्जित होने से ही क्या लाभ है? कदाचित् (नित्य कहलाता) काल ही का अंत हो जाय, परंतु अभीष्ट प्राप्त किए बिना मैं इसे छोडूंगी नहीं। तुम ही देख लो। 3

2868. कुड-च् चॅन्रेन् इनि एॅन् कॉड्डुक्केन् ?
कोल् वळै नॅञ्ज त् तॉडकम् एॅल्लाम्
पाडर्रोळिय इळन्दु वैहळ्
पल् वळैयार् मुन् परिशु अळिन्देन्
माड-क् कॉडि मदिळ् तॅन् कुळन्दै
वण् कुड पाल् निन्र माय-क् कूत्तन्
आडल् परवै उयर्त्त वॅल् पोर्
आळि वलवनै आदरित्ते ॥ 4

2869. आळि वलवनै आदरिप्पुम्
आङ्गु अवन् नम्मिल् वरवुम् एॅल्लाम्
तोळियर्हाळ् ! नम्मुडैयमे तान् ?
शॉल्लुवदो इङ्गु अरियदु तान्
ऊळि तोरु ऊळि ओॅरुवन् आह
नन्गु उणर्वाक्कुम् उणरल् आहा
शूळल् उडैय शुडर् कॉळ् आदि त्
तॉल्लै अम् शोदि तिनैक्कुङ् काले ॥ 5

2870. तॉल्लै अम् शोदि निनैक्कुम् काल् एॅन्
शॉल् अळवु अन्रु इमैयोर् तमक्कुम्
एॅल्लै इल्लादन कूळ्प्पु-च् चॅय्युम्
अत्-तिरम् निर्क एॅम् मामै कॉण्डान्
अल्लि मलर्-त् तण् तुळायुम् तारान्
आर्क्कु इड्हो ? इनि-प् पूशल् शॉल्लीर्
वल्लि वळ वयल् शूळ् कुडन्दै
मा मलर-क कण् वळर्हिन्र माले ॥ 6

2868 प्रासादों से अलंकृत और ध्वजशोभित प्राचीरों से परिवृत दक्खिनी कुळंदै (क्षेत्र) के सुंदर पश्चिम भाग में खड़े मायी नटवर का, जो नृत्यत् गरुड़ पर आरूढ है और युद्ध में विजयशील चक्र दक्षिण हस्त में धरता है, अत्यादर कर के, उससे मिलने निकली। सुंदर वलय, हृदय, आदि सब मेरा संबंध छोड़ कर हट गए हैं और अनेक कंकणधारिणी स्त्रियों के सामने बहुत पहले ही से मैं ने अपना सत्त्वभाव खो दिया। इसके अनंतर और क्या है मेरे पास देने को? 4

2869 विचार कर देखें तो तेजोविशिष्ट, आदि कारण, और नित्य मनोहर ज्योति से युक्त भगवान् की विचित्र चेष्टाएं ऐसी हैं कि सम्यक् प्रकार से जानने में समर्थ ज्ञानियो को भी युग युग से यह समझना अशक्य रहा कि उसका रूप ऐसा है। फिर भी, सखियो! दक्षिण हस्त से धृतचक्र भगवान् का आदर करना (अर्थात् प्राप्त करने की आशा करना) तथा उसका हमारे यहां उपस्थित हो जाना- यह सब क्या अब हम से ही हो रहा है। (अनादि काल से यह चलता रहता है।) ('वह दुर्लभ है और उसकी आशा मत करो') ऐसा बोलना सुलभ हो तो मनमाना बोलना उचित है। 5

2870 विचार कर देखूं तो नित्य मनोहर ज्योतिर्मय (प्रभु) मेरे वचनों को अगोचर है। (ब्रह्मादि) देवों को भी दुर्ज्ञेय है और अपरंत संशय जनक है। ऐसी शक्ति के रहते, उसने मेरी कांति हर ली। विकसित दल शीत तुलसी भी नहीं देता। इस दशा में किसके पास जा कर क्रंदन करूं? तुम ही बताओ। मनोज्ञ कमलनयन प्रेमी सुंदरलतापूर्ण उपवनों से तथा समृद्ध खेतों से परिवृत कुडन्दै (क्षेत्र) में शयित है। 6

2871. 'माल् अरि केशवन् नारणन् शी
मादवन् गोविन्दन् वैकुन्दन्' ऍन्ऱु
ओलम् इड ऍन्नै-प् पणि विट्टिट्टु
ऒन्ऱुम् उरुवुम् शुवडुम् काट्टान्
एल मलर्-क् कुळल् अन्नैमीर्हाळ् !
ऍन्नुडै त् तोळियर्हाळ् ! ऍन् शॅय्हेन् ?
कालम् पल शॅन्ऱुम् काण्बदु आणै
उङ्गळोडु ऍङ्गळ् इडैयिल्लैये ॥ 7

2872. इडै इल्लै यान् वळर्त्त किळिहाळ् !
पूवैहळ्काळ् ! कुयिल्हाळ् ! मयिल्हाळ् !
उडैय नम् मामैयुम् शङ्गुम् नॅञ्जुम्
ऒन्ऱुम् ऒळिय ऒट्टादु कॊण्डान्
अडैयुम् वैकुन्दमुम् पार कडलुम्
अञ्जन वॅऱ्पुम् अवै नणिय
कडै अर-प् पाशङ्गळ् विट्ट पिन्नै
अनरि अवन अवै काण कॊडाने ॥ 8

2373. काण् कॊडुप्पान् अल्लन् आक्कम् तन्नै-क्
कै शॅय् अप्पालदु ओर् मायम् तन्नाल
माण् कुरळ् कोल वडिवु काटटि
मण्णुम् विण्णुम् निरैय मलर्न्द
शेण् शुडर्-त् तोळ्हळ् पल तळैत्त
देव पिरार्कु ऍन् निरैविनोडु
नाण् कॊडुत्तेन् इनि ऍन् कॊडुक्केन् ?
ऍन्नुडै नन्नुदल् नङ्गैमीर्हाळ् ! 9

2871 "हे प्रेमी! हरि! केशव! नारायण! श्रीमाधव! गोविंद! वैकुंठ!" कह कह कर जिससे आक्रंदन करूं ऐसा मुझे बना कर वह निकल गया। न तो अपना रूप ही कुछ दिखाता, न चिह्न। सुगंधित पुष्पालंकृतकुंतल माताओ! मेरी प्रिय सखियो! मैं क्या करूं? भले ही दीर्घकाल बीत जाय, उसको देख ही लूंगी, उसपर मेरी सौगंध! (यदि तुम प्रतिरोध करने का प्रयत्न करती हो तो) तुम से हमारा कोई संबंध नहीं। 7

2872 कोई संग नही मेरा (तुम सब से), मेरे पालित शुको शारिकाओ! कोकिलो! मयूरो! हमारी कांति, शंख वलय) और हृदय सब को एक भी न छोड कर निश्शेष उसने हर लिया। उसके समाश्रित वैकुंठ और क्षीरसागर और अंजनाद्रि तो हमारे समीपस्थ है। (इस प्रश्न पर कि तब जा कर उनका अनुभव क्यों नहीं करती उत्तर देती है नायिका)—वासनासहित सब वस्तुओ के पाश छूटे बिना वह उन्हें (अर्थात् अपने स्थान) हमको दिखाएगा नही। 8

2873 अपने को दिखाता नही वह किसी को (अर्थात् गर्विष्ठों को)। अपनी अद्भुत शक्ति से हस्तनिर्माणागोचर अद्वितीय ब्रह्मचारी वामन सुंदर रूप दिखा कर (उत्तरक्षण में) कृत्स्न भूमि और आकाशव्यापी विपुल रूप जिसने ले लिया; अभ्यधिक ज्योति से युक्त अनेक भुजाओं से जो समन्वित है, जो देवों के उपकारी प्रभु हैं, उनको मैं ने अपनी (सर्वस्व) नम्रता और लज्जा दे दी। इसके अनंतर मै और क्या दूं? चारुललाट मेरी गुणवती सखियो! 9

2874. एॅन्नुडै नन्नुदल् नङ्गैमीर्हाळ् !
  यान् इनि-च् चेॅय्यदु एॅन् ? एॅन् नॅञ्जु एॅन्नै
'निन्निडैयन अल्लेन्' एॅन्रु नीङ्गि
  नेमियुम् शङ्गुम् इरु कै-क् कॉण्डु
पन् नॅडुम् शूळ् शुडर् आयिर्रोडु
  पान् मदि एन्दि ओर् कोल नील
नन् नेडुम् कुन्रम् वरुवदु ऑप्पान्
  नाण् मलर्-प् पादम् अडैन्ददुवे ॥ 10

2875. पादम् अडैवदन् पाशत्ताले
  मर्रु अवन् पाशङ्गळ् मुर्र विट्टु
कोदु इल् पुहळ्-क कण्णन् तन् अडि मेल्
  वण् कुरुहूर्-च् चडकोपन् शॉन्न
तीदु इल् अन्दादि ओर् आयिरत्तुळ्
  इवैयुम् ओर् पत्तु इशैयोडुम् वल्लार्
आदुम् ओर् तीदु इलर् आहि इङ्गुम्
  अङ्गुम् एॅल्लाम् अमैवार्हळ् तामे ॥ 11

2874 चारु ललाटयुत मेरी गुणवती सखियो! इसके अनंतर मैं क्या कर सकती हूं? (बताओ)। मेरा हृदय मुझे से यह कह कर कि आगे मैं तेरा उपकरण नहीं रहूंगा, निकल गया और उस नायक के तरुण कमल चरण प्राप्त कर लिया जो नेमि (अर्थात् चक्र) और शंख दो हाथों में धर कर ऐसे आता है मानो एक चारु नील भव्य उन्नत गिरि, जो सर्वत्र व्याप्त ज्वलंत ज्योति मे परिवृत सूर्य के साथ क्षीर सम (धवल) चंद्र को धर कर चला आता हो। 10

2875 चरण-प्राप्ति के पाश से (अर्थात् इच्छा से) अन्य प्रबल पाश सब निश्शेष तज कर, अनवद्य विख्यात गुण प्रभु कान्ह के चरण पर उदार कुरुहूर के शठकोप के रचित अनवद्य अन्त्यादि सहस्रगीति में विलक्षण इस दशक के पद्यों के संगीत के साथ गाने में जो समर्थ है, वे निरस्तसमस्तदुःख हो कर यहां और वहां (अर्थात् इस लोक में और परलोक में) सर्वप्रकार परिपूर्ण होते हैं। 11

VIII. iii. अङ्गुम् इङ्गुम्

2876. अङ्गुम् इङ्गुम् वानवर्
तानवर् यावरुम्
ऍङ्गुम् इनैयै ऍन्रु उन्नै
अरिय किलादु अलऱ्ऱि
अङ्गम् शेरुम् पूमहळ्
मण् महळ् आय्महळ
शङ्गु शक्कर-क् कैयवन्
ऍन्बर् शरणमे ॥ 1

2877. शरणम् आहिय नान् मरै
नूल्हळुम् शारादे
मरणम् तोऱ्रम् वान् पिणि
मूप्पु ऍन्ऱु इवै मायत्तोम्
करण-प् पल् पडै पऱ्ऱु अर
ओडुम् कनल् आळि
अरण-त् तिण् पडै एन्दिय
ईशऱ्कु आळ् आये ॥ 2

2878. आळुम् आळार् आळियुम्
शङ्गुम् शुमप्पार् ताम्
वाळुम् विल्लुम् कॉण्डु
पिन् शॅल्वार् मऱ्ऱु इल्लै
ताळुम् तोळुम् कैहळै आर-त्
तॊळ-क् काणेन्
नाळुम् नाळुम् नाडुवन्
अडियेन् ञालत्ते ॥ 3

VIII. iii. अङ्गुम् इङ्गम्

(वहां और यहां)

[श्रीशठकोप का सिद्धांत है कि परमात्मा को ऐश्वर्यआदि पुरुषार्थों का साधन न बना कर हमे उसकी सेवा पर ध्यान देना चाहिए।]

2876 वहा यहां और सर्वत्र ही (अर्थात् उपरितन स्वर्गादि लोक में, भूलोक में तथा अधस्तन पातालादि लोकों में सर्वत्र) देव, दानव तथा (मनुष्य आदि) सब जानते नहीं कि तुम्हारे स्वभाव का प्रकार ऐसा है। वे क्रंदन कर कहते हैं कि भगवान् हमारी शरण (अर्थात् साधन) है जो (वक्षस्थल) अग समाश्रित पद्मजा (लक्ष्मी) भूमि देवी और गोपकन्या नीला) का वल्लभ है और शखचक्रपाणि है। (परमप्राप्य सर्वेश्वर का लोग क्षुद्र ऐश्वर्य का साधन मानते है।) 1

2877 [भगवान् को कैवल्य का साधन बनाने वालो पर अपनी अप्रसन्नता प्रकट करते है।]

(ऐश्वर्यात्मक क्षुद्र पुरुषार्थ के इच्छुकों की) शरण अर्थात् उपायभूत चार वेद शास्त्रो का आश्रय न ले कर, हम सर्वेश्वर के किंकर बने और मरण और जन्म, महाव्याधि और जरा (आदि षट् भावविकारो) का अंत कर दिया - सर्वेश्वर, जो ज्वलित चक्रात्मक क्षेमकर और दृढ आयुध को धारण करता है, और जिसके चक्र के दर्शन से करण-युक्त (अर्थात् युद्धोपकरणा मे युक्त) असंख्य निःशेष शत्रुसेना भाग जाती है।

[ऐश्वर्य प्राप्ति के उपदेशक वेदभाग का निरादर कर के मोक्षसाधन का उपदेश देते वेदांत का आश्रय ले कर भी भगवत्प्राप्ति का लक्ष्य छोड़ कर भगवान् से केवलात्मानुभव रूप कैवल्य की वांछा करने वालों का उल्लेख है इस पद्य मे।] 2

2878 भगवान् किसी परिजन को (अपनी सेवा करने की) आज्ञा नहीं देते। चक्र और शंख आप ही ढोते हैं। खड्ग और धनुष को ले कर अनुगमन करने वाला कोई नही (जब श्रीरामचद्र दण्डकारण्य में राक्षसो के विरुद्ध युद्ध करने निकले)। जिससे हस्त शून्य हों इस प्रकार उनके चरणों और भुजाओं की प्रणति नहीं कर पाया। दिन-दिन दास मै उनकी परिचर्या की वांछा करता ही रहता हूं। 3

2879. आलम् पोनहम् पर्रि
ओर् मुर्रा उरु आहि
आलम् पेर् इलै अन्न वशम्
शॅय्युम् अम्माने !
कालम् पेर्वदु ओर् कार् इरुळ्
ऊळि ऑत्तु उळ्दु आल् ! उन्
कोलम् कार् ऍळ्ळिल् काणल् उर्रु
आळुम् कॉडियेर्के ॥ 4

2880. कॉडि आर् माड-क् कोळूर्
अहत्तुम् पुळिङ्गुडियुम्
मडियादु इन्ने नी तुयिल्
मेवि महिळ्न्ददु तान्
अडियार् अल्लर् तविर्त्त
अशैनो ? अन्रेल् इप्
पडि तान् नीण्ड ताविय
अशैवो ? पणियाये ॥ 5

2881. पणिया अमरर् पणिवुम्
पण्बुम् तामे आम्
अणि आर् आळियुम् शङ्गमुम्
एन्दुम् अवर् काण्मिन्
तणिया वॅन् नोय् उलहिल्
तविर्प्पान् तिरु नील
मणि आर् मेनियोडु ऍन्
मनम् शूळ वरुवारे ॥ 6

2879 पृथिवी को अन्न के समान निगल कर, एक मुग्ध शिशु बन कर बट वृक्ष के महापर्ण पर अन्नवशीकरणार्थ शयित स्वामी! कालमेघ सदृश तुम्हारा सुंदर रूप देखने की आशा कर के दुःखार्णव में मग्न मुझ दास को क्षण क्षण से बीतता काल अद्वितीय गाढांधकार से व्याप्त कल्प के समान है—हाय! 4

2880 (तिरुक्कोळूर् और पुळिङ्गुडि क्षेत्र)

ध्वजाओ से अलंकृत तिरुक्कोळूर (क्षेत्र) के भीतर तथा पुळिङ्गुडि (क्षेत्र) में बिना करवट बदले इस प्रकार तुम निद्राप्रिय हो कर सुख भोगते हो। क्या दासो का दुख दूर करने से जनित परिश्रम के कारण है? अथवा इस विशाल पृथिवी को (त्रिविक्रमावतार में) वर्धित हो कर मापने से जनित परिश्रम के कारण है? बताओ। 5

2881 (दूसरो के आगे) कभी सिर नहीं नवाते अमरो की (अर्थात् नित्यसूरियो की) प्रणति तथा (प्रेम) स्वभाव का अद्वितीय लक्ष्य जो होता है, भूषण तुल्य चक्र और शंखधर प्रभु, देखो, इस लोक में अक्षय्य व्याधि मिटाने के लिए सुंदर *नीलमणि तुल्य दर्शनीय विग्रह के साथ आते हैं जिसे देख कर मेरा मन चकित* होता है। 6

2882. वरुवार् शॆल्वार् वण्
परिशारत्तु इरुन्द ऎन्
तिरुवाळ् मार्बर्कु ऎन्
तिरम् शॊल्लार् शॆय्वदु ऎन् ?
'उरु आर् शक्करम शङ्गु
शुमन्दु इङ्गु उम्मोडु
ऒरु पाडु उळल्वान्
ओर् अडियानुम उळन' ऎन्रे॥ 7

2883. ऎन्रे ऎन्नै उन् एर् आर
कोल त् तिरुन्दडि-क् कोळ
निन्रे आट् चेय्य नी कोण्डु
अरुळ निनैप्पदु तान्
कुन्रु एळ् पार् एळ् शूळ् कडल्
ञालम् मुळ्ळु एळुम्
निन्रे ताविय नीळ् कळल्
आळि-त् तिरुमाले ! 8

2884. तिरुमाल् ! नान् मुहन् शॆम्
शडैयान् ऎन्रु इवर्हळ् ऎम्
पॆरुमान् तन्मैयै यार
अरिहिर्पार् ? पेशि ऎन् ?
'ऒरु मा मुदल्वा ! ऊळि-प् पिरान्
ऎन्नै आळ् उडै
करु मा मेनियन्' ऎन्बन्
ऎन् कादल् कलक्कवे॥ 9

2482 [श्रीवण्-परिचार-क्षेत्र]

(अपने अपने काम से) आवागमन करते लोग वण्-परिचार (क्षेत्र) में विराजमान मेरे श्रीसमालिंगित वक्ष प्रभु से मेरे विषय में यह नहीं बताते कि तुम्हारा रूपवान् चक्र और शंख ढोते हुए तुम्हारे संग चलने में तत्पर एक दास है। मै क्या करूं ?

[आवागमन करते लोग –संत समझते हैं कि वण्परिचार क्षेत्र जानेवाले लोग वहां के भगवान् को उनकी दशा सुनाने जाते हैं और वहा से आने वाले मनुष्य संत को भगवान् की आज्ञा से वहाँ ले जाने के लिए आते है।] 7

2483 (हे भगवान् !) दर्शनीयतम भूषणो से भूषित अपने पादमूल मे स्थिर खडा हो कर कैंकर्य करने के लिए मुझे स्वीकार करने का सकल्प करने की कृपा कब करोगे ? सप्त कुलाचल और सप्त द्वीप को घेरते सप्त सागर और सप्त जगत् सब को एक ही स्थान में खडे हो कर बढ़ाए दीर्घ चरण से समन्वित और किरीट से भूषित श्रीमन्नारायण ! 8

2484 श्रीमन्नारायण ! चतर्मुख (ब्रह्म), अरुण जटाधर (रुद्र) आदि बड़े देवता भी क्या मेरे स्वामी तुम्हारी महिमा जानने में समर्थ है ? इसको बताने से क्या प्रयोजन है ? अद्वितीय परमकारण (भगवान्) ! युगप्रवर्तक ! मुझे दास स्वीकार करते मेरे महा नीलमेघ सदृश विग्रहयुक्त ! कहता हूं मैं अपने प्रेम से क्षब्ध हो कर। 9

2885. कलक्कम इल्ला नल् तव
मुनिवर् करै कण्डोर्
तुळक्कम् इल्ला वानवर्
ऍल्लम्म् तॊळुवार्हळ्
मलक्कम् ऍय्द मा कडल
तननै-क् कडन्दानै
उलक्क नाम् पुहळ् किर्पदु
ऍन् शेय्वदु उरैयीरे ॥ 10

2886. उरैया वॆम् नोय् तविर
अरुळ् नीळ् मुडियानै
वरै आर् माडम् मननु
कुरुहूर्-च् चडकोपन्
उरै एय् शॊल् तॊडै
ओर् आयिरत्तुळ् इप्-पत्तुम्
निरैये वल्लार्
नीडु उलहत्तु-प् पिरवारे ॥ 11

2885 क्षोभरहित (ज्ञानात्मक) उत्तम तपस्या से युक्त मुनिगण, पारदर्शी (मुक्तात्मवर्ग) और (ज्ञान के) संकोचरहित नित्यसूरिवर्ग—सब (परमात्मा की) वंदना करते हैं और मंगलाशासन करते हैं। महासागर को भी क्षोभित कर के मन्थन करते परमात्मा का पूर्ण साक्षात्कार कर के उनकी स्तुति करना हम से कैसे हो सकता है? तुम ही बताओ, (लौकिक जनो!)। 10

2886 वर्णनागोचर उग्र व्याधि मिट जाने के अनुकूल कृपा करते उन्नत किरीट भूषित श्रीमन्नारायण पर पर्वत-तुल्य प्रासादों से समन्वित स्थिर कुरुहूर के शठकोप के कथित परस्पर संगत शब्द सन्दर्भ से युक्त विलक्षण सहस्र गीति में इस दशक को पूर्णतया पढ़ने में जो समर्थ हैं वे अंतहीन इस संसार में फिर जनमेंगे नहीं।

[उग्र व्याधि—अवतरित परमात्मा का आदर नहीं करनेवाले लोगों को देख कर व्याकुल होने की व्याधि।] 11

VIII. iv. वार् कडा अरुवि

2887. वार् कडा अरुवि यानै मा मलैयिन्
मरुप्पु इणै-क् कुवडु इरुत्तु उरुट्टि
ऊर् कॉळ् तिण् पाहन् उयिर् शेहुत्तु अरङ्गिन्
मल्लरै-क कॊन्रु शूळ् परण मेल्
पोर् कडा अरशर् पुरक्किड माड
मीमिशै-क् कञ्जनै-त् तहर्त्त
शीर् कॉळ् शिर्रायन् तिरु-च्च् चॅङ्कुन् रूरिल्
तिरुच् चिर्रारु ऎङ्गळ् शॅल् शार्वे॥ 1

2888 ऎङ्गळ् शॅल् शार्वु यामुडै अमुदम्
इमैयवर् अप्पन् ऎन् अप्पन्
पॉङ्गु मू उलहुम् पडैत्तु अळित्तु अळिक्कुम्
पॊरुदु मू उरुवन् ऎम अरुवन्
शॅम् कयल् उहळुम् तेम् पणै पुडै शूळ्
तिरु-च् चॅङ्कुन्रूर्-त् तिरु-च् चिर् रारु
अङ्गु अमर्हिन्र आदियान् अल्लाल्
यावर् मर्रु ऎन् अमर तुणैये ? 2

2.89. ऎन् अमर् पॆरुमान् इमैयवर् पॆरुमान्
इरु निलम् इडन्द ऎम् पॆरुमान्
मुन्नै वल् विनैहळ् मुळ्दु उडन् माळ
ऎन्नै आळ्हिन्र ऎम् पॆरुमान्
तॆन् तिशैक्कु अणि कॉळ् तिरु-च् चॆङ्कुन्रूरिल
तिरु च् चिर्रार्रङ् करै मी पाल्
निन्र ऎम् पॆरुमान् अडि अल्लाल् शरणम्
निनैप्पिलुम् पिरिदु इल्लै ऎनक्के॥ 3

VIII. iv. वार् कटा वरुवि

(सरित् के समान प्रवाहित मदजल)

[तिरु-च्-चेङ्गुन्रूर् क्षेत्र]

2887 सरित के समान प्रवाहित मदजल से युक्त महापर्वततुल्य (कुवलयापीड) गज के शिखर जैसे दंत युगल को तोड कर, उसे गिरा कर, उसे चलाने में निपुण सुदृढ महावत के प्राणों का अंत कर के, रंग पर स्थित मल्लो को मार कर, चारों ओर ऊंचे स्थान पर बैठे युद्ध मे कुशल राजाओं को जीत के भगा कर, मंचस्थ सिहासन पर बैठे कंस का संहार करते विजयश्री से संपन्न बालगोपाल जहां बिराजमान है, वह तिरुच्चेङ्कुन्रूर में तिरु-च्-चिर्गारु क्षेत्र हमारा प्राप्य स्थान है। 1

2888 हमारा प्राप्य, हमारा अमृत, नित्यसूरियो का स्वामी, मेरा स्वामी, वर्धमान लोकत्रय का निर्माण रक्षण और संहार करने के अनुरूप मूर्तित्रय से युक्त, (प्रतिकूल जनो का दुर्दर्श) मेरा सूक्ष्म रूपवान्, जो लाल मत्स्यों के संचार से युक्त पुष्करस्यदि जलाशयो से समंततः परिवृत तिरु-च्-चेङ्कुम्रूर तिरु च्-चिर्रारु क्षेत्र में विराजमान है, उस आदि (जगत्कारण) के व्यतिरिक्त और कौन मेरे अनुरूप साथी है ? 2

2889 मेरे अनुरूप भगवान्, नित्यसूरियों के अधीश्वर, विशाल पृथिवी को (वराह बन कर) उठाते भगवान्, अनादि प्रबल सब पापो को एक साथ मिटा कर मेरी रक्षा करते मेरे स्वामी, दक्षिण दिशा के भूषण तिरुच्चेङ्कुन्रूर में तिरु-च्-चिर्रारु नदी के तीर पर खड़े भगवान् के चरण के व्यतिरिक्त और कोई शरण (अर्थात् प्राप्य) मेरे चिन्तन में भी नहीं। 3

2890. पिऱिदु इल्लै ऍनक्कु-प् पॆरिय मू उलहुम्
निऱैय-प् पेर् उरुवम् आय् निमिर्न्द
कुऱिय माण् ऍम्मान् कुरै कडल् कडैन्द
कोल माणिक्कम् ऍन् ऍम्मान्
शॆऱि कुलै वाळै कमुहु तॆङ्गु अणि शूळ्
तिरु-च् चॆङ्कुन्ऱूर् त् तिरु-च् चिऱ्ऱाऱु
अऱिय मॆय्म्मैये निन्ऱ ऍम् पॆरुमान्
अडि इणै अल्लदु ओर् अरणे ॥

2891. अल्लदु ओर् अरणुम् अवनिल् वेरु इल्लै
अदु पॊरुळ् आहिलुम् अवनै
अल्लदु ऍन् आवि अमर्न्दु अणै किल्लादु
आदलाल् अवन् उरैहिन्ऱ
नल्ल नान् मरैयोर् वेळ्वियुळ् मडुत्त
नरुम पुहै विशुम्बु ऒळि मरैक्कुम्
नल्ल नीळ् माड-त् तिरु-च् चॆङ् कुन्ऱूरिल्
तिरु-च् चिऱ्ऱाऱु ऍनक्कु नल् अरणे ॥ 5

2892. ऍनक्कु नल् अरणै ऍनदु आर् उयिरै
इमैयवर् तन्दै ताय् तन्नै
तनक्कुम् तन् तन्मै अऱिवु अरियानै-त्
तडम् कडल् पळ्ळि अम्मानै
मन-क् कॊळ् शीर् मू आयिरवर् वण् शिवनुम्
अयनुम् तानुम् ऒप्पार् वाळ्
कन-क् कॊळ् तिण् माड-त् तिरु-च् चॆङ्कुन्ऱूरिर्
तिरु-च चिऱ्ऱाऱु अदनुळ् कण्डेने ॥ 6

2890 विशाल लोकत्रय को भी भरते महारूप के साथ परिवर्धित वामन ब्रह्मचारी मेरे स्वामी, घोष युक्त सागर का मन्थन करते दर्शनीय इंद्रनीलवर्ण मेरे स्वामी, निबिड फलपुंजों से युक्त कदली, पूग, और नारिकेल वृक्षों के समूह से परिवृत तिरु-च् चेङ्कुन्ऱूर में भक्त जिससे अपने को पहचानें ऐसा सत्य ही खड़े मेरे भगवान् के चरण के व्यतिरिक्त मेरा और कोई दुर्ग (अर्थात् रक्षक) नहीं। 4

2891 अन्य क्षेत्रों में दुर्ग (अर्थात् रक्षक) भी इस (क्षेत्र के स्वामी) से भिन्न नहीं। यह सत्यार्थ है। फिर भी मेरी आत्मा उसके व्यतिरिक्त अन्य से आदर के साथ लगती नहीं। अतः उसके आवास तिरु-च् चेङ्गुन्ऱूर में तिरु-च्-चिऱ्ऱारु ही मेरे लिए निर्भय दुर्ग है- जो उत्तम विपुल प्रासादों से समन्वित है, और जहां चार वेदों के अर्थज्ञ उत्तम ब्राह्मणों के यज्ञ में आहुत द्रव्यों का सुगंधित धूम आकाश में (सूर्य आदि की) कांति को ढक लेता है। 5

2892 जो मेरा उत्तम दुर्ग है, (अर्थात् रक्षक है), मेरी प्रिय आत्मा है, नित्यसूरियों के पिता और माता हैं, जिसे अपनी महिमा जान लेना भी अशक्य है, जो विशाल सागरशायी प्रभु है, उसे मैं ने तिरु-च्-चेङ्गुन्ऱूर-तिरु-च्-चिऱ्ऱारु में देख लिया—क्षेत्र जहां मन में भगवद्गुणों का ध्यान करते तथा श्रेष्ठ शिव और अज सदृश त्रिसहस्र सज्जन सप्रिय वास करते हैं एवं निबिड और सुदृढ प्रासादों से समन्वित है। 6

2893. तिरु-च् चॅङ् कुन्रूरिल् तिरु-च् चिर्राारु अदनुळ्
कण्ड अत् तिरुवडि ए̆न्रुम्
तिरु-च् चॅय्य कमल-क् कण्णुम् शॅव्-वायुम्
शॅव् वडियुम् शॅय्य कैयुम्
तिरु-च् चॅय्य कमल उन्दियुन् शॅय्य
कमल मार्वुम् शॅय्य उडैयुम्
तिरु-च् चॅय्य मुडियुम् आरमुम् पडैयुम्
तिहळ ए̆न शिन्दै उळाने ॥ 7

2894. तिहळ ए̆न् शिन्दैयुळ् इरुन्दाने-च्
चॅंळु निल-त् तेवर् नान् मरैयोर्
निशै कै कूप्पि एत्तुम् तिरु-च् चॅङ्कुनरूरिल
तिरु-च् चिर् रार्रङ-करै याने
पुहर् कोळ् वानवर्हळ् पुहल् इडम् तन्नै
अशुरर् वन् कैयर् वॅम् कूर्रै
पुहळुम् आरु अरियेन् पॉरुन्दु मू उलहुम्
पडैप्पॉडु कॅडुप्पु-क् काप्पवने ॥ 8

2895 पडै प्पॉडु कॅडुप्पु क् काप्पवन् पिरम
परम् परन् शिव पिरान् अवने
इडै प पुक्कु ओर् उरुवुम् ऑळिवु इल्लै अवने
पुहळ्वु इल्लै यावैयुम् ताने
कॉडै प् पॅरुम् पुहळार् इनैयर् तन् आनार्
कूरिय विच्चैयोडु ऑळुक्कम्
नडै-प् पलि इयर्कै-त् तिरु-च् चॅङ् कुन्रूरिल
तिरु-च् चिर्रारु अमर्न्द नादने ॥ 9

2893 तिरु-च् चेङ्गुन्रूर में तिरु-च्-चिर्राय में मेरे साक्षात्कृत वह स्वामी सदैव मेरे चित्त में विद्यमान हैं और उसके सुंदर आताम्र कमल नयन और रक्त अधर, रक्त चरण और रक्त हस्त, सुंदर रक्त कमल नाभि और रक्त कमल वक्ष, रक्त वस्त्र और सुंदर रक्त किरीट, एवं हार और आयुध सदा उसमें भासमान हैं। 7

2894 भास्वर रूप से जो मेरे चित्त में विद्यमान है, जो तिरु-च्-चेङ्कुन्रूर् में तिरु-च् चिर्राय क्षेत्र के स्वामी है—जहां चतुर्वेदी विलक्षण भूसुर (अर्थात् ब्राह्मण) दिशा दिशा में हाथ जोड कर स्तुति करते रहते है,—जो शोभा समन्वित देवताओं का आश्रय स्थान है, बलिष्ठ असुरों की भयंकर मृत्यु है, जो अनुरक्त लोकत्रय की सृष्टि, संहार और रक्षा करता है उसकी स्तुति करने का प्रकार मैं जानता नहीं। 8

2895 जहां दानजनित महाकीर्तिमंत भगवत्तुल्य महिमासंपन्न अनेक विशिष्ट सज्जनों की सूक्ष्म विद्या, आचरण, प्रतिदिन क्रियमाण बलि (अर्थात् पंचमहायज्ञ) स्वाभाविक रूप से चल रहे हैं, उस तिरु-च् चेङ्कुन्रूर में तिरु-च्-चिरराय में विराजमान साथ ही लोकों की सृष्टि के साथ संहार और रक्षण करता है। ब्रह्मा से परात्पर है। उपकारी शिव भी वही है। उनके बीच में प्रविष्ट हो कर वही किसी भी वस्तु को न छोड कर सब वस्तु हो कर रहता है। (अर्थात् सब की आत्मा है।) यह अर्थवाद नहीं (सच्ची बात है।) 9

2896. अमर्न्द नादनै अवर् अवर् आहि
अवक्कु अरुळुम् अम्मानै
अमर्न्द तण् पळन-त् तिरु-च् चॆॅङ् कुन्रूरिल
तिरु-च् चिर्रार्रङ्-करै यानै
अमर्न्द शीर् मू आयिरवर् वेदियर्हळ्
तम् पदि अवनि देवर् वाळ्‌ु
अमर्न्द मायोनै मुकण् अम्मानै 10
नान् मुहनै अमर्न्देनै

2897. तेनै नन् पालै क् कन्नलै अमुदै त्
तिरुन्दु उलहु उण्ड अम्मानै
वान नान् मुहनै मलर्न्द तण् कॊॅप्पूळ
मलर् मिशै-प् पडैत्त मायोनै
कोनै वण् कुरुहूर् वण् शडकोपन्
शॊॅन्न आयिरत्तुळ् इप् पत्तुम्
ानिन् मीदुएर्रि अरुळ् शॆॅय्दु मुडिक्कुम्
पिरवि मा माय क् कूत्तिनैये ॥ 11

2896 जो (समस्त चेतनों की रक्षा करने के) *अनुरूप शक्तियुक्त नाथ है,* (लोगों के अपने अनुकुल होना जैसे स्वाभाविक है, वैसे ही फलेच्छा से वे आते हैं तो) जो स्वयं वे ही बन कर उनका अभीष्ट कृपया प्रदान करता स्वामी है। जो अनुरूप शीत तडागो से परिवृत तिरु-च्-चेङ्कूर में तिरु-च्-चिर्रारु नामक नदी के तीर पर विराजमान है, आचरण तथा आत्मगुण से पूर्ण त्रिसहस्र वेदवित् ब्राह्मणों के स्थान में एव भूसूर श्रीवैष्णवों के प्राप्य स्थान में विराजमान है, उस आश्चर्यशक्तियुक्त मायी को प्राप्त कर हर्षित हूं। 10

2897 जो मधु और मधुर दूध है, जो इक्षुरसखंड और अमृत है, नष्ट होने से बचा कर जगत् को निगलता स्वामी है, जो उपरि तन लोक के अधिप चतुर्मुख को विकसित दर्शनीय अपने नाभीकमल में उत्पन्न करते मायी (अद्भुत शक्तियुक्त) है, जो सर्वाधिप है, उस पर सुंदर कुरुहूर के उदार शठकोप के रचित सहस्रगीति में यह दशक परमाकाश में (अर्थात् परमधाम में) चढा कर, कृपा कर के जन्म प्राप्ति रूप अद्भुत महानाढ्य को समाप्त कर देगा। 11

VIII. v. माय-क् कूत्ता !

2898. माय-क् कूत्ता ! वामना ! विनैयेन्
कण्णा ! कण् कै काल्
तुय शॅय्य मलर्हळा-च्
चोदि च् चॅव्वाय् मुहिळदा
शायल् शाम त् तिरयेनि
तण् पाशडैया तामरै नीळ्
वाश-त् तडम् पोल् वरुवाने !
ओॅरु नाळ् काण वाराये ॥ 1

2899. 'काण वाराय्' ऍन्रु ऍन्रु कण्णुम्
वायुम् तुवन्दु अडियेन्
नाणि नन्नाट्ट अलमन्दाल
इरङ्गि ओॅरु नाल् नी अन्दो !
काण वाराय् करु नायिरु उदिक्कुम्
करु मा माणिक्क
नाळ् नल् मलै पोल् शुडर्-च् चोदि
मुडि शेर् शॅन्नि अम्माने ! 2

2900. 'मुडि शेर् शॅननि अम्मा ! निन्
मोॅय पूम् ताम-त् तण् तुळाय्
कडि शेर् कण्णि-प् पॅरुमाने !'
ऍन्रु ऍन्रु एङ्गि अळुद-क् काल्
पडि शेर् मकर-क् कुळैहळुम्
पवळ वायुम् नाल् तोळुम्
तुडि नेर् इडैयुम् अमैन्ददु ओर्
तू नीर् मुहिल् पोल् तोन्राये ॥ 3

VIII. v. माय-क्-कूत्ता

(मायी नटवर)

[पिछले दशक में भगवदनुभव मानसानुभव मात्र था। उससे बाह्य संयोग की अपेक्षा हुई। वह प्राप्त न होने से सर्वांग सुंदर को आने के लिए पुकारते हैं।]

2898 मायी नटवर! (अत्यद्भुत और मनोहारि चेष्टाओ से युक्त!) हे वामन! (यथामनोरथ अनुभव नहीं कर पाते) मुझ पापी के कान्ह! नयन हस्त और चरण जिसके निर्मल रक्त कमल ही हैं, ज्योतिर्मय रक्त अधर चारु मुकुल है, छाया मय (अर्थात् कांतियुक्त) श्यामल और सुंदर विग्रह शीत हरित पत्र है, इनके सहित सुगंधित उत्फुल्ल पंकज तडाग जैसे चलते स्वामी! एक दिन मुझे दर्शन देने आओ। (अर्थात् इस प्रकार आओ मानो एक मनोहर कमलसरोवर पैदल चल कर आता हो।) 1

2899 "दर्शन देने आओ" कह कह कर मेरे नयन और अधर सूख गए। (तुम्हारे दर्शन करने से) सुभग इस लोक में (दर्शन के बिना) दास मैं लज्जित हो कर व्याकुल होता हूं तो अनुकंपा कर के तुम एक दिन, हाय! दर्शन देने नहीं आते। प्रदीप्त ज्योतिर्मय केश विभूषित शीर्ष मेरे स्वामी! नील सूर्य के उदय से समन्वित अनर्घ नील माणिक्यमय सुंदर तरुण गिरि मानो पैदल चला आता है ऐसे तुम आओ)। 2

2900 'किरीटविभूषितशीर्ष मेरे स्वामी! अनुरूप और स्निग्ध मनोहर और दीप्तियुक्त, ताप हर और सुगंधित तुलसी से ग्रथित मालालंकृत भगवान्!' कह कह कर संतप्त हो के मैं क्रन्दन करता हूं। कर्णानुरूप मकरकुंडल और विद्रुमाधर, चतुर्भुज और डमरुक तुल्य तनुतर मध्य आदि से संपन्न तथा निर्मल जल से पूर्ण एक अपूर्व जलद के समान (आकर) दर्शन दो। 3

2901. तू नीर् मुहिल् पोल् तोन्रुम् निन्
शुडर् कॉळ् वडिवुम् कनि वायुम्
ते नीर्-क् कमल-क् कण्गळुम्
वन्दु एॅन् शिन्दै निरैन्दवा!
मा नीर् वॅळ्ळि मलै तन् मेल्
वण् कार् नील मुहिल् पोल
तू नीर्-क् कडलुळ् तुयिल्वाने!
एॅन्दाय! शॉल्ल माट्टेने ॥ 4

2902. शॉल्ल माट्टेन अडियेन् उन्
तुळङ्गु शोदि-त् तिरु प् पादम्
एॅल्लै इल् शीर् इळ आयिरु
इरण्ड् पोल् एॅन् उळ्ळवा!
अल्लल् एॅन्नुम् इरुळ् शेर्दर्कु
उपायम् एॅन्ने? आळि शूळ्
मल्लल् आलम् मुळुदु उण्ड
मा नीर्-क् कॉण्डल् वण्णने! 5

2903. 'कॉण्डल् वण्णा! कुड-क् कूत्ता!
विनैयेन् कण्णा! कण्णा! एॅन्
अण्ड वाणा!' एॅन्रु एॅन्नै
आळ-क् कूप्पिट्टु अळैत्तकाल्
विण् तन् मेल् तान् मण मेल् तान्
विरि नीर्-क् कडल् तान् मरुरु-त् तान्
तॉण्डनेन् उन् कळल् काण
ऑरु नाळ् वन्दु तोन्राये ॥ 6

2901 विमल सलिल से पूर्ण जलदसदृश दीखता दीप्तियुक्त तुम्हारा विग्रह, बिंबफलाधर, तथा मधु से निर्भर कमल तुल्य नयन आ कर मेरे चित्त में भरे रहते हैं। (नयनगोचर न हो कर, मानसिक दर्शन देने से मुझे दुःख ही होता है।) उसका वर्णन तो मैं नहीं कर सकता। महासागर में रजत गिरि पर स्थित वर्षाकाल के सुंदर नील जलद के समान विमल सलिल सागर पर शयित मेरे स्वामी! (मैं वर्णन नहीं कर सकता।) 4

2902 भासमान ज्योति से युक्त सुंदर तुम्हारे पाद अनवधिक दीप्ति से समन्वित दो बाल सूर्यों के समान मेरे हृदय में प्रकाशमान हैं। उनके प्रकार का वर्णन मुझ से किया नहीं जा सकता। (प्रत्यक्ष न होने से वे तो दुःखद हैं। उन्हें भूल कर जीवन धारण करना चाहता हूं। अतः तुमही बताओ) लोक में दोष कहलाये जाने अंधकार (अर्थात् अज्ञान विस्मरण) को प्राप्त करने का उपाय क्या है? सागर परिवृत विशाल भूमि सब को निगलते और विमल सलिल से परिपूर्ण जलद सवर्ण! 5

2903 "जलदवर्ण! घटनटवर! मुझ पापी के नयन तुल्य! कान्ह! मेरे स्वामी! ब्रह्मांड के स्वामी!" कह कर मेरी सेवा स्वीकार करने के लिए तुम्हें बुलाता हूं। चाहे परमधाम से हो, भूमि पर से ही हो, अथवा विशाल क्षीरसागर से हो, अथवा और कहीं से भी हो (अर्थात् स्तंभ से हो) जिससे दास मैं तुम्हारे पाद देख सकूं, ऐसे एक दिन आ कर दर्शन दो। 6

2904. वन्दु तोन्राय् अन्रेल् उन्
वैयम् ताय मलर् अडि-क् कीळ्
मुन्दि वन्दु यान् निरप
मुहप्पे कूवि-प् पणि कॊॅळ्ळाय्
शॆम् तण् कमल-क् कण् कै काल्
शिवन्द वाय् ओर् करु नायिरु
अन्दम् इल्ला क् कदिर् परप्पि
अलर्न्दद्द ऒॅक्कुम अम्माने! 7

2905. ऒॅक्कुम् अम्मान् उरुवम् ऎॅन्रु
उळ्ळम् कुळैन्दु नाळ् नाळुम्
तॊॅक्क मेह-प् पल् कुळाङ्गळ्
काणुम् तोरुम् तॊॅलैवन् नान्
तक्क ऐवर् तमक्कु आय् अन्रु
ईर् ऐम् पदिन्मर ताळ् शाय
पुक्क नल् तेर् त् तनि-प् पाहा!
बाराय् इदुवो पॊॅरुत्तमे? 8

2906. 'इदुवो पॊॅरुत्तम्? मिन् आळि-प्
पडैयाय! एरुम् इरुम् शिरै-प् पुळ्
अदुवे कॊॅडिया उयर्त्तान!'
ऎॅन्रु ऎॅन्रु एङ्गि अळुद-क् काल्
ऎॅदुवे आह-क् करुदुम् कोल्?
इम् मा ञालम् पोरै तीर्प्पान्
मद्द वार् शोलै उलगर
मदुरै-प् पिरन्द मायने। 9

2904 आ कर दर्शन दो। नहीं तो भूमि मापक तुम्हारे कमलचरणभूल में पहले ही आ कर खडे रहते मुझे अपने सामने बुला के आज्ञा दे कर मेरी सेवा स्वीकार करो। ताम्र शीतल कमल सदृश नयन हस्त चरण, अरुण अधर आदि से संयुक्त और अपरिमित किरणों को फैलाते हुए उदित एक नील सूर्य के समान भासमान मेरे स्वामी! 7

2905 प्रतिदिन जब कभी संधीभूत अनेक मेघसमूह देखता हूं मेरा मन विह्वल हो जाता है और मैं दुःखहत हो जाता हूं। पुरा काल में अनुकूल पांच (पांडवों) के हो कर, जिससे द्विगुण पचास (अर्थात् दुर्योधनादि शत) वीरों के पांव उखड जाएं ऐसा युद्धक्षेत्र में स्थापित श्रेष्ठ रथ के अद्वितीय सारथी! तुम (मेरे सामने) आते नहीं। क्या यह तुम्हारी भक्तपराधीनता के अनुरूप है? (संत पूछते हैं कि कुरक्षेत्र युद्धभूमि में स्थापित रथ को मोड कर मेघों के मध्य मे मेरे सामने स्थापित करने में तुम्हें क्या क्लेश है?)। 8

2906 "क्या यही तुम्हारे स्वभावानुरूप है? प्रदीप्त चक्रायुधधर! वाहन भूत विपुलपक्ष विहंग (गरुड) ही को ध्वज पर रखते (भगवान्)!" कह कह कर व्यथित हो कर रोता हूं तो तुम मन में क्या सोच रहे हो? (क्या मेरे सामने आने का विचार करते हो अथवा सोचते हो ऐसे ही रोकर मैं नष्ट हो जाऊं?) इस महापृथिवी का भार हटाने के लिये मधुस्यंदि उद्यानों से समन्वित उत्तर मधुरा में जनमे मायी! (अद्भुतस्वभाव!) 9

2907. पिरन्द माया ! बारदम्
पॉरुद माया ! नी इन्ने
शिरन्द काल् ती नीर् वान् मण्
पिरवुम् आय पॅरुमाने !
करन्द पालुळ् नॅय्ये पोल्
इवररुळ् एॅङ्गुम् कण्डु कॉळ
इरन्दु निन्र पॅरु माया !
उनने एॅङ्गो काण्गेने ? 10

2908. 'एॅङ्गो काण्गेन् ईन् तुळाय्
अम्मान् तन्ने यान् ?' एॅन्रु एॅनरु
अङ्गो ताळ्न्द शॉर्कळाल्
अम् तण् कुरुहूर्-च् चडकोपन्
[illegible]म् कैळ् शॉन्न आयिरत्तुळ्
इवैयुम् पत्तुम् वल्लार्हळ्
[illegible] काण इप्-पिरप्पे
महिळ्वर् एॅल्लियुम कालैये ॥ 11

2907 जनमते मायी! भारत युद्धकारी मायी! इस प्रकार तुम्हारे सुलभ होने पर भी उत्कृष्ट वायु और अग्नि, जल और आकाश तथा पृथिवी (पंचभूत) एवं अन्य (भौतिक पदार्थ) भी होते भगवान्! दुहे दूध मे स्थित घृत के समान इन सभी वस्तुओं मे दर्शनागोचर हो कर विद्यमान महामायी! तुम्हें कहां मै देखूं? 10

2908 "मधुर तुलसी विभूषित स्वामी को कहां मै देखूं"" कह कह कर उस पर प्रवण शब्दों से दर्शनीय और ताप हर कुरुहूर (नगर) के शठकोप के ऋजुता पूर्वक (अर्थात् त्रिकरणशुद्धिपूर्वक) कथित सहस्रगीति मे इन दसों पद्यों के पठन मे जो समर्थ है, वे यहीं सब लोगों के प्रत्यक्ष ही इसी जन्म मे रात दिन (भगवद्दर्शन जनित) आनंद के साथ रहेंगे। 11

VIII. vi. ए॑ल्लियुम् कालै॑युम्

2909. ए॑ल्लियुम् कालै॑युम् तन्ने॑ निनैन्दु ए॑ळ
नल्ल अरुळ्हळ् नमक्के तन्दु अरुळ् शॅय्वान्
अल्लि अम् तण् अम तुळाय् मुडि अप्पन् ऊर्
शॅल्वर्हळ् वाळुम् तिरु-क कडित्तानमे ॥ 1

2910. तिरु-क् कडित्तानमुम् ए॑न्नुडै-च् चिन्दैयुम्
ऑरुक्कडुत्तु उळ्ळे उरै॑युम् पिरान् कण्डीर्
शॅरुक्कडुत्तु अन्रु तिहैत्त अरक्कर्
उरु-क कॅड वाळि पॉळिन्द ऑरुवने ॥ 2

2911. ऑरुवर् इरुवर् ओर् मूवर् ए॑न निन्रु
उरुवु करन्दु उळ्ळुम् तोरुम् तित्तिप्पान्
तिरु अमर् मार्वन् तिरु-क् कडि त् तानत्तै
मरुवि उरै॑हिन्र माय-प पिराने ॥ 3

2912. माय-प् पिरान् ए॑न वल् विनै॑ मायन्दु अर
नेयत्तिनाल् नॅञ्जम् नाडु कुडि कॉण्डान्
तेशत्तु अमरर् तिरु-क् कडित्तानत्तै
वाश-प् पॉळिल् मन्नु कोयिल कॉण्डाने ॥ 4

VIII. vi. एन्नियंम् कालैयुम्

(रात दिन)

(तिरु-क् कडित्तानम् क्षेत्र) (केरलप्रांत)

(श्रीशठकोप की आर्ति दूर करने के लिये भगवान् ने एक विलक्षण अनुभव दिया जिससे अतिप्रसन्न हो कर संत कहते हैं कि मेरे सब अभीष्ट पूर्ण हुए।)

2909 जिससे रात दिन उसका स्मरण कर हम उज्जीवित होवें, ऐसी भव्य कृपाएं हम पर जो करना है, तथा मंदरदलयुक्त शीतल सुंदर तुलसीभूषित किरीटधर स्वामी जो है, उसका स्थान है तिरु-क्-कडित्तानम् जहां (भगवत्कैंकर्यात्मक समृद्धि से सपन्न) श्रीमंत (साधुजन) सप्रीति वास करते है। 1

2910 युद्ध-खुजली के कारण पुरा काल में (रामचंद्र की शक्ति से) भ्रान्तचित्त राक्षसों के शरीर नाश के लिए शरवर्षा करते अद्वितीय वीर (श्रीरामचंद्र) तिरु-क्-कडित्तानम् (क्षेत्र) और मेरा चित्त दोनों को समान मान कर उनके भीतर नित्य वास करते है। देखो। 2

2911 (मूलबलयुद्ध के दिन युद्धक्षेत्र में श्रीराम के संचरित होने के वेग के कारण) राक्षसों ने सोचा कि श्रीराम एक है, दो है और विलक्षण तीन है। फिर (वेगाधिक्य से) राम-शरीर ही अदृश्य हो गया। (इस प्रकार युद्ध खुजली से युक्त राक्षसों को मारने के लिए शरवर्ष की वर्षा की) (वे श्रीराम तिरु-क्-कडित्तानम् और मेरे चित्त दोनों में समान भाव से नित्यवास करते है।) लक्ष्मीसमाश्रित वक्ष तथा तिरु क् कडित्तानम् में सप्रीति नित्यवास करते मायी (आश्चर्यशक्तियुक्त) उपकारी का स्मरण करने के सभी काल में वह मधुर लगता है अर्थात् परमयोग्य होता है)। 3

2912 तेजोयुक्त अमरों के प्राप्य और सुगंधित उपवनों से युक्त तिरु क् कडित्तानम् को अपना स्थिर आवास बनाते मायी उपकारी मेरे प्रबल पापों को समूल ध्वस्त कर के, स्नेह से मेरे हृदय में विस्तीर्ण देश में रहने के समान सुख से नित्यवास करने लगा। 4

2913 कोयिल् कॊण्डान् तन् तिरु-क् कडित्तानत्तै
कोयिल् कॊण्डान् अदनोडुम् ऎन् नॆञ्जहम्
कोयिल् कॊळ् दॆय्वम् ऎल्लाम् तॊळ वैकुन्दम्
कोयिल् कॊण्ड कुडक् कूत्त अम्माने ॥ 5

2914. कूत्त अम्मान् कॊडियेन् इडर् मुर्रवुम्
मायत्त अम्मान् मदुसूद अम्मान् उरै
पूत्त पॊळिल् तण् तिरुक् कडित्तानत्तै
एत्त निल्ला कुरिक कॊळ्मिन् इडरे ॥ 6

2915 कॊण्मिन् इडर् कॆड उळळत्तुक् कोविन्दन्
मण् विण् मुळुदुम् अळन्द ऒण् तामरै
मण्णवर् ताम् तॊळ वानवर् ताम् वन्दु
नण्णु तिरुक् कडित्तान नहरे ॥ 7

2916 तान नहर्गळ् तलैच्चिरन्दु ऎङ्गु ऎङ्गुम्
वान् इन् निलम् कडल् मुर्रुम् ऎम् मायर्कॆ
आन इडत्तुम् ऎन् नॆञ्जुम् तिरुक् कडि-त्-
तान नहरुम् तन तायप् पदिये ॥ 8

2913 अपने अपने आलय में वास करते (ब्रह्मादि) सब देवताओं से वंदित हो कर वैकुंठ में वास करते घटनटवर मेरे स्वामी (श्रीकृष्ण) ने तिरु-क् कडित्तानम को अपना मंदिर बनाया था। तदनंतर उस क्षेत्र को भी साथ ले कर मेरे हृदय को अपना वासस्थान बना लिया। 5

2914 जो नटवर स्वामी हैं, क्रूर स्वभाव मेरे सब क्लेशों के विनाशक स्वामी हैं, तथा मधुसूदन प्रभु हैं, उनसे अधिष्ठित पुष्पित आरामों से समन्वित श्रमहर तिरु-क्-कडित्तानम् की स्तुति करें तो दुःख टिकेंगे नहीं। ध्यान में रखो (यह सत्य है)। 6

2915 गोविंद के भूमि और आकाश के मापक सुंदर कमल (सदृश चरण) की वंदना भूलोक वासी जन जहा करते है और देव-गण स्वयं आ कर जहा उपस्थित होते हैं उस तिरु-क्-कडित्तानम् को अपना दुख दूर करने के लिये मन में रखो। (अर्थात् उसका ध्यान करो)। 7

2916 हमारे मायी (परमात्मा) को परमधाम, यह भूमि, (क्षीर) सागर सब प्रदेशों में सर्वोत्कृष्ट नगर आवासस्थान हैं। फिर भी मेरा हृदय और तिरु-क्-कडित्तानम् दोनों ही को वह अपना दाय प्राप्त स्थान मानता है। (अर्थात् इन दोनों पर ही उसे बहुत आदर है।) 8

2917. ताय-प् पदिहळ् तलै च् चिरन्दु ए॑ङ्गु ए॑ङ्गुम्
मायत्तिनाल् मन्नि वीऱ्ऱिरुन्दान् उऱै
तेय त् तमरर् तिरु क् कडित्ता नत्तुळ्
आयक्कु॑ अदिपति अऱ्पुदन् ताने ॥ 9

2918. अऱ्पुदन् नारायणन् अरि वामनन्
निऱ्पदु मेवि इरुप्पदु ए॑न् ने॑ञ्ज् अहम्
नऱ् पुहळ् वेदियर् नान मऱै निन्ऱु अदिर्
कऱ्पह च् चोलै त् तिरु क् कडित्तानमे । 10

2919 शोलै त् तिरु-क् कडित्तानत्तु उऱै तिरु
माले मदिळ् कुरुहूर् च् चडकोपन शॊ॑ल्
पालोडु अमुदु अन्न आयिरत्तु इप्-पत्तुम्
मेलै वैकुन्दत्तु इरुत्तुम् वियन्दे ॥ 11

2917 सर्वोत्कृष्ट दाय-प्राप्त सभी स्थानों में स्वसंकल्प से प्रतिष्ठा के साथ नित्य विराजमान है। फिर भी तेजस्वी अमरों के प्राप्य तिरु क् कडित्तानम् में नित्यवास करता गोपाधिपति अद्भुत स्वभाव से युक्त है। (अर्थात् इस क्षेत्र में उसे अत्यधिक प्रेम है।)

2918 अद्भुत स्वभाव प्रभु, नारायण, हरि, वामन के खड़े रहने का स्थान है कल्पवृक्षों से पूर्ण उपवन परिवृत तिरु-क्-कडित्तानम् जिस मे उत्तम कीर्ति से युक्त श्रोत्रियों के चतुर्वेद का घोष सदा सुनाई पड़ता है। परंतु प्रीति से उसके रहने का स्थान मेरा हृदय-मध्य है। 10

2919 आरामों से युक्त तिरु क् कडित्तानम् में नित्य वास करते श्रीमन्नारायण पर प्राचीरों से परिवृत कुरुहूर के शठकोप के कथित (शब्द और अर्थ के श्रेष्ठ्य के कारण) दूध से मिश्रित अमृत के समान होती सहस्रगीति में यह दशक विस्मित हो कर पाठक को उत्तुंग वैकुंठ पहुँचा देगा। (विस्मय इस बात का है कि संसार में इस का अभ्यास करनेवाले भी हैं।) 11

VIII. vii. इरुत्तुम् वियन्दु

2920. इरुत्तुम् वियन्दु ऍन्नै-त्
तन् पॊन् अडि-क् कीऴ् ऍन्रु
अरुत्तित्तु ऍनैत्तु ओर्
पल नाळ् अऴैत्तेऱ्कु
पॊरुत्तम् उडै वामनन् तान्
पुहुन्दु ऍन् तन्
करुत्तै उर वीऱ्ऱिरुन्दान्
कण्डु कॊण्डे ॥ 1

2921. इरुन्दान् कण्डु कॊण्डु
ऍनदु एऴै नॆञ्जु आळुम्
तिरुन्दाद ओर् ऐवरै त्
तेयन्दु अर मन्निं
पॆरुम ताळ् कळिऱ्ऱुक्कु
अरुळ् शॆय्द पॆरुमान्
तरुम् तान् अरुळ् तान्
इनि यान् अऱियेने ॥ 2

2922. अरुळ् तान् इनि यान्
अऱियेन् अवन् ऍन्नुळ
इरुळ् तान् अर वीऱ्ऱु
इरुन्दान् इदु अल्लाल्
पॊरुळ् तान् ऍनिल्
मू उलहुम् पॊरुळ् अल्ल
मरुळ् तान् ईदो ?
माय मयक्कु मयक्के ॥ 3

VIII. vii. इरुत्तुम् वियन्दु

(विस्मित हो कर रखो)

[अपने हृदय मे ही विराजमान भगवान् को देख कर संत का प्रहर्ष]

2920 "(मेरा प्रावण्य देख कर) विस्मित हो कर अपने पादमूल मे रखो" —यह प्रार्थना कर के कितने ही अनेक दिन मैंने पुकारा। स्नेही वामन स्वयं (आ के) मुझ मे प्रविष्ट हो कर मेरी भावना जैसी भावना के साथ मुझे देखते हुए विराजमान हुआ।

[मेरी जैसी भावना के साथ—जैसे मैने उससे प्रेम किया वैसे उसने भी मुझ से किया।] 1

2921 मेरे चपल चित्त को अपने वश मे रखते दुर्जय विलक्षण पाँच इंद्रियों को जीत कर शक्तिहीन बनाने के लिए (मेरे मन में) स्थिर वास कर के मुझे देखते हुए विराजमान था। बृहच्चरण गजेन्द्र पर कृपा करते भगवान् के मुझ पर इतनी कृपा करने के अनंतर इससे भी अधिक क्या करेगा, मै नहीं जानता। 2

2922 इससे बढ कर किसी कृपा को मै नहीं जानता। (अज्ञान) अंधकार को दूर करते हुए वह मेरे हृदय मे सादर और सप्रीति विराजमान है (मानो दुष्प्राप वस्तु हस्तगत हुई हो)। ऐसे मेरे हृदय मे रहने के अतिरिक्त भी क्या और कोई पुरुषार्थ है उसको? लोकत्रय का ऐश्वर्य भी वह पुरुषार्थ नहीं समझता। ऐसा सोचना क्या मेरे अज्ञान का कार्य है? अथवा उसकी अद्भुत भ्रामक शक्ति से जनित भ्रम है? (अर्थात् मुझ पर अपना व्यामोह दिखा कर मुझे भ्रम मे डालता है।) 3

2923. माय मयक्कु मयक्कान्
ए॑न्नै वञ्जित्तु
आयन् अमरक्कु
अरि एरु ए॑नदु अम्मान्
तूय शुडर् च् चोदि
तनदु ए॑न्नुळ् वैत्तान्
तेयम् तिहळुम् तन्
तिरु अरुळ् शॅय्दे ॥ 4

2924. तिहळुम् तन् तिरु अरुळ्
शॅय्दु उलहत्तार्
पुहळुम् पुहळ तान् अदु
काट्टि-त् तन्दु ए॑न्नुळ्
तिहळुम् मणि-क् कुन्ऱम्
ओ॑न्ऱे ओ॑त्तु निन्ऱान्
पुहळुम् पुहळ् मऱु
ए॑नक्कुम् ओर् पो॑रुळे ॥ 5

2925. पो॑रुळ् मऱु ए॑नक्कुम् ओर्
पो॑रुळ् तन्निल् शीर्क्क त्
तरुमेल् पिन् याक्कु अवन्
तन्नै-क् कौ॑डुक्कुम् ?
करु माणिक्क-क् कुन्ऱत्तु त्
तामरै पोल्
तिरु मावु काल् कण् कै
शॅव्वाय् उन्दियाने ॥ 6

2923 मुझे वंचित कर अपनी अद्भुत भ्रामक शक्ति से मुझे भ्रांत नहीं करेगा। मेरे स्वामी ने, जो गोपाल है और अमरों में हरिश्रेष्ठ (अर्थात् सिंहपुंगव) है, मुझे अपनी वेशविख्यात निर्हेतुक कृपा प्रदान कर के अपनी निर्मल दीप्तियुक्त ज्योति (अर्थात् तेजोमय विग्रह) को मेरे हृदय में रख दिया। 4

2924 मेरे हृदय मे अपने को रख कर भगवान् ने भासमान अपनी निर्हेतुक कृपा प्रदान की। लोको मे प्रशंसित इस महागुण की प्रशंसा भी मुझे दिखा दी और मेरे हृदय में प्रदीप्त अद्वितीय मणिपर्वत के समान स्थिर खड़ा है। इस उत्तम गुण के व्यतिरिक्त उसके अन्य गुणों की प्रशंसा जो की जाती है, क्या वह प्रशंसा भी कोई पदार्थ है? (अर्थात् आदरणीय और प्रशंसनीय गुण है?)। 5

2925 नीलमाणिक्य पर्वत पर स्थित कमल सदृश श्रीवक्ष और चरण, नयन और हस्त, ताम्र अधर और नाभि इन सुंदर अवयवों से युक्त परम पुरुष अन्य (ऐश्वर्यादि) पुरुषार्थों मे एक पुरुषार्थ को उसे श्रेष्ठ समझ कर मुझे दे देता है तो तब (परम पुरुषार्थ भूत) अपने को वह और किसको देगा? (सर्वोत्तम पुरुषार्थ उससे लेने के लिए बहुत लोग है। उनको न दे कर यदि अपने को मुझे ही दिया तो उसका कारण है अति प्रीति और स्नेह जो मुझ से करता है। 6

926. शॆव्वाय् उन्दि वॆण् पल्
शुडर्-क् कुळै तम्मोडु
ऎव्वाय्-च् चुडरुम् तम्मिल्
मुन् वळाय् क् कॊळ्ळ
शॆव्वाय् मुरुवलोडु
ऎनदु उळ्ळत्तु इरुन्द
अव्वाय् अन्रि यान्
अरियेन मररु अरुळे ॥ 7

2927. अरियेन् मर्रु अरुळ्
ऎन्नै आळुम् पिरानार
वॆरिदे अरुळ् शॆय्वर्
शॆय्वार्हट्कु उहन्दु
शिरियेन् उडै च् चिन्दैयुळ्
मू उलहुम् तम्
नॆरिया वयिर्रिल् कॊण्डु
निन्रु ऒळिन्दारे ॥ 8

2928. वयिर्रिल् कॊण्ड्
निन्रु ऒळिन्दारुम् ऎवरुम्
वयिर्रिल कॊण्डु निन्रु
ऒरु मू उलहुम् तम्
वयिर्रिल् कॊण्डु निन्र
वण्णम् निन्र माले
वयिर्रिल् कॊण्ड्
मनन दैत्तेन मदियाले ॥ 9

2926 ताम्राधर और नाभि, धवल दंत और प्रदीप्त कुंडल इनके साथ अन्य अवयवों की कांति भी स्पर्धा करते हुए मुझे घेर लेती है। शोणाधर मंदस्मित सहित मेरे हृदय में विद्यमान उसकी उस स्थिति के अतिरिक्त अन्य कृपाकार्य मैं जानता नहीं। 7

2927 उसका दूसरा कोई कृपाकार्य मैं नहीं जानता। मुझे दास स्वीकार करते उपकारी प्रभु प्रेम के साथ निर्हेतुक ही उनपर कृपा करता है जिन का वह उपकार करना चाहता है। लोकत्रय को (रक्ष्यरक्षकभाव के) नियमानुसार जो अपने उदर में रखता है, वह क्षुद्र मेरे हृदय में (नियमविरुद्ध प्रकार से) स्थित हुआ।

[नियमानुसार—लोक रक्ष्य वस्तु है और वह रक्षक है। अतः उनकी रक्षा करने के नियमानुसार।

नियम विरुद्ध—ईश्वर अपने को रक्ष्य वस्तु बना कर संत को रक्षक समझ कर उनके हृदय में रहता है। यहां रक्ष्य-रक्षक भाव उलट गया।] ८

2928 (गर्भस्थ शिशु की रक्षा करती माता जैसे सब को) अपने उदर में रखते (अर्थात् रक्षा करते क्षत्रिय आदि मनुष्य ब्रह्मादि देव) सब को अपने उदर में रखते तीन लोक को (अर्थात् स्वरूप एक देश में रखते तीन लोक को), अपने शरीर में (संकल्प एक देश में) रखते सर्वेश्वर को—जो पहले जैसे ही निर्विकार है—मैंने अपने उदर में रख कर अनुमति दे कर वहीं रहने दिया। 9

2929. वैत्तेन् मदियाल्
एॅनदु उळ्ळत्तु अहत्ते
एॅय्त्ते ओॅळिवेन् अल्लेन्
एॅन्रुम् एॅप्पोदुम्
मोॅय्त्तु एय् तिरै
मोदु तण् पार् कडलुळ् आल्
पैत्तु एय् शुडर्-प्
पाम्बु अणै नम् परनैये ॥ 10

2930. शुडर्-प् पाम्बु अणै नम्
परनै-त् तिरुमालै
अडि च् चेर् वहै वण्
कुरुहूर्-च् चडकोपन्
मुडिप्पान् शोॅन्न आयिरत्तु
इप्-पत्तुम् शन्मम्
विड, तेय्न्दु अर नोक्कुम्
तन् कण्गळ् शिवन्दे ॥ 11

2929 लगातार उठ कर टकराती तरंगों से युक्त शीत क्षीर सागर में विकसितफण और स्वाभाविक ज्योति से युक्त सर्प पर शयित हमारे परम (पुरुष) को अनुमति दे कर मैंने अपने हृदय के भीतर रख दिया। इसके अनंतर सब दिनों में सब काल में वियुक्त हो कर कभी दुखी नहीं होऊंगा। 10

2930 प्रदीप्त सर्पशयन हमारे परमपुरुष श्रीमन्नारायण के चरण प्राप्ति प्रकार के पूर्ण वर्णन के लिए सुंदर कुरुहूर के शठकोप के द्वारा रचित सहस्रगीति में यह दशक अपनी आंखें लाल कर देखेगा जिससे हमारा जन्म क्षीण हो कर छूट जाएगा। 11

2931. कण्गळ् शिवन्दु पॆरिय आय्
वायुम् शिवन्दु कनिन्दु उळ्ळे
वॆण् पल् इलहु शुडर् इलहु
विलहु मकर कुण्डलत्तन्
कॊण्डल् वण्णन् शुडर् मुडियन्
नान्गु तोळन कुनि शार्ङ्गन्
ऒण् शङ्ग् गदै वाळ् आळियान्
ऒरुवन अडियेन् उळ्ळाने ॥ 1

2932. अडियेन् उळ्ळान् उडल् उळ्ळान्
अण्डत्तु अहत्तान् पुरत्तु उळ्ळान्
पडिये इदु ऎन्रु उरैक्कलाम्
पडि अल्लन् परम् परन्
कडि शेर् नाररत्तुळ् आलै
इन्ब-त् तुन्ब-क् कळि नेर्मै
ऒडिया इन्ब प् पॆरुमैयोन्
उणर्विल् उम्बर् ऒरुवने ॥ 2

2933. उणर्विल् उम्बर् ऒरुवनै अवनदु
अरुळाल् उरल् पॊरुट्टु ऎन्
उणर्विन् उळ्ळे निरुत्तिनेन्
अदुवुम् अवनदु इन अरुळे
उणर्वुम् उयिरुम् उडम्बुम् मरु
उलप्पिलनवुम् पळुदे आम्
उणर्वै-प् पॆर ऊन्दि इर एरि
यानुम् तान् आय् ऒळिन्दाने ॥ 3

VIII. viii. कण्णिनुण् शिरुत्ताम्बु

(नयन अरुण और विशाल हैं)

[विलक्षण जीवात्मस्वरूप का वर्णन]

2931 जिसके नयन अरुण और विशाल हैं, अधर भी अरुण और पक्व (बिंबफल सम) है, उसके भीतर शुक्ल दंत दीप्तियुक्त तेजोमय हैं, मकरकुंडल भासमान और चंचल हैं; जो मेघवर्ण है, कांतियुक्त किरीटधर है, चतुर्भुज है, कुंचितधनु है, ज्वलंत शंख और गदा, खड्ग और चक्र जिसके आयुध हैं, वह अद्वितीय भगवान् मुझ दास के भीतर विराजमान है। 1

2932 मुझ दास के भीतर तथा शरीर के भीतर है वह जो अंड के भीतर (के पदार्थों में) है तथा बाहर (के पदार्थों में) भी है, जिसके विषय में यह कहा नहीं जा सकता कि कोई वस्तु उसके समान है (अर्थात् वह समाभ्यधिक रहित है), जो परों से भी पर है (अर्थात् परात्पर—उत्कृष्टों से भी उत्कृष्ट है), तथा जो अत्यधिक सुगंध के अनुभव से उत्पन्न दोषविहीन नित्य सिद्ध और निरवधिक आनंद से युक्त है। 2

2933 सर्वज्ञ नित्यसूरियों के अद्वितीय स्वामी को उसकी कृपा से प्राप्त करने के लिए मैंने अपने (इच्छारूप) ज्ञान में स्थापित किया। मेरी यह प्रवृत्ति भी उसकी कृपा का फल है। (वैषयिक) ज्ञान और प्राण, शरीर और अन्य असंख्य (अर्थात् इंद्रियों से ले कर प्रकृति तक के सब) पदार्थ निस्सार हैं' इस ज्ञान को मुझ में उत्पन्न करने के लिये परमात्मा ने उपाय दिखाया और, अंत तक ले जा कर (अर्थात् प्रकृति से भिन्न जीवात्मस्वरूप तक ले जा कर) मैं भी वह हो कर रहा। (अर्थात् जीवात्मवाची 'अहंशब्द', जीवान्तर्यामी परमात्मा का भी वाचक होता है। जीवविशिष्ट परमात्मा का वाचक है।) 3

2934\. यानुम् तान् आय् ओ॑ळिन्दानै
यादुम् ए॑वक्कु॑म् मुन्नोनै
तानुम् शिवनुम् पिरमनुम् आहि-प्
पणैत्त तनि मुदलै
तेनुम् पालुम् कन्नलुम्
अमुदुम् आहि-त् तित्तित्तु ए॑न्
ऊनिल् उयिरिल् उणर्विनिल् निन्र
ओ॑न्रै उणर्न्देने ॥ 4

2935\. निन्र ओ॑न्रै उणर्न्देनुक्कु अदनुळ्
नेर्मै अदु इदु ए॑न्रु
ओ॑न्रुम् ओ॑रुवक्कु॑ उणरल् आहादु
उणन्दु॑ मेलुम् काण्बु अरिदु
शॆ॑न्रु शॆ॑न्रु परम् परम् आय्
यादुम् इन्रि-त् तेय्न्दु अर्रु
नन्रु तीदु ए॑न्रु अरिवु अरिदु आय्
नन्राय् ज्ञानम् कडन्ददे ॥ 5

2936\. नन्राय् ज्ञानम् कडन्दु पोय्
नल् इन्दिरियम् ए॑ल्लाम् ईर्त्तु॑
ओ॑न्राय् क् किडन्द अरुम् पे॑रुम् पाळ्
उलप्पु इल् अदनै उणन्दु॑ उणन्दु॑
शॆ॑न्रु आङ्गु इनब तुनबङ्गळ्
शॆ॑र्रु क् कळैन्दु पशै अर्राल्
न्रे अप्पोदे वाडु
अदुवे वीडु वीडा मे ॥ 6

2934 जो सब चेतनों का तथा अचेतनों का पूर्ववर्ती (अर्थात् कारण) है, जो स्वयं (विष्णु) शिव और ब्रह्मा बन कर वर्धित अद्वितीय कारण है, उसको मैंने जाना कि वह मैं हो कर रहा (अर्थात् मेरे शरीरवर्ती जीवात्मा की भी वह आत्मा है।) (जीवात्मा के विषय मे मैंने जाना कि) वह मधु और दूध, इक्षुरस और अमृत के समान रसमय होता है, और (मेरे) शरीर, प्राण तथा ज्ञान मे वह स्थित है। (इस आत्मा का अंतर्यामी आत्मा होने से परमात्मा जीववाची 'अहम्' शब्द से वाच्य होता है)। 4

[पिछले चार पद्य परमात्मप्रधान है और उन मे परमात्मा के शरीर होने के कारण जीवात्मा का भी उल्लेख है। अगले चार पद्य (5–8) जीवात्मा मात्र के प्रतिपादक है।]

2935 (भगवत्कृपा से मैंने जान लिया कि जीवात्मा का स्वरूप इस प्रकार है—(प्राकृत पदार्थ नश्वर और नानारूप के है वैसा न हो कर) जीवात्मा नित्य और एकस्वरूप है (अर्थात् ज्ञानस्वरूप है)। उसका सूक्ष्म और विलक्षण स्वभाव ऐसा है कि कोई भी किसी प्रकार उसे नहीं जान सकता। न तो वह वैसा है, न ऐसा। (अर्थात् अनुभूत पदार्थो से तुल्य नहीं, और अब अनुभूयमान वर्तमान पदार्थो से तुल्य नही)। किसी प्रकार उसे जान लें, तब भी (योग आदि उपायानुष्ठान से) प्रत्यक्ष देखना दुर्लभ है। वह परात्पर है (अर्थात् देह इद्रिय आदि से उत्कृष्ट प्राण से भी उत्कृष्ट है)। इस प्रकार (अन्नमय प्राणमय आदि से) ऊपर जा जा कर उनके स्वभाव से अस्पृष्ट है। अतिसूक्ष्म हो कर उनसे असंबद्ध है। (अर्थात् प्राकृत पदार्थ जैसे गुण–दोष के तारतम्य से युक्त नहीं।) यह कहना अशक्य है कि यह आत्मा गुणयुक्त है अथवा दोषयुक्त है। वह ज्ञानानंदस्वरूप है। वह (इन्द्रिय जन्य) ज्ञान का अविषय है।

[इस पद्य मे सांख्य दर्शन के अनुसार तत्त्वों की गणना की गई है।] 5

2936 (विषयसंग से दूर रहने से) शुद्ध आत्मस्वरूप शुद्ध है। (वैषयिक) ज्ञानागोचर है। भव्य इन्द्रियो को जीत कर, (आत्मा से) एक हो कर पड़े, दुस्तर, अपरिच्छिन्न और अंतरहित प्रकृति तत्त्व को (श्रवण मनन आदि से) जान जान कर, (उससे भी आगे) जाना है। वहा (आत्मविषयक) सुखदुःखो को हेतु सहित दूर कर के, उनकी वासना से भी अस्पृष्ट हो कर रहें तो, उसी दिन और उसी क्षण (सांसारिक दोषों से) मुक्ति प्राप्ति होती है। वही (आत्मानुभव रूप) मोक्ष है। (अर्थात् कैवल्य है)। (परमात्मा का विशेषण है जीवात्मा। विशिष्ट परमात्मानुभव मे विशेषणभूत जीवात्मानुभव के अंतर्भूत होने से) यह आत्मानुभव भी मोक्ष कहलाता है। (और प्राप्य माना जाता है)।

[इस पद्य मे कहते हैं कि इंद्रियों को जीत कर योगाभ्यास से प्रकृति से विमुक्त आत्मस्वरूप को महाक्लेश से साक्षात्कार कर सकते हैं।] 6

2937. अदुवे वीडु वीड पे॑र्‌रु
इन्‌बम् तानुम् अदु तेरि
ए॑दुवे तानुम् पर्‌रु इन्‌रि
यादुम् इलिहळ् आहिर्‌रिल्
अदुवे वीड वोडु पेर्‌रु इन्‌बम्
तानुम् अदु तेरादु
'ए॑दुवे वीड् ए॑दु इन्‌बम ?' ए॑न्‌रु
ए॑य्‌त्तार् ए॑य्‌त्तार् ए॑यत्तारे ॥ 7

2938. 'ए॑य्‌त्तार् ए॑य्‌त्तार् ए॑य्‌त्तार्' ए॑न्‌रु
इळ्ळत्तारुम् पुरत्तारुम्
मो॑य्‌त्तु आऌगु अलरि मुयङ्‌ग-त् ताम्
पोहुम् पोदु उन्‌मत्तर पोल्
पित्ते एरि अनुरागम्
पा॑ळियुम् पोदु ए॑म् पे॑म्मानोड्
ओ॑त्ते शे॑न्‌रु अऌगु उळम् कूड-क्
कूडिर्‌राहिल् नल् उरैप्पे ॥ 8

2939. कूडिर्‌राहिल् नल् उरैप्पु-क्
कूडामैये-क् कूडिनाल्
आडल् परवै उयर् को॑डि ए॑म्
आयन् आवदु अदु अदुवे
वीडै-प् पण्णि ओ॑रु परिशे
ए॑दिर्‌वम् निहळ्‌वुम् कळिवुम् आय्
ओडि त् तिरियुम् योगिहळ्म्
उळरुम् इल्लै अल्लरे ॥ 9

2937 यह स्पष्ट जान कर कि (परमात्मा के शेषभूत) शुद्ध आत्मा की प्राप्ति ही मोक्ष है, और वह शुद्धात्मानुभव ही मोक्षप्राप्ति जन्य आनंद है, किसी वस्तु से सग न रख कर, उसकी वासना से भी बिरहित हो सकते तो, वही मोक्ष है; मोक्षप्राप्तिजन्य आनंद भी वही है। इस विशदज्ञान के बिना जो (चित्त के दौर्बल्य के कारण) इस सन्देह में पडे रहते हैं कि मोक्ष क्या है और मोक्षानंद क्या है, वे रहते हैं दुखी ही, रहते हैं दुखी ही। 7

2238 'मर गए, मर गए, मर गए' कहते हुए घरवाले और पडोसी घेर कर वहा क्रन्दन करते हुए जब शरीर के ऊपर गिर पडते हैं, तब शरीर छोड कर निकलते समय (अर्थात् अंतिमक्षण मे) मरनेवाले मनुष्यों की बुद्धि में उन्मत्तों के समान एक क्षोभ हो जाता है और (अपना भार्या पुत्र आदि को देख कर उन पर) अनुराग की वर्षा सी करते हैं। उस समय यह ध्यान कर के कि हमारो यह आत्मा भी परमात्मा के समान ज्ञानानन्दस्वरूप है, वे यदि उस आत्मा पर मन लगा सकते हैं और शुद्धात्मविषयक वह अन्तिमस्मृति कर पाते हैं तो, महान् लाभ है। (इतने क्लेश के साथ योगानुष्ठान कर के आत्मविषयक दुष्प्राप ज्ञान प्राप्त करने पर भी यदि वे आत्मविषयक अन्तिमस्मृति नहीं करते तो उनका सब क्लेश व्यर्थ होगा। अन्तिमस्मृति होती है तो आत्मप्राप्ति होगी। सत श्रीशठकोप कहते हैं इतने दुर्लभ आत्मज्ञान को ईश्वर ने अपनी कृपा से मुझे प्रदान किया।) 8

2939 ("परमात्मा और जीवात्मा का भेद अपरमार्थ है; अभेद ही सत्य है।" यह है कई लोगों का कथन। परंतु यह ठीक नहीं। क्योंकि जीव नित्यसंसारी है और परमात्मा निरतिशयविलक्षण हैं।) इन दोनो का ऐक्य यदि हो जाए तो वह अलभ्यलाभ है। (शशविषाण आकाशपुष्प वन्ध्यासुत आदि) असंभव वस्तुओं की प्राप्ति यदि संभव हो तब वह जीव वस्तु हमारे मायी (अर्थात् आश्चर्य शक्तियुक्त परमात्मा) हो सकता है जिसके उच्छ्रित ध्वज में नृत्यत् गरुड विद्यमान है। वह वही है। (अर्थात् वह जीव वस्तु ही है)। (वह कभी परमात्मा नहीं होती।) (यदि तत्त्व यही है तो इसके विरुद्ध जीवात्मा को ही परमात्मा कहने की भावना कैसे उत्पन्न हुई? इस का उत्तर देते हैं)—किसी प्रकार से (अर्थात् अपनी बुद्धि कौशल से) मोक्ष की कल्पना कर, भविष्य वर्तमान और भूतकाल में विद्यमान और दौड कर (उसका उपदेश देते हुए) संचरित योगी जन तो हैं। यह नहीं कि ऐसे लोग नहीं हैं। 9

2940. उळरुम् इल्लै अल्लराय्
उळर् आय् इल्लै आहियै
उळर् ऍम ऑरुवर् अवर् वन्दु ऍन्
उळ्ळत्तु उळ्ळे उरैहिन्रार्
वळरुम् पिरैयुम् तेय् पिरैयुम्
पोल अशैवुम् आक्कमुम्
वळरुम् शुडरुम् इरुळुम् पोल्
तॆरुळुम् मरुळुम् मायत्तोमे ॥ 10

2941. तॆरुळुम् मरुळुम् मायत्तु-त् तन्
तिरुन्दु शॆम्पॊन् कळल् अडि-क् कीळ्
अरुळि इरुत्तुम् अम्मान् आम्
अयन् आम् शिवन् आम् तिरु मालाल्
अरुळ प् पट्ट शडकोपन्
ओर् आयिरत्तुळ् इप्-पत्ताल्
अरुळि अडि-क् कीळ् इरुत्तुम् नम्
अण्णल् करु माणिक्कमे ॥ 11

2940 (अगले पद्य में कहते हैं कि जीवात्मपरमात्म स्वरूप का ज्ञान मुझे प्रदान कर कुदृष्टि मतानुयायी होने से मुझे बचा कर परमात्माने कृपा की जिससे मैं सर्वदुःखविहीन हूं।)

हमारे अद्वितीय परमात्मा का अस्तित्व ऐसा है कि (आश्रितों के विषय में) अविद्यमान न हो कर विद्यमान है और (अनाश्रितों के विषय में) अविद्यमान हो कर विद्यमान है। वे स्वयं आ कर मेरे हृदय के भीतर नित्यवास करते हैं। 'शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष में चंद्र की वृद्धि और क्षय के समान आत्मा में भी वृद्धि और क्षय है तथा वर्धमान भास्कर और अंधकार के जैसे आत्मा को भी ज्ञान और अज्ञान होता है'—इस प्रकार के विपरीत ज्ञान से जो दुःख होता था सब का हमने अंत कर दिया अतः परमत्मा ने हमें बता दिया कि आत्मा एकरूप है। 10

2941 (सांसारिक) ज्ञान और अज्ञान दूर कर के अपने अरुण रुचिर स्पृहणीय पादमूल में स्थापित करते स्वामी, अज तथा शिव (अन्तरात्मा) होते श्रीमन्नारायण से अनुगृहीत श्रीशठकोप की अद्वितीय सहस्रगीति में इस दशक (के पठन) से हमारे स्वामी नीलमणिवर्ण भगवान् कृपा कर के अपने पादमूल में रख लेते हैं। 11

VIII. ix. करु माणिक्क मलै

2942\. करु माणिक्क मलै मेल् मणि-त्
तडम् तामरै-क् काडुहळ् पोल्
तिरु मार्वु वाय् कण् कै उन्दि काल्
उडै आडैहळ् शॅय्य पिरान्
तिरु माल एॅम्मान् शॅळ् नीर् वयल्
कुट्ट नाट्टु-त् तिरु-प् पुलियूर्
अरु मायन् पेर अन्रि-प् पेच्चु इलळ्
अन्नैमीर्! इदर्कु एॅन् शॅर्हेनो? 1

2943\. अन्नैमीर्! इदर्कु एॅन् शॅय्हेन्?
अणि मेरुविन् मीदु उलवुम्
तुनन्नु शूळ् शुडर् आयिरुम्
अन्रियुम् पल् शुडर्हळुम् पोल्
मिन्नु नीळ् मुडि आरम् पल् कलन्
तान् उडै एॅम् पॅरुमान्
पुन्नै अम् पॉळिल् शूळ् तिरु-प्
पुलियूर् पुहळुम् इवळे॥ 2

2944\. पुहळुम् इवळ् निन्रु इरा-प् पहल्
पॉरु नीर्-क् कडल् ती-प् पट्टु एॅङ्गुम्
तिहळुम् एॅरियॉडु शॅल्वदु ऑप्प-च्
चेळुम कदिर् आळि मुदल्
पुहळुम् पॉरु पडै एन्दि-प् पोर् पुक्कु
अशुररै-प् पॉन्रुवित्तान्
तिहळु मणि नॅडु माडम् नीडु
तिरु-प् पुळियूर वळमे॥ 3

VIII. ix. करुमाणिक्क मलै

(नील माणिक्य पर्वत)

(कुट्ट-नाट्टु त्-तिरु-प्-पुलियूर क्षेत्र—केरलप्रांत)

[भगवत्सौन्दर्य के अनुभव जनित प्रीति परवश हो कर श्रीशठकोप नायिकाभाव में आ जाते हैं। पुलियूर भगवान् पर नायिका का प्रेम देख कर सखियां माता से निवेदन करती हैं कि उसे उस नायक के हाथ समर्पित करो।

यही एक दशक है जिसमें प्रीति में अन्यापदेश है (अर्थात् संत का नायिकाभाव होता है। सर्वत्र विरह दुःख के कारण ही नायिकाभाव है।]

2942 नीलमाणिक्य पर्वत पर सुंदर तडाग में विद्यमान सरसिजवन के समान सुंदर वक्ष और अधर, नयन और हस्त, नाभि और चरण, और पीतांबर—इन की कांति से रक्तवर्ण उपकारी प्रभु श्रीमन्नारायण हमारे नायक मनोहर जल संयुत क्षेत्र परिवृत कुट्ट-नाट्टु त् तिरु प्-पुलियूर (क्षेत्र) में विराजमान दुष्प्राप मायी भगवान् के नाम के व्यतिरिक्त और कोई वचन तो यह नहीं बोलती। माताओ! इसको मैं क्या करूं? (तुम ही बताओ)। 1

2943 माताओं! इसको मै क्या करू ? रमणीय मेरु (पर्वत) पर संचरित निबिड ज्योति से घिरे सूर्य और असंख्य (ग्रह तारागण आदि) तेजः पदार्थों के सदृश दमकते उन्नत किरीट हार आदि अनेक भूषणों से अलंकृत परमपुरुष के पुन्नाग तरुमय चारु उपवनों से परिवृत तिरुप्पुलियूर की प्रशंसा करती ही रहती है (हमारी नायिका)। 2

2944 उछलती तरंगों से युक्त सागर सर्वत्र अग्नि से व्याप्त हो कर ज्वलित ज्वालाओं के साथ मानो चलता हो, ऐसा प्रदीप्तकिरण चक्र आदि श्लाघनीय युद्धायुधों को धर कर युद्ध में जा कर असुरों का संहार करते नायक के भास्वर मणिमय विपुल प्रासादों से युक्त विशाल तिरुप्पुलियूर के सौंदर्य की प्रशंसा अविच्छिन्न रातदिन यह करती रहती है। 3

2945. ऊर् वळम् किळर् शोलैयुम् करुम्बुम्
पॆरुम् शॆन् नेलुम् शूळ्न्दु
एर् वळम् किळर् तण् पणै-क् कुट्ट
नाट्ट्-त् तिरु-प् पुलियूर्
शीर् वळम् किळर् मू उलहु उण्डु
उमिळ् देव-पिरान्
पेर वळम् किळन्दु अनरि-प्
पेच्चु इलळ् इन्रु इप्-पुनै इळैये ॥ 4

2946. पुनै इळैहळ् अणिवुम् आडै
उडैयुम् पुदुक्कणिप्पुम्
निनैयुम् नीर्मैयदु अन्रु इवट्कु इदु
निन्रु निनैक्क-प् पुकाल्
शुनैयिन् उळ् तडम् तामरै मलरुम्
तण् तिरु-प् पुलियूर
मुनैवन् मू उलहु आळि अप्पन्
तिरु अरुळ् मूळ्हिनळे ॥ 5

2947. तिरु अरुळ् मूळ्हि वैहलुम् शॆळु
नीर् निर-क् कण्ण पिरान्
तिरु अरुळ्हळ्म् शेन्दमैक्कु
अडैयाळम् तिरुन्द उळ
तिरु अरुळ् अरुळाल् अवन् शॆन्रु
शेर् तण् तिरु-प् पुलियूर्
तिरु अरुळ् कमुहु ऒण् पळत्तदु
मेल् इयल् शॆव् इदळे ॥ 6

2945 नगर-सौन्दर्य के द्योतक उपवन, ईख और महा शालिधान से परिवृत हो कर, हल-समृद्धि से संपन्न श्रमहर खेतों से समन्वित कुट्ट-नाट्टु त्-तिरु प्-पुलियूर में जो विराजमान है, मंगल गुण समृद्धि के द्योतक लोकत्रय-निगरण और उद्गिरण करते देवाधिदेव के नाम-माधुर्य को सोत्साह बोलने के व्यतिरिक्त आज भूषणभूषित यह सुन्दरी अन्य वचन बोलती ही नहीं। 4

2946 हमारे पहनाए भूषणो को नये प्रकार से सजाना, वस्त्र की कांति, शरीर की अभिनव शोभा, इत्यादि पर कुछ ध्यान लगा कर विचार कर देखें तो, इसका यह वैलक्षण्य (लोकरीति से) समझने के प्रकार से नहीं। (लोकविलक्षण एक घटना हुई होगी।) (मैं इस निश्चय पर आती हूं कि) विकसित विशाल सरसिज सरोवर से युक्त शीत तिरुप्पुलियूर के नायक लोकत्रयरक्षक सर्वेश्वर की सुंदर कृपा सागर में यह मग्न हो गई। 5

2947 महासागर-सवर्ण प्रभु कान्ह की श्रीकृपा में अनेक काल से इस नायिका के मग्न हो कर रहने के, तथा (संभोग दशा में) उसके श्रीकृपामूल लीलाओं का विषय रहने के सूचक स्पष्ट चिह्न तो बहुत से हैं इस में। श्रीकृपा को प्रदान करने के लिए स्वयं आ कर प्रभु से समाश्रित शीत तिरुप्पुलियूर में श्रीकृपा से वर्धित क्रमुक वृक्ष के दर्शनीय फल के समान है इस कोमल स्वभाव सुंदरी का अरुण अधरपल्लव। 6

2948. मॆल् इलै-च् चॆल्व वण् कॊडि पुल्ह
वीङ्गु इळम् ताळ् कमुहिन्
मल् इलै मडल् वाळै ईन् कनि
शूळ्न्दु मणम् कमळ्न्दु
पुल् इलै त् तॆङ्गिन् ऊडु काल्
उलवुम् तण् तिरु प पुलियूर्
मल्लल् अम् शॆल्व-क् कण्णन् ताळ्
अडैन्दाळ् इम् मडवरले ॥ 7

2949. मडवरल् अन्नैमीर्हट्कु ऎन् शॊल्लिच्
चॊल्लुहेन् मल्लै-च् चॆल्व
वडमोळि मरै वाणर् वेळ्वियुळ्
नॆय् अळल् वान पुहै पोय्
तिड विशुम्बिल् अमरर् नाट्टै मरैक्कुम्
तण तिरु-प पुलियूर
पड अरवु अणैयान् तन् नामम्
अल्लाल परवाळ् इवळे ॥ 8

2950. परवाळ् इवळ् निन्रु इरा-प् पहल्
पनि नीर् निर-क् कण्ण पिरान्
विरवार् इशै मरै वेदियर् ऒलि
वेलैयिन् निन्रु ऒलिप्प
करवु आर् तडम् तॊरुम् तामरै-क्
कयम् तीविहै निन्रु अलरुम्
पुरवु आर् कळनिहळ् शूळ् तिरु-प
पुलियूर्-प् पुहळ अन्रि मररे ॥ 9

2948 कोमल पल्लव संपत् से समृद्ध हरीभरी पान की लता से आलिंगित हो कर हर्ष से वर्धमान व्राल स्थाणुयुत क्रमुकवृक्षों के पार्श्व में अत्यधिक पत्रों से समन्वित कदली वृक्ष के मधुर फलो का आलिगन कर, उसकी सुगंध से सुरभित हो कर मंद मारुत स्निग्ध पर्ण नारियल-तरु-खंडों से हो कर जहां बहता रहता है ऐसे तिरुप्पुलियूर में विराजमान निरवधिक सौंदर्य संपत् से श्रीमान् कान्ह के चरण प्राप्त कर भव्य सुंदरी ने आनंद का अनुभव किया। 7

2949 इस भव्य सुंदरी के विषय में क्या बोल कर मैं बताऊं, तुम माताओ को' जहां निरवधिक संपत् से युक्त, संस्कृतभाषा तथा वेद में पारंगत ब्राह्मणो के यज्ञ में आहुत घृत से ज्वलित अग्नि का ऊंचा धूम आकाश में उठ कर अमरलोक को ढक लेता है, ऐसे शीत तिरुप्पुलियूर में विराजमान विकसितफण सर्पशायी के नाम के व्यतिरिक्त कुछ नहीं बोलती यह। ८

2950 शीतल सागर वर्ण प्रभु कान्ह जहां विराजमान है, उच्च स्वरयुत गीति से समन्वित साम वेद को गाते ब्राह्मणों का घोष सागर-ध्वनि से भी बढ कर जहां ध्वनित होता है, जहां मगरों से पूर्ण प्रति तडाग में पंकज-वन दीपिका के समान प्रफुल्ल है, उर्वरे क्षेत्रों से परिवृत उस तिरुप्-पुलियूर की प्रशंसा के व्यतिरिक्त रात-दिन लगातर यह नायिका और कुछ नहीं बोलती। ९

2951. अऩ्रि मऱ्ऱु ओर् उपायम् ऍऩ्
    इवळ् अण् तण् तुळाय् कमळदल् ?
कुऩ्र मा मणि माड माळिहै-क्
    कोल-क् कुळाङ्गळ् मलिह
तॆऩ् तिशै-त् तिलदम पुरै-क् कुट्ट
    नाट्टु-त् तिरु-प् पुलियूर्
निऩ्र माय-प् पिराऩ् तिरु अरुळ् आम्
    इवळ नेर् पट्टदे ॥ 10

2 52. नेर् पट्ट निरै मू उलहुक्कुम्
    नायकऩ् तऩ् अडिमै
नेर् पट्ट तॊण्डर् तॊण्डर् तॊण्डर्
    तॊण्डऩ् शडकोपऩ् शॊल्
नेर् पट्ट तमिळ् मालै आयिरत्तुळ्
    इवैयुम् ओर् पत्तुम्
नेर् पट्टार अवर् नेर् पट्टार्
    नॆड्ड मार्कु अडिमै शॆय्यवे ॥ 11

2951 नायक के संयोग के अतिरिक्त और क्या कारण है इस (के शरीर) से सुंदर और शीतल तुलसी की सुगंध निकलने का? पर्वत तुल्य अनर्घ मणिमय प्रासाद तथा हर्म्य इनके सुंदर समूह जहां भरे रहते हैं, और जो दक्षिण दिशा के तिलक के समान है, उस कुट्ट्-नाट्टु त्-तिरु-प्-पुलियूर में विराजमान मायी प्रभु की मधुर कृपा यह प्राप्त कर चुकी है। (नहीं तो इस की तुलसी-गंध का और क्या कारण है?)। 10

2952 परिपूर्ण लोकत्रय के अनुरूप नायक की सेवा को प्राप्त दासों के दासों के दासों के दास शठकोप के रचित अनुरूप शब्दयुक्त तमिलमालासहस्र में इस दशक का अध्ययन करने का सौभाग्य जिन्हें है वे सर्वेश्वर की सेवा के सुयोग्य हो जाते हैं। 11

VIII. x. नॆँडु मार्कु अडिमै

2953. नॆँडु मार्कु अडिमै शॆँय्वेन् पोल्
अवनै-क् करुद वञ्जित्तु
तडुमार्रु अर्र तो-क् कदिहळ् मुर्रुम्
तविर्न्द शदिर् निनैन्दाल्
कॊँडु मा विनैयेन् अवन् अडियार् अडियै
कूड़म् इदु अल्लाल्
विडुम् आरु ऍन्पदु ऍन् अन्दो!
वियन् मू उलहु पॆँरिनुमे? 1

2954. वियन् मू उलहु पॆँरिनुम् पोय्-त्
ताने ताने आनालुम्
पुयल् मेहम् पोल् तिरु मेनि अम्मान्
पुनै पूम् कळल् अडि-क् कीळ
शयमे अडिमै तलै निन्रार्
तिरु-त् ताळ् वणङ्गि इम्मैये
पयने इन्बम् यान् पॆँर्रदु
उरुमो पावियेनुक्के? 2

2955. उरुमो पावियेनुक्कु इव्
उलहम् मून्रुम् उडन् निरैय
शिरु मा मेनि निमिर्त्त ऍन्
शॆँम् तामरै-क् कण् तिरु-क् कुरळन्
नरु मा विरै नाळ् मलर् अडि-क् कीळ्-प
पुहुदल् अन्रि अवन् अडियार्
शिरु मा मनिशर् आय् ऍन्नै
आण्डार् इङ्गे तिरियवे॥ 3

VIII. x. नेडुमार्क्कु अडिमै

(अति व्यामोह युक्त की सेवा)

[भगवान् से भी भगवद्भक्त परमभोग्य हैं]

2953 (अपने भक्तों पर) अतिव्यामोह से युक्त (भगवान्) की सेवा करने के लिए मैंने उसका ध्यान किया तब (पीडा देने में) अप्रतिहत दुष्कर्म सब के सब मुझ से कहे बिना धोखा दे कर छूट गए। यदि विचार कर देखें कि सब से श्रेष्ठ क्या है, (यह सिद्ध होता है कि) भगवान् के भक्तो की चरण-प्राप्ति ही श्रेष्ठ है। इस निर्णय के अनंतर घोर महापापी मुझ को भक्त चरणों को प्राप्त किए बिना उसे तजना कैसे संभव है, चाहे अद्भुत लोकत्रय का ऐश्वर्य ही प्राप्त हो। (ऐश्वर्य को त्यागना ही चाहिए)। हाय! (यह बताने की भी आवश्यकता है ?) 1

2954 अद्भुत लोकत्रय ऐश्वर्य की प्राप्ति, अथवा अपने शुद्ध आत्मस्वरूप का अनुभव (अर्थात् कैवल्यानुभव यह मैं नहीं चाहता। वर्षोन्मुख मेघ से उपमित श्रीविग्रह से युक्त स्वामी के पुष्पो से तथा कटक से अलंकृत पाद मूल में स्वयं ही सेवा सोमा में स्थित (भक्तो) के श्रीचरणों की प्रणति कर इसी लोक में फलरूप आनंद को प्राप्त करते मुझ पापी को वह ऐश्वर्य और कैवल्य दोनो ही क्या अनुरूप होंगे ? (अर्थात् भगवत सेवा के आगे ऐश्वर्य और कैवल्य दोनो ही तुच्छ है।) [यह कथनीय नहीं। स्पष्ट है। मेरे पाप के कारण मुझे यह कहना पडता है।] 2

2955 जब भगवान् के दास, जो छोटे और महान् मानुष हैं और मुझे दास के रूप में स्वीकार करते है, तथा जो इस लोक में संचार करते रहते हैं, उन्हें छोड कर, श्रीवामन के उत्तम सुगंध से युक्त अभिनव सरसिजसदृश पादमूल प्राप्त करना क्या मुझ पापी को श्रेष्ठ होगा ? श्रीवामन—जिसने इस लोकत्रय में एक साथ व्याप्त होने के लिए आपना छोटा और महिमायुक्त विग्रह बढाया और जो मेरे रक्तांबुजाक्ष है। (भगवत्सेवा से भी बढ कर है भागवतसेवा।)

[छोटे और महान् मानुष—अन्यमनुष्य जैसे आकार में छोटे हैं जिन्हें अन्नपानादि धारक पोषक हैं। परंतु भगवद्भक्ति और ज्ञान में नित्यसूरियों से भी बढ़ कर हैं—वे हैं भागवतोत्तम।] 3

2956. इङ्गे तिरिन्देर्कु इळु क्कुर्रु ऍन् ?
इरु मा निलम् मुन् उण्डु उमिळ्न्द
शॆम् कोलत्त पवळ वाय्-च्
शॆम् तामरै-क् कण् ऍन् अम्मान्
पॊङ्गु एळ् पुहळ्हळ् वायवाय्-प्
पुलन् कॊळ् वडिवु ऍन् मनत्तदु आय्
अङ्गु एय् मलर्हळ् कैय वाय्
वळि पट्टु ओड अरुळिले ॥ 4

2957. वळिपट्टु ओड अरुळ् पॆर्रु
मायन् कोल मलर् अडि-क् कीळ्
शुळि पट्टु ओडुम् शुडर्-च् चोदि
वॆळ्ळत्तु इन्बुर्रु इरुन्दालुम्
इळि पट्टु ओडुम् उडलिनिल्
पिरन्दु तन् शीर् यान् कर्रु
मॊळि पट्टु ओडुम् कवि अमुदम्
नुहर्च्चि उरुमो मुळुदुमे ? 5

2958. नुहर्च्चि उरुमो ? मू उलहिन्
वीडु पेरु तन् केळ् इल्
पुहर्-च् चॆम् मुहत्त कळिरु अट्ट
पॊन् आळि-क् कै ऍन् अम्मान्
निहर्-च् चॆम् पङ्गि ऍरि विळिहळ्
नीण्ड अशुरर् उयिर् ऍल्लाम्
तहर्त्तु उण्डु उळलुम् पुट् पाहन्
पॆरिय तनि मा-प् पुहळे ॥ 6

2956 विशाल महापृथिवी को पुरा काल में जिसने निगल के उगल दिया, जो सुंदर रक्त विद्रुमाधर और रक्तांबुजलोचन है, उस स्वामी के जगद्व्यापी और विश्वविख्यात गुणों का मुंह से कीर्तन कर, इंद्रियग्राही रूप मेरे मन में रख के ध्यान कर, उसके अनुरूप पुष्प हाथ से समर्पित कर भक्तानुष्ठित मार्ग मे चल कर जीने की कृपा करते है तो इस संसार मे घूमते फिरते मुझे क्या हानि है ? 4

2957 (कैंकर्य के) मार्ग चुन कर उस मे चलने के अनुकूल परमात्मा की कृपा प्राप्त कर, भ्वर के साथ प्रवाहित प्रदीप्त स्वयं ज्योतिरसमुद्र मे (अर्थात् परमधाम मे) परमपुरुष के सुंदर कमलचरणमूल मे निरतिशयानन्द का अनुभव करते रहना, साथ ही अन्य (अर्थात् ऐश्वर्य और कैवल्य को भी प्राप्त करते रहना—यह एक पक्ष मे है। अन्य पक्ष मे है—निदा विषय हो कर चलते शरीर मे जन्म ले कर परमात्मा के मगल गुणो का अनुभव कर के उस अनुभव परीवाह से निकलते शब्दो से रचित (संतो के प्रबंधो की) कवितामृत का मुझे आस्वादन करते रहना। (इन दानो मे) मोक्षानद क्या सतो के प्रबंधानुभव के समान होगा ? भागवतों के हर्ष हेतु प्रबंधाध्ययन से भागवत प्रसन्न होते है। इस प्रकार भागवतो की सेवा हाती है। 5

2958 (अगले पद्य मे कहते ह कि मोक्षानंद क्या, साक्षात् परमपुरुष का अनवधिकातिशयानन्द भी भागवत प्रीति हेतु सतप्रबधद्वारा भगवद्गुणानुभव के समान नही।)

निस्समान कान्ति से युक्त रक्तमुख हस्ती (कुवलयापीड) के संहारक और दर्शनीय चक्रहस्त मेरे स्वामी गरुडारूढ भगवान् के अपरिच्छिन्न अद्वितीय और अतिभोग्य गुणो का (भागवतप्रीति हेतु दिव्य प्रबध द्वारा) अनुभव करने के समान (सकल्पमात्र से) लोकत्रय की सृष्टि करते सर्वेश्वर का ईश्वरत्व ही होता है क्या ? गरुड—जो जन्मानुरूप रक्तकेश अग्नि नयन पीन शरीर से युक्त असुरो पर आक्रमण कर उनके प्राण खाते हुए संचरित होता है। 6

2959. तनि मा-प् पुहळै ए॑ऩ्-ऩानुरुम्
निऱ्कुम् पडिया-त् तान् तोन्ऱि
मुनि मा-प् पिरम मुदल् वित्तु आय्
उलहम् मून्ऱुम् मुळैप्पित्त
तनि मा-त् तॆ॑य्व मलर् अडि-क् कीऴ-प्
पुहुदल् अन्ऱि अवन् अडियार
ननि मा-क् कलवि इन्बमे
नाळुम वायक्क नङ्गटके ॥ 7

2960. नाळुम् वाय्क्क नङ्गट्कु
नळिर् नीर्-क् कडलै-प् पडैत्त्, तन्
ताळुम् तोळुम् मुडिहळुम्
शमन् इलाद पल परप्पि
नीळुम पडर् पूम् कर्पह-क्
कावुम् निऱै पल् नाऱिऱ्ऱिन्
कोळुम् उडैय मणि मलै पोल्
किडन्दान् तमर्हळ् कूट्टमे । 8

2961. तमर्हळ् कूट्ट वल् विनैयै
नाशम् शॆ॑य्युम् शदुर् मूर्त्ति
अमर् कोळ् आऴि शङ्गु वाळ्
विल् तण्डु आदि पल् पडैयन्
कुमरन् कोल ऐङ्-कणै वेळ् तादै
कोदु इल् अडियार् तम्
तमर्हळ् तमर्हळ् तमर्हळ् आम्
शदिरे वाय्क्क तमि येर् के ॥ 9

2959 (एकांत में अपना भगवदनुभव मैं नहीं चाहता। भागवतों के संग में रह कर भगवदनुभव करना ही मेरा अभीष्ट है।)

अनुपम महाख्याति जिससे सर्वदा रहे इस प्रकार आविर्भूत हो कर, (सृष्टि का) संकल्प करते परब्रह्म शब्द वाच्य प्रथम बीज (अर्थात् प्रथम कारण) हो कर जगत्त्रय का उत्पन्न करते अद्वितीय परदेवता के पल्लवसम पादमूल में प्रविष्ट हो जाने का विभव न हो; उनके दासों की अत्युत्कृष्ट संगति का सुख ही हमें सर्वकाल में प्राप्त हो। 7

2960 शीतल जलयुक्त सागर की सृष्टि कर उस पर अतुल अनेक चरण, भुज और सिर फैला कर उन्नत और पुष्पित हो कर फैले कल्पकवन के समान तथा पूर्ण अनेक सूर्यों के तेज से युक्त मणिपर्वत के समान जो शयित है उसके दासों का सुख ही हमें सदैव प्राप्त हो। 8

2961 जो अपने दास समूह के प्रबल पापों का नाश करने में चतुर मूर्ति है, जो युयुत्सु, चक्र, शंख, खड्ग, धनुष गदा आदि अनेक आयुधधारी है, जो कुमार है (अर्थात् युवक है), जो सुंदर पंचबाण कामदेव के तात (अर्थात् जनक) है, उनके निर्दोष दासों के दासों के दासों के दास बन जाने का चातुर्य (अर्थात् सौभाग्य) असहाय मुझे प्राप्त हो जाय। 9

2962. वायॣक्क तमियेऱ्कु ऊळि तोरु
ऊळि ऊळि मा कायम्
पू-क् कोॅळ् मेनि नान्गु तोळ्
पोॅन् आळि-क् कै एॅन् अम्मान्
नीक्कम् इल्ला अडियार् तम्
अडियार् अडियार् अडियार् एॅन्
कोक्कळ् अवर्क्के कुडिहळ् आय्-च्
चेॅल्लुम् नल्ल कोट्पाडे ॥ 10

2963. नल्ल कोट्पाट्ट उलहङ्गळ्
मून्ऱिन् उळ्ळुम तान् निऱैन्द
अल्लि-क् कमल-क् कण्णनै
अम् तण् कुरुहूर्-च् चडकोपन्
शोॅल्ल-प् पट्ट आयिरत्तुळ्
इवैयुम् पत्तुम् वल्लार्हळ्
नल्ल पदत्ताल् मनै वाळ्वर्
कोॅण्ड पेॅण्डिर् मक्कळे । 11

2962 दर्शनीय अतसीकुसुम सदृश शरीर, चार भुज, और स्पृहणीय चक्रहस्त से शोभायमान मेरे प्रभु के अनपाय दासों के दासों के दासों के दासों के दास ही हमारे स्वामी हैं। उनके ही (दास) कुल हो कर चलने का वांछनीय पुरुषार्थ असहाय मुझे युग युग में कल्प कल्प में प्राप्त होवे।

[इस दशक में त्रिविध दासों का उल्लेख है—स्वयमेव दास, (द्वितीय पद्य में), निर्दोष दास (नवम पद्य में) और अनपाय दास (इस दशम पद्य में)

स्वयमेव दास -भरत जैसे भक्त जो स्वयं प्राप्त अन्य पुरुषार्थों को तज कर भगवद्भक्ति करते है।

निर्दोष दास - शत्रुघ्न जैसे—जो राम को छोड कर भरत का भक्त बना—भगवान् की भी अपेक्षा न कर के भक्तों की भक्ति करते हैं।

अनपाय दास—लक्ष्मण जैसे—जो भगवान् को छोड कर क्षणभर भी नहीं जी सकते है।] 10

2963 ('भागवत शेषत्व ही परमपुरुषार्थ है') इस श्रेष्ठ सिद्धांत से युक्त तीन लोकों में स्वयमेव हर्ष से व्याप्त विकसितदलकमलाक्ष भगवान् पर दर्शनीय शीत कुरूहूर (नगर) के संत शठकोप से रचित सहस्रगीति में जो इन दस पद्यों के अध्ययन में कुशल हैं, वे अनुकूल पत्नी पुत्रों के साथ (भागवतशेषत्व रूप) उत्तम पद में गृहस्थ धर्म निबाहते हुए जीवन बिताएंगे। 11

IX. i. कॊण्ड पॆण्डिर्

2964. कॊण्ड पॆण्डिर् मक्कळ् उररार्
शुर्ऱत्तवर् पिररुम्
कण्डदोडु पट्टदु अल्लाल्
कादल् मर्रु यादुम् इल्लै
ऎण् दिशैयुम् कीळुम् मेलुम्
मुर्रवुम् उण्ड पिरान्
तॊण्डरोम् आय् उय्यल् अल्लाल्
इल्लै कण्डीर् तुणैये ॥ 1

2965. तुणैयुम् शार्वुम् आहुवार् पोल्
शुर्ऱत्तवर् पिररुम्
ऊणैय वन्द आक्कम् उण्डेल्
अट्टैहळ् पोल् शुवैप्पर्
कणै ऒन्राले एळ् मरमुम्
ऎय्द ऎम् कार् मुहिलै
पुणै ऎन्रु उय्य-प् पोहिल् अल्लाल्
इल्लै कण्डीर् पॊरुळे ॥ 2

2966. पॊरुळ् कै उण्डाय्-च् चॆल्ल-क् काणिल्
'पोररि!' ऎन्रु ऎर्रेळुवर्
इरुळ् कॊळ् तुन्बत्तु इन्मै काणिल
'ऎन्ने ?' ऎन्बारुम् इल्लै
मरुळ् कॊळ् शॆय्है अशुरर्
मङ्ग वड मदुरै-प् पिरन्दार्कु
अरुळ् कॊळ् आळ् आय् उय्यल्
अल्लाल् इल्लै कण्डीर् अरणे ॥ 3

IX. i. काण्ड पेण्डिर

(परिगृहीत पत्नी)

(संत परोपदेश मे प्रवृत्त होते है और कहते है कि श्रीमन्नारायण एक ही निरुपाधिक बांधव है।)

2964 (सबंधी समझ कर) परिगृहीत पत्नी और प्रजा, ज्ञाति और अन्य बांधव–सब हमारे हस्त मे द्रव्य (धन आदि) से प्रेम करते है; उसके अतिरिक्त हम से तो कोई स्नेह नही। आठ दिशाएं, नीचे और ऊपर (अर्थात् अधस्तन भूमि पाताल आदि, और उपरितन स्वर्ग आदि लोग) सब को निगलते प्रभु के दास बन कर उज्जीवित होना चाहिए। इसके व्यतिरिक्त दूसरा कोई सहायक नही हमे। 1

2965 (सुखदुःख मे) भागी और (विपत् मे) अपाश्रय जैसे रह कर ज्ञातिजन तथा अन्य मनुष्य हस्तगत कोई प्रयोजन है तो जौक जैसे चूस लेगे। (ऐसा न हो कर) एक बाण से सात साल वृक्षो को विद्ध करते हमारे कालमेघ को नाव समझ कर (दुःखसागर को) पार करने के व्यतिरिक्त दूसरा कोई प्रयोजन नहीं। (दूसरों को अपाश्रय समझने से कोई लाभ नही।)। 2

2966 जब (लोग) देखते है कि हमारे हाथ मे धन है और सुख से जीता है, तब 'जय हो' कहेंगे और (उसके दत्त धन) ग्रहण कर निकल जाएगे। अज्ञानावह दुःखहेतु दरिद्रता उसमे देखते है, तो 'हाय' कहनेवाले भी नहीं। (अनुकंपा दिखाना दूर है।) (अथवा यह भी नही पूछते कि कैसे हो?) क्षोभजनक काम करते और असुरो के संहार के लिए उत्तर मथुरा में जनमे (श्रीकृष्ण) के कृपामात्र बन कर निस्तार पाने के व्यतिरिक्त दूसरी कोई शरण नहीं। 3

2967. अरणम् आवर् अऱ्‌र कालैक्कु
एॅन्ऱु एॅन्ऱु अमैक्कप्पट्टार
इरणम् कॉण्ड तॅप्पर् आवर
इन्ऱि इट्टालुम् अह्दे
वरुणित्तु एॅन्ने? वड मदुरै-प्
पिरन्दवन् वण् पुहळे
शरण् एॅन्ऱु उय्य-प् पोहल्
अल्लाल् इल्लै कण्डीर् शदिरे॥ 4

2968. शदिरम् एॅन्ऱु तम्मै-त् तामे
शम्मदित्तु इन् मॉळियार्
मदुर वोगम् तुऱ्‌रवरे वैहि
मऱ्‌रु ऑन्ऱु उरुवर्
अदिर् कॉळ् शॅऱहै अशरर मङ्ग
वड मदुरै-प् पिरन्दार्कु
एॅदिर् कॉळ् आळ् आय् उय्दल्
अल्लाल् इल्लै कण्डीर् इनबमे॥ 5

29,9 इल्लै कण्डीर् इनबम् अन्दो'
उळ्ळदु निनैयादे
तॉल्लैयार्हळ् एॅत्तनैवर्
तोन्ऱि-क् कळिन्दु ऑळिन्दार्?
मल्लै मूदूर् वड मदुरै-प्
पिरन्दवन् वण् पुहळे
शॉल्लि उय्य-प् पोहल् अल्लाल्
मऱ्‌रु ऑन्ऱु इल्लै शुरुक्के॥ 6

2967 यह सोच सोच कर कि हमारी रिक्त दशा मे ये रक्षक होंगे जिन्हें द्रव्य दान से हमने प्रसन्न कर रखा, वे ऐसे दभ्र है (अर्थात् नीच स्वभाव के है) कि वे सोचते है कि हमने उनका ऋण चुका दिया। उन्हें कुछ दे कर प्रसन्न नहीं किया, तब भी उनका स्वभाव ऐसा ही होगा। (उनके इस स्वभाव का) वर्णन करने से क्या लाभ है? उत्तर मथुरा मे जनमे श्रीकृष्ण के उदार गुण ही शरण है—ऐसा सोच कर निस्तार प्राप्त करने के व्यतिरिक्त दूसरा कोई चतुर (उपाय) नही। यह निश्चित है। 4

2968 अपने विषय मे स्वयं आप ही सम्मति दे कर (अर्थात् सिद्ध कर के कि हम चतुर है) जिन्होने मंजुभाषिणियो के मधुर भोग का अनुभव किया था वे ही कालांतर मे तद्विपरीत कुछ प्राप्त करते है। (अर्थात् अनादर, अपमान और दुःख प्राप्त करते है।) भयावह कार्यो को करते असुरो का संहार करने के लिए उत्तर मथुरा मे जनमे श्रीकृष्ण का अभिगमन कर के स्वय ही दास बन जाने के व्यतिरिक्त सुख ही नही। यह निश्चित है। 5

2969 (ससार मे) सुख लेश भी नही, समझो। हाय सत्य को न समझ कर, (अर्थात् सर्वकाल मे विद्यमान आनंदमय भगवत्स्वरूप को न जान कर) अनादिकाल से कितने ही लोग उत्पन्न हो कर मर गए। विभव से सपन्न प्राचीन नगर उत्तर मथुरा मे जनमे (श्रीकृष्ण) के उदार गुणो ही का कीर्तन कर उज्जीवित हो जाने के व्यतिरिक्त दूसरा कोई उपाय नही। यही (हमारे उपदेश का) संग्रह है। 6

2970. मऱ्ऱु ऒन्ऱु इल्लै शुरुङ्ग-च्
चॊन्नोन् मा निलत्तु ऎव्-उयिर्क्कुम्
शिऱ्ऱ वेण्डा शिन्दिप्पे अमैयुम्
कण्डीर्हळ् अन्दो!
कुऱ्ऱम् अन्ऱु ऎङ्गळ् पॆऱ्ऱत्तु
आयन् वड मदुरै-प् पिरन्दान्
कुऱ्ऱम् इल शीर कऱ्ऱु वैहल्
वाळ्दल् कण्डीर् गुणमे॥ 7

2971. वाळ्दल् कण्डीर् गुणम् इदु
अन्दो! मायन् अडि परवि
पोळ्दु पोह उळ्ळ किऱ्कुम्
पुन्मै इलादवर्क्कु
वाळ् तुणैआ वड मदुरै-प्
पिरन्दवन् वण् पुहळे
वीळ् तुणे याय्-प् पोम् इदनिल्
यादुम् इल्लै मिक्कदे॥ 8

2972. यादुम् इल्लै मिक्कदनिल्
ऎन्ऱु ऎन्ऱु अदु करुदि
कादु शॆय्वान् कूदै शॆय्दु
कडै मुरै वाळ्क्कैयुम् पोम्
मा तुहिलिन् कॊडि-क् कॊळ्
मा वड मदुरै-प् पिरन्द
तादु शेर् तोळ् कण्णन् अल्लाल्
इल्लै कण्डीर् शरणे॥ 9

2970 (कहने को तो) और कुछ नहीं। संक्षेप से हमने बता दिया। विशाल पृथिवी पर किसी भी जीव को प्रयास करने की आवश्यकता नहीं। चिंतन मात्र ही पर्याप्त है। तुम ही देख लो। हंत! (इस चिंतन से कोई फल नहीं मिले तब भी) कोई दोष नहीं। हमारे गोसमूह चराते (श्रीगोपाल) के जो उत्तर मथुरा में जनमा निर्दोष मंगल गुणों का ज्ञान प्राप्त कर के नित्य आनंद से जीवन बिताना ही उचित है। 7

2971 (भगवद्गुणों के ध्यान के साथ) जीवित रहना ही तो श्रेष्ठ है! हाय! (क्या यह भी हमें कहना है!) मायावी (अर्थात् आश्चर्यमय गुणों से युक्त) भगवान् के चरणों का कीर्तन कर के जो समय बिताना चाहते हैं और जो (विषयसंगरूप) तुच्छ स्वभाव से विरहित हैं, उनके जीवनसाथी होने के लिए उत्तर मथुरा में जनमे (श्रीकृष्ण) के उदार गुणों को ही श्रेष्ठ साथी बना कर जीने से बढ़ कर कुछ भी नहीं। 8

2972 (भगवद्व्यतिरिक्त) किसी एक का (अर्थात् ऐश्वर्य कैवल्य आदि का) बार बार ध्यान कर उसी को श्रेष्ठ मानने लगें तो प्रथम प्राप्त तुच्छ जीवन का अधिकतर पतन ही होगा। यह तो उस प्रवृत्ति के समान है जिसमें कर्ण वेध का प्रयत्न कर व्यक्ति कान को ही फाड़ देता है। उत्तम दुकूल ध्वजों से अलंकृत प्रासादों से युक्त उत्तर मथुरा में जनमे मालालंकृतभुज कान्ह के व्यतिरिक्त दूसरी कोई शरण नहीं। 9

2973. कण्णन् अल्लाल् इल्लै कण्डीर्
शरण् अदु निऱ्क वन्दु
मण्णिन् बारम् नीक्कुदऱ्के
वड मदुरै-प पिऱन्दान्
तिण्णमा नुम् उडैमै उण्डेल्
अवण् अडि शेऱ्ऱु उय्म्मिनो
ऍण्ण वेण्डा नुम्मदु आदुम्
अवन् अन्ऱि मऱ्ऱु इल्लैये 10

2974 आदुम् इल्लै मऱ्ऱु अवनिल्
ऍन्ऱु अदुवे तुणिन्दु
तादु शेर् तोळ् कण्णने-क
कुरुहूर्-च् चडकोपन् शॊन्न
तीदु इलाद ऑण् तमिळ्हळ्
इवै आयिरत्तुळ् इप्-पत्तुम्
ओद वल्ल पिराक्कळ् नम्मै
आळ् उडैयाहळ् पण्डे॥ 11

2973 कान्ह के व्यतिरिक्त और कोई शरण नहीं, समझो। इस सिद्धात को स्थापित करने के लि? आ कर, भूमि का भार दूर करने के लिए उत्तर मथुरा में वह जनमा। अतः अपनी कोई संपत्ति है तो उसके चरण में अर्पित कर के निस्तार पाओ। इस पर सोचविचार मत करना। तुम और तुम्हारी सब वस्तुएं वे ही हैं। (अर्थात् उनके शेष भूत हैं। तुम्हारा कुछ भी नहीं।) 10

2974 यह निश्चय कर के कि उनके होने के व्यतिरिक्त और कोई भी वस्तु नहीं, मालाभूषितभुज कान्ह पर कुरुहूर के शठकोप के रचित दोषविहीन समुज्ज्वल तमिल की सहस्रगीति मे इस दशक का अध्ययन करने में जो कुशल हैं वे उपकारी लोग पहले ही से हमारे स्वामी हो कर रहते हैं। 11

IX. ii. पण्डै नाळाले

2975. पण्डै नाळाले उन् तिरु अरुळुम्
पङ्गयत्ताळ् तिरु अरुळुम्
कॊण्डु निन् कोयिल शोय्त्तु-प् पल् पडि काल्
कुडि कुडि वळि वन्दु आट् चॆय्युम्
तॊण्डरोक्कु अरुळि-च् चोदि वाय् तिरन्दु उन्
तामरै-क् कण्गळाल् नोक्काय्
तॆण् तिरै-प् पॊरु नल् तण् पणै शूळ्न्द
तिरु-प् पुळिङ्गुडि-क् किडन्दाने!

2976. कुडि-क् किडन्दु आक्कम शॆय्दु निन् तोत्तै
अडिमै-क् कुऱ्ऱेवल् शॆय्दु उन् पॊन्
अडि-क् कडवादे वळि वरुहिन्ऱ
अडियरोक्कु अरुळि नी ऒरु नाळ्
पडिक्कु अळवु आह निमित्तै निन् पाद
पङ्गयमे तलैक्कु अणियाय्
कॊडि-क् कॊळ् पॊन् मदिळ शूळ् कुळिर् वयल्
शोलै-त् तिरु-प् पुळिङ्गुडि-क् किडन्दाने॥ 2

2977. किडन्द नाळ किडन्दाय् ऎत्तनै कालम्
किडत्ति उन् तिरु उडम्बु अशैय?
तॊडन्दु कुऱ्ऱेवल् शॆय्दु तोल् अडिमै
वळि वरुम् तॊण्डरोक्कु अरुळि
तडम् कॊळ् तामरै-क् विळित्तु नी ऎळुन्दु उन्
तामरै मङ्गैयुम् नीयुम्
इडम् कॊळ् मू उलहुम् तॊळ इरुन्दु अरुळाय्
तिरु-प् पुळिङ्गुडि-क् किडन्दाने! 3

IX. ii. पण्डै नाळाले

(अनादि काल से)

[तिरु-प्-पुळिङ्गुडि क्षेत्र]

2975 अनादि काल से तुम्हारी भव्य कृपा तथा पद्मजा (लक्ष्मी) की भव्य कृपा प्राप्त कर तुम्हारे मन्दिर में संमार्जन आदि सेवा कर के अनेक प्रकार से वंश-परंपरा से आ कर तुम्हारी सेवा करते हम दासों पर अनुकंपा कर समुज्ज्वल मुख खोल कर आश्वासन के वचन बोल कर) और अपने सरसिजनयनों से देखो— निर्मल तरंगों से युक्त पोरुनल नदी के तीर पर शीतल जलाशयों से परिवृत तिरुप्पुळिङ्गुडि में शयित भगवान्! [पोरुनल—ताम्रपर्णी नदी ।] 1

2976 (दास) कुल के अनुरूप जीवन बिता कर, दास्यभाव की अभिवृद्धि के लिए तुम्हारी पावन सेवा के विविध अन्तरंग कैंकर्य कर के, तुम्हारे चरणों का अनिलंघन किए बिना नियमानुसार हम दास चलते रहते हैं। हम पर कृपा कर के एक दिन भूमि के समपरिमाण बढ़ाया अपना पादपकज मेरा शिरोभूषण बनाओ— ध्वजों से अलंकृत कनकमय प्राचीरों से परिवृत तथा शोत क्षेत्रों से और उपवनों से युक्त तिरु-प्-पुळिङ्गुडि में शयित भगवान्! 2

2977 (तुम्हारी शयन-शोभा देखने के इच्छुक एक भक्त की प्रार्थना से) शायित हुए। तुम कितने ही दिनों से शयित हो। और कितने काल तक शयन करते ही रहोगे? इससे तुम्हारे शरीर को क्लेश तो होगा। तुम्हारा अनुगमन कर के अंतरंग सेवा कर के अनादि दास भाव के मार्ग में ही चलते हम दासों पर कृपा करो। सरोवरव्यापी कमल सदृश नयन खोल कर तुम उठो और तुम और कमलासना (लक्ष्मी) दोनों विशाल लोकत्रय से वंदित हो कर विराजमान होने की कृपा करो— तिरु-प्-पुळिङ्गुडि में शयित भगवान्!

2978. पुळिङ्गुडि-क् किडन्दु वर गुण मङ्गै
एरुन्दु वैकुन्दत्तुळ् निन्रु
तॅळिन्द एॅन् शिन्दै अहम् कळियादे
एॅन्नै आळ्वाय् एॅनक्कु अरुळि
नळिन्द शीर् उलहम् मून्रु उडन् वियप्प
नाङ्गळ् कूत्ताडि निन्रु आर्प्प
पळिङ्गु नीर् मुहिलिन् पवळम् पोल्
कनि वाय् शिवप्प नी काण वारायॆ ॥ 4

2979. पवळम् पोल् कनि वाय् शिवप्प नी काण
वन्दु निन् पल् निला मुत्तम्
तवळ् कदिर् मुरुवल् शॅय्दु निन् तिरु-क् कण्
तामरै तयङ्ग निन्रु अरुळाय्
पवळ नन् पडर्-क् कीळ्-च् चङ्गु उरै पॉरुनल्
तण् तिरु-प् पुलिङ्गुडि-क् किडन्दाय्
कवळ मा कळिर्रिन् इडर् कॅड-त् तडत्तु-क्
काय शिन-प् परवै ऊर्न्दाने ! ॥ 5

2980. काय् शिन-प् परवै ऊर्न्दु पॉन् मलैयिन्
मीमिशै-क् कार् मुहिल् पोल
मा शिन मालि मालिमान् एॅन्रु अङ्गु
अवर् पड-क् कनन्रु मुन् निन्र
काय् शिन वेन्दे ! कदिर् मुडियाने !
कलि वयल् तिरु-प्-पुळिङ्गुडियाय् !
काय् शिन आळि शङ्गु वाळ् विल्
तण्डु एन्दि एॅम् इडर् कडिवाने ! 6

2978 पुळिङ्गुडि (क्षेत्र) में, शयित हो कर, वरगुणमङ्गै (क्षेत्र) में विराजमान हो कर और वैकुंठ (नामक क्षेत्र) में खडे हो कर, मेरे विमल हृदय मध्य से अन्यत्र गए बिना मेरी रक्षा करते (प्रभु)! मुझ पर कृपा कर के स्फटिक-जल से भरे मेघ में विद्यमान प्रवाल-तुल्य पक्व बिंबफलाधर की लालिमा के साथ तुम मेरे नयनों को दर्शन देते हुए आओ जिस से तुम्हारे तापहर मंगल गुण देख कर तीनों लोक एक साथ विस्मय में आ जायं और हम नर्तन कर कोलाहल मचाते रहें। 4

2979 प्रवाल-तुल्य पक्वाधर की लालिमा और अपने दर्शनीय कमल-नयन की कांति के साथ मुझे दर्शन देने आ कर, दंत-ज्योत्स्ना की किरणें अधर पर जिससे गिरें ऐसे मंदस्मित करते हुए खड़े होने की कृपा करो। दिद्रुम लताओ की धनी तह के नीचे जीते शंख-जंतुओं से भरी पोरुनल नदी के तीरस्थ तिरु-प्-पुळिङ्गुडि में शयित भगवान्! मादक-खाद्य-कवल से मत्त गजेंद्र की आर्ति मिटाने के लिए तडाग के तीर पर कोप से ज्वलित गरुड़ विहग को चला कर आगत प्रभु! 5

2980 सुवर्ण गिरि पर (अर्थात् मेरु पर्वत पर) स्थित नील मेघ के समान (शत्रु) दाहक कोपशील गरुड़ पर (आरूढ हो के) चल कर (शत्रु) दाहक कोपशील चक्र और शंख खड्ग और चाप और गदा धारण कर के महाकोपी माली माल्यवान नामके प्रसिद्ध राक्षसों को ध्वस्त करने के लिए उनके आगे उपस्थित (शत्रु) दाहक कोपशील महाराज! समुज्ज्वल किरीटधर! तिरु-प्-पुळिङ्कुडि के स्वामी! हमारे आर्तिहारी! (कमल-नयन-कांति से हमारे सामने उपस्थित हो जाओ)। 6

2981. ए॑म् इडर् कडिन्दु इङ्ग् ए॑न्ने आळ्वाने!
इमैयवर् तमक्कुम् आङ्गु अनैयाय्
शॅम् मडल् मलरुम् तामरै-प् पळन-त्
तण् तिरु-प् पुळिङ्गडि-क् किडन्दाय्!
नम्मुडै अडियर् कवै कण्डु उहन्दु
नाम् कळित्तु उळ नलम् कूर
इम् मड उलहर् काण नी ऑरु नाळ्
इरुन्दिडाय् ए॑ङ्गळ् कण् मुहप्पे॥ 7

2982. ए॑ङ्गळ् कण् मुहप्पे उलहर्हळ् ए॑ल्लाम्
इणै अडि तॉळुदु एळुन्दु इरैञ्जि
तङ्गळ् अन्वु आर-त् तमदु शॉल् वलत्ताल्
तलै-त् तलै-च् चिरन्दु पूशिप्प
तिङ्गळ् शेर् माड-त् तिरु-प् पुळिङ्गुडियाय्
तिरु वैकुन्दत्तु उळ्ळाय्! देवा!
इङ्कण् मा ञालत्तु इदनुळुम् ऑरु नाळ्
इरुन्दिडाय् वीररु इडम् कॉण्डे॥ 8

2983. वीर्रुइडम् कॉण्डु वियन् कॉळ् मा ञालत्तु
इदनुळुम् इरुन्दिडाय् अडियोम्
पोर्रि ओवादे कण् इणै कुळिर-प्
पुदु मलर् आहत्तै-प् परुह
शेर्रिळ वाळै शॅन्नेल् ऊडु अहळुम्
शॅळुम् पणै-त् तिरु-प् पुळिङ्गुडियाय्!
कूर्रमाय् अशुरर् कुल मुदल् अरिन्द
कॉडु विनै-प पडैहळ् वल्लाने! 9

2981 हमारी आर्ति को दूर कर के यहां मेरी रक्षा करते प्रभु! (ब्रह्मादि) देवो को भी वैसे ही करते स्वामी! विकसित रक्तदल कमलो से पूर्ण सरोवर से युक्त उपवनों से परिवृत शीत तिरु-प्-पुळिङ्गुडि मे शयन करते (भगवान्)। हमारे जैसे दासो का (तुम्हारे दर्शन से जनित) कोलाहल देख कर जिस से हम हर्षित हो के आनंदमत्त होवें और हृदय में स्नेह वर्धित हो जाए और अविशेषज्ञ ये लोकवासी भी देख लें इस प्रकार हमारे नयनो के सामने आ कर एक दिन विराजमान हो जाओ। 7

2982 चन्द्रस्पर्शी प्रासादो से युक्त तिरु प्-पुळिङ्गुडि के स्वामी। श्रीवैकुंठ में स्थित देव! इस विशाल महापृथिवी मे इस (तिरु प् पुळिङ्गुडि मे भी प्रतिष्ठा के साथ विराजमान हो जाओ जिसमे हमारे नयनो के सामने लोकवासी सब जन तुम्हारे चरणयुगल की वंदना कर के तुम्हारा समाश्रयण कर के अपने प्रेम को बढ़ाते हुए, अपनी शक्ति के अनुरूप शब्दो मे स्तुति, परस्पर स्पर्धा के साथ कर के, तुम्हारी पूजा करें। ८

2983 तरुण वाळै जाति के मत्स्य पंकोत्पन्न शालिधान के मध्य से हो कर जहां उछलते हैं ऐसे समृद्ध जलाशयों से समन्वित तिरु-प्-पुळिङ्गुडि के स्वामी। मृत्यु हो कर असुर-कुल का उन्मूलन करते वीर! भयंकर कर्म कारी आयुधो को संभालने मे कुशल (पराक्रमी)! उचित स्थान चुन कर प्रतिष्ठा के साथ विशाल महापृथिवी मे इस (तिरु-प् पुळिङ्गुडि) में विराजमान हो जाओ जिससे दास हम तुम्हारी स्तुति कर आंखों से देख कर हृष्ट हो जाएं और अभिनव पुष्पहास सुकुमार शरीर (कांति) का पान करें। 9

2984. कॉॅडु विनै-प् पडैहळ् वल्लैआय् अमरक्कुॅ
इडर् कॅॅड अशुरर्हट्कु इडर् शॅॅय्
कडु विनै नञ्जे ! ऍॅन्नुडै अमुदे !
कलि वयल् तिरु-प् पुळिङ्गुडियाय् !
वडिवु इणै इल्ला मलर् महळ् मऱ्ऱै
निल महळ् पिडिक्कुम् मॅॅल् अडियै
कॉॅडु विनैयेनुम् पिडिक्क नी ऑॅरु नाळ्
कूवुदल् वरुदल शॅॅय्याये ॥ 10

2985. 'कुवुदल् वरुदल् शॅॅयदिडाय्' ऍॅन्ऱु
कुरै कडल् कडैन्दवन् तन्नै
मैवि नन्गु अमर्न्द वियन् पुनल् पॉॅरुनल्
वळुदि नाडन् शडकोपन्
ना इयल् पाडल् आयिरत्तुळ्ळुम्
इवैयुम् ओर् पत्तुम् वल्लाहॅळ्
अ।ुदल् इन्रि उलहम् मून्ऱु अळन्दान्
अडि इणै उळ्ळत्तु ओर्वरि ॥ 11

2984 क्रूरकर्म आयुधों (के संभालने) में निपुण हो कर, अमरों की आर्ति दूर करने के लिए असुरों को दुःख देते उग्र विष। मेरे अमृत। उपजाऊ क्षेत्रों से परिवृत तिरुप्पुळिङ्गुडि के स्वामी! निःसमानरूप पद्मजा (लक्ष्मी) तथा भूमिदेवी से प्रेम से सवाहित कोमल चरण को घोर पापी मैं भी जिससे संवाहन करूं इस प्रकार मुझे अपने पास बुलाओ, अथवा तुम ही मेरे पास आओ। 10

2985 घोषयुक्त सागर का मन्थन करते प्रभु से यह प्रार्थना कर के कि या तो तुम (मुझे अपने पास) बुलाओ या तुम (मेरे पास) आओ जो प्रेम से उनका आश्रय ले कर आश्वस्त हुए और जो आश्चर्यावह जलप्रवाह से युक्त ताम्रपर्णी से सिंचित वळुदि जनपद के स्वामी हैं, उन श्रीशठकोप की वाक्-वृत्ति रूप सहस्र-गीति में इस दशक के अध्ययन में जो कुशल है, वे लोकत्रय-मापक भगवान् के चरणयुग का अपने हृदय में अविच्छिन्न ध्यान करनेवाले होते है। 11

IX. iii. ओर् आयिरम्

2986. ओर् आयिरम् आय् उलहु एळ् अळिक्कुम्
पेर् आयिरम् कॊण्डदु ओर् पीडु उडैयन्
कार् आयिन काळ नन् मेनियिनन्
नारायणन् नङ्गळ पिरान अवने ॥ 2

2987. अवने अहल् ञालम् पडैत्तु इडन्दान्
अवने अहृदु उण्डु उमिळ्न्दान् अळन्दान्
अवने अवनुम् अवनुम् अवनुम्
अवने मर्रु ऍल्लामुम् अरिन्दनमे ॥ 2

2988. अरिन्दन वेद अरुम् पॊरुळ् नूल्हळ्
अरिन्दन कॊळ्ह अरुम् पॊरुळ् आदल्
अरिन्दनर् ऍल्लाम् अरियै वणङ्गि
अरिन्दनर् नोयहळ् अरुक्कुम् मरुन्दे ॥ 3

2989. मरुन्दे नङ्गळ् बोग महिळ्च्चिक्कु ऍन्रु
पॆरुम् देवर् कुळाङ्गळ् पिदर्रुम् पिरान्
करुम् देवन् ऍम्मान् कण्णन विण् उलहम्
तरुम् देवनै-च् चोरेल् कण्डाय् मनमे । 4

IX. iii ओर् आयिरम्

2986 जिस का एक एक नाम ही सहस्र प्रकार से सप्त लोको की रक्षा करता है, ऐसे सहस्र नामो से युक्त होने की महिमा जिसकी है, जो नीलमेघ सदृश श्यामसुंदर विग्रह से युक्त है, वह नारायण ही हमारी रक्षा करता उपकारी है। 1

2987 उसीने विस्तृत पृथिवी की सृष्टि की, और (वराह बन कर सागर से) उद्धरण किया। उसीने उसका निगिरण तथा उद्गिरण किया तथा (त्रिविक्रमावतार मे) उसको मापा। वही वह, वह और वह है। (अर्थात् वही (वह) ब्रह्मा है, (वह) शिव है तथा (वह) इंद्र है।) एवं वही अन्य सब (चेतन और अचेतन) है। यह हमने जाना (उस की कृपा से)। (वही सर्वान्तर्यामी परमात्मा है।)

[वही वह, वह और वह है—यह उपनिषद् मत्र के रूप मे है--"स ब्रह्मा, स शिवः सेन्द्रः सोऽक्षरः परमः स्वराट्"।] 2

2988 सर्वज्ञ वेदो के सूक्ष्म अर्थ का विवरण करने मे प्रवृत्त (ब्रह्मसूत्र, इतिहास, पुराण आदि) ग्रन्थो ने जान लिया कि परमात्मा दुर्ज्ञेय तत्त्व है--इतना जान लेना पर्याप्त है। सर्वज्ञ (पराशर, व्यास, वाल्मीकि प्रभृति) सब महर्षियो ने हरि की प्रणति कर के जान लिया कि परमात्मा (संसार) व्याधि की निवर्तक औषध है। 3

2989 'हमारे भोग सुख की वृद्धि के भेषज तुम हो' कह कर उत्कृष्ट देव गण जिस उपकारी के विषय में कहते है, जो श्यामसुंदर हमारा स्वामी कान्ह है, जो परमधाम प्रदान करता देव है, उसे छूटने मत दो, मेरे मन। 4

2990. मनमे ! उन्नै वल् विनैयेन् इरन्दु
कनमे शॊल्लिनेन् इदु शोरेल् कण्डाय्
पुन मेविय पूम् तण् तुळाय् अलङ्गल्
इनम् एदुम् इलानै अडैवदुमे ॥ 5

2991. अडैवदुम् अणि आर् मलर् मङ्गै तोळ्
मिडैवदुम् अशुरर्क्कु वॆम् पोर्हळे
कडैवदुम् कडलुळ् अमुदु ऎन् मनम्
उडैवदुम् अवर्के ऒरुङ्गाहवे ॥ 6

2992. आहम् शेर् नर शिङ्गम् अदु आहि ओर्
आहम् वळ् उहिराल् पिळन्दान् उरै
माह वैकुन्दम् काण्बदर्कु ऎन् मनम्
एकम् ऎण्णुम् इरा-प् पहल् इन्रिये ॥ 7

2993. इन्रि-प् पोह इरु विनैयुम् कॆडुत्तु
ओन्रि आक्कै पुहामै उय्य-क् कॊळ्वान्
निन्र वेङ्गडम् नीळ् निलत्तु उळ्ळदु
शॆन्रु देवर्हळ् कै तॊळुवार्हळे ॥ 8

2990 हे मन! प्रबल पापी मैं तुम से याचना कर के दृढ कहता हूं—इसको छोडो मत, समझे! उपजाऊ भूमि में उत्पन्न सुंदर और शीत तुलसीमालाधारी सब प्रकार से निरसम प्रभु की शरण में जाना। 5

2991 आलिंगन करता है (भगवान्) सौंदर्य से पूर्ण पद्मजा (लक्ष्मी) को। भिडता है असुरों के विरुद्ध घोर युद्ध में। मन्थन करता है सागर को अमृत (के लि॰) इस प्रभु के ध्यान से विह्वल हो जाता है सदा मेरा मन। 6

2992 एक शरीर में संमिलित (नरत्व और सिंहत्व से) नरसिंह हो कर (हिरण्यकशिपु के) अद्वितीय शरीर को वक्र नखों से विदीर्ण करते भगवान् से अधिष्ठित महा व्रम् (अर्थात् परमधाम कहलाते) श्रीवैकुंठ को देखने की ही इच्छा रात-दिन लगातार मेरा मन करता रहता है। 7

2993 (पुण्य पाप रूप) द्विविध कर्मों का अंत कर के जिससे उनकी सत्ता ही न रहे, और जिससे हम (शरीर से) एक हो कर उस में प्रविष्ट न रहें, इस प्रकार हमें उज्जीवित करने के लिए भगवान् आ कर जहां खड़ा रहता है, वह वेंकट (गिरि) श्लाघ्य भूमंडल में है। जो वहां जा कर अंजलि कर के उसकी प्रणति करते हैं वे देव ही हैं। 8

994. तोळ्दु मा मलर् नीर् शुडर् दूपम् कॉण्डु
एॅळ्दुम् एॅन्नुम् इदु मिहै आदलिल्
पळ्दु इल् तॉल् पुहळ्-प् पाम्बु अणै-प् पळ्ळियाय् !
तळ्वुम् आरु अऱियेन् उन ताळ्हळे ॥ 9

2995. ताळै तामरैयान् उनदु उन्दियान्
वाळ् कॉळ् नीळ् मळु आळि उन् आहत्तान्
आळराय-त् तॉलुवारुम् अमरर्हळ्
नाळुम् एॅन पुहळ्हो उन शीलमे ? 10

2996. शीलम् एल्लै इलान् अडि मैल अणि
कोल नीळ् कुरुहूर्-च् चडकोपन् शॉल्
मालै आयिरत्तुळ् इवै पत्तिनिन्
पालर् वैकुन्दम् एरुदल् पान्मैये ॥ 11

2994 श्लाघ्य पुष्प और जल, दीप और धूप ले कर तुम्हारी वंदना करने हम उठें तो यही तुम आवश्यकता से अधिक मानते हो। अतः तुम्हारे चरणों का आश्रय कैसे करूं, मैं नहीं जानता। (दुराराध्य नहीं होने से) तुम दोषविहीन हो। नित्य कीर्ति मंत! सर्पशायी! 9

2995 दीर्घ नाल से युक्त कमल से उत्पन्न (ब्रह्मा) तुम्हारी नाभि में है। तेजोयुक्त दीर्घ परशु को धरता (रुद्र) तुम्हारे शरीर में (एक भाग में) है। अमर-गण दास हो कर तुम्हारी प्रणति करते हैं। तुम्हारे शील गुण की प्रशंसा अनंत काल तक करने पर भी कैसे पूरी प्रशंसा कर सकता हूं? 10

2996 अनवधिक शील गुण से युक्त भगवान् के चरण में अर्पित यह शब्दमाला जो अतिसुन्दर और विशाल कुरुहूर के शठकोप के द्वारा रचित है उसके इस दशक से जो संबद्ध होते हैं वे वैकुंठ चढ़ जाते हैं तो वह उचित ही है। 11

IX. iv. मै आर् करुम् कण्णि

2997. मै आर् करुम् कण्णि कमल मलर् मेल्
शॅय्याळ् तिरु मार्विनिल् शेर् तिरुमाले !
वॅय्यार् शुडर् आळि शुरि शङ्गम् एन्दुम्
कैया ! उनै-क काण-क करुदुम् एॅन् कण्णे 1

2998. कण्णे उनै-क् काण-क् करुदि एॅन् नॅञ्जम्
एॅण्णे कॉण्ड चिन्दैयदु आय् निन्रु इयम्बुम्
विण्णोर् मुनिवर्क्कु एॅन्रुम् काण्वु अरियायै
नण्णादु ऑळियेन् एॅन्रु नान् अळैप्पने ॥ 2

2999. अळैक्किन्र अडि नायेन नाय् कूळै वालाल
कुळैक्किन्रदु पोल एॅन् उळ्ळम् कुळैयुम्
मळैक्कु अन्रु कुन्रम् एॅडुत्तु आनिरै कात्ताय् '
पिळैक्किनन्रदु अरुळ् एॅन्रु पेदु उरुवेने ॥ 3

3000. 'उरुवदु इदु' एॅन्रु उनक्कु आट्पट्ट् 'निन् कण्
पॅरुवदु एॅदु कॉल् :' एॅन्रु पेदैयेन् नॅञ्जम्
मरुहल् शॅय्युम् वानवर् दानवर्क्कु एॅन्रुम्
अरिवदु अरिय अरियाय अम्माने ! 4

IX. iv. मैयार् करुङ्कण्णि

(अंजनालंकृत नीललोचनी)

2997 अंजनालंकृत नीललोचनी कमलपुष्प पर आसीन हिरण्यवर्णा लक्ष्मी समाश्रित वक्ष से युक्त श्रीमन्नारायण! उग्रता से युक्त प्रदीप्त चक्र और रेखांकित शंख धरते हस्त से युक्त (प्रभु)! तुम्हें देखना चाहता है मेरा नयन। 1

2998 हे (मेरे) लोचन! (अर्थात् दर्शनसाधन भगवान्!) तुम्हें देखने की वांछा कर के मेरा हृदय बहुसंख्यात मनोरथ कर के सदा पुकारता रहता है। देव-वर्ग को तथा मुनि-गण को सदैव दुर्दर्श तुम्हें निस्सन्देह प्राप्त किये बिना रहूंगा नहीं (अर्थात् अवश्य प्राप्त करूंगा)—यह कह कर मैं पुकारता हूं। 2

2999 कटी पूंछ हिला कर जैसे कुत्ता अपनी इच्छा प्रकट करने का प्रयत्न करता है वैसे ही तुम्हें पुकारते और श्वान-सम दास का हृदय (साधन-विहीन होने से) विह्वल होता है। उस दिन (गोवर्धन) गिरि उठा कर वर्षा का वारण कर के गोसमूह की रक्षा तुमने की, गिरिधारी! मैं घबराता हूं कि कहीं मैं तुम्हारी कृपा के बाहर तो नहीं हूं। 3

3000 देवों को तथा दानवों को सब काल में दुर्ज्ञेय (नर) हरिरूप ईश्वर! हमने निश्चय किया कि हमारा लक्ष्य क्या है और हम तुम्हारे दास बन गए। अब ज्ञान हीन मेरा हृदय घबड़ाता है (कि क्या तुम्हारी कृपा हमें प्राप्त होगी अथवा हमें दुर्लभ ही रहोगे?) 4

3001. अरि आय अम्मानै अमरर् पिरानै
पॆरियानै-प् पिरमनै मुन् पडैत्तानै
वरि वाऴ् अरविन् अणै-प् पळ्ळि कॊळ्हिन्र
करियान् कळ्ळल् काण-क् करुदुम् करुत्ते ॥ 5

3002. करुत्ते ! उनै-क् काण-क् करुदि ऎन् नॆञ्जत्तु
इरुत्ताह इरुत्तिनेन् देवर्हट्कु ऎल्लाम्
विरुत्ता ! विळङ्गुम् शुडर्-च् चोदि उयरत्तु
ऒरुत्ता ! उनै उळ्ळुम् ऎन् उळ्ळम् उहन्दे 6

3003. उहन्दे उनै उळ्ळुम् ऎन् उळ्ळत्तु अहम् पाल
अहम् तान् अमर्न्दे इडम् कॊण्ड अमला !
मिहुम् दानवन् मार्वु अहलम् इरु कूरा
नहन्दाय् ! नर शिङ्गम अदु आय उरुवे ! ॥ 7

3004. उरु आहिय आरु शमयङ्गट्कु ऎल्लाम्
पॊरु आहि निन्रान् अवन् ऎल्ला-प् पॊरुट्कुम्
अरु आहिय आदियै-त् तेवर्हट्कु ऎल्लाम्
करु आहिय कण्णनै-क् कण्डु कॊण्डेने ॥ 8

3001 जो पापहर स्वामी है, जो देवों का उपकारी है, जो सर्वश्रेष्ठ है, पुरा काल में ब्रह्मा को जिन्होंने सृष्टि की, जो रेखांकित और समुज्ज्वल सर्पशय्या पर शयित श्यामसुंदर है, उसके चरण का दर्शन करना चाहता है मेरा हृदय। 5

3002 मन! (अर्थात् मन को शक्ति देनेवाले!) तुम्हें देखने की इच्छा कर के मैंने अपने मन में तुम्हें दृढ स्थापित किया। हे सब देवों के वृद्ध! (अर्थात् अनादि काल से विद्यमान प्रथम नायक!) भासमान और ज्वलित ज्योतिर्मय परमाकाश में विद्यमान अद्वितीय स्वामी! आनंद के साथ मेरा मन तुम्हें भोगता है। 6

3003 हर्ष के साथ तुम्हारा चिंतन करते मेरे हृदय के भीतर ही भीतर उत्साहसहित भर कर रहते अमल! बलिष्ठ दानव (हिरण्यकशिपु) के विशाल वक्ष को दो टुकड़ों में चीरते नखों से युक्त नरसिंहरूप भगवान्! (हृदय में प्रविष्ट हो कर आनंदित करते हो।)। 7

3004 प्रामाणिक दीखते षट् समय (अर्थात् सभी षट् मतों) से जो अविचाल्य हो कर खड़ा रहता है, जो सब पदार्थों का अंतरात्मा होने से आदि है (अर्थात् प्रधान है), जो सब देवों के कारण है, उस कान्ह का मैंने साक्षात्कार कर लिया।
[षट् समय—चार्वाक, बौद्ध, क्षपण, वैशेषिक, सांख्य और पाशुपत।] 8

3005. कण्डु कॉण्डेन् ऍन् कण् इणै आर-क् कळित्तु
पण्डै विनै आयिन पऱ्ऱोडु अऱुत्तु
तॉण्डर्क्कु अमुदु उण्ण-च् शॉन्नेन् चॉल् मालैहळ
अण्डत्तु अमरर् पॅरुमान्! अडियेने॥ 9

3006. 'अडियान् इवन्' ऍन्ऱु ऍनक्कु आर् अरुळ शॅय्युम्
नॅडियानै निऱै पुहऴ् अम् शिऱै-प् पुळ्ळिन्
कॉडियानै कुन्ऱामल् उलहम् अळन्द
अडियानै अडैन्दु अडियेन् उय्न्दवाऱे॥ 10

3007. आरा मद यानै अडर्त्तवन् तन्नै
शेरार् वयल् तॅन् कुरुहूर्-च् चडकोपन्
नूऱे शॉन्न ओर् आयिरत्तुळ् इप् पत्तुम्
एऱे तरुम् वानवर् तम् इन् उयिर्क्के॥ 11

3005 नयन भर कर उस का साक्षात्कार कर के मैं प्रहृष्ट हुआ और अनादि सब पापो को समूल काट दिया। ब्रह्माड के सब अमरों के अधीश्वर के दास मैंने शब्द मालाएं रचीं जिस से भक्त गण अमृतवत् उसका भोग करें। 9

3006 मुझे अपना प्रिय मान कर जो मुझ पर परिपूर्ण कृपा करता सर्वेश्वर है, कीर्तिमान सुंदर पक्ष विहग का ध्वज बना गरुडध्वज है, अशेष लोक के मापक चरण से जो युक्त है, उसको प्राप्त कर दास मेरे उज्जीवित होने का ढग ही अद्भुत है। 10

3007 अक्षय्य मद से मत्त हस्ती (कुवलयापीड) के संहारक (श्रीकृष्ण) पर पंकयुक्त क्षेत्रान्वित सुन्दर कुरुहूर के श्रीशठकोप के शतक विभाग से रचित अद्वितीय सहस्रगीति में यह दशक नित्यसूरियों के प्रिय प्राण नाथ को प्रदान करेगा। 11

IX. v. इन् उयिर्-च् चेवल्

3008. इन् उयिर्-च् चेवलुम् नीरुम्
कूवि-क् कॊण्डु इङ्गु ऎत्तनै
ऎन् उयिर् नोव मिऴऱ्ऱेन्मिन्
कुयिल् पेडैहाळ् !
ऎन् उयिर्-क् कण्णपिरानै
नीर् वर-क् कूवुहिलीर्
ऎन् उयिर् कूवि-क् कॊडुप्पाक्कुम्
इत्तनै वेण्डुमो ? 1

3009. इत्तनै वेण्डवदु अन्ऱु अन्दो !
अन्ऱिल् पेडैहाळ् !
ऎत्तनै नीरुम नुम् शेवलुम्
करैन्दु एङ्गुदिर्
वित्तहन् गोविन्दन्
मॆय्यन् अल्लन् ऒरुवर्क्कुम्
अत्तनै आम् इनि ऎन् उयिर्
अवन् कै यदे ॥ 2

3010. अवन् कैयदे ऎनदु आर् उयिर्
अन्ऱिल् पेडैहाळ् !
ऎवम् शॊल्लि नीर् कुडैन्दु
आडुदिर् पुडै शूऴ्वे
तवम् शॆय्दिल्ला विनैयाट्टियेन्
उयिर इङ्गु उण्डो ?
ऎवम् शॊल्लि निऱ्ऱुम् नुम्
एङ्गु कूक्कुरल् केट्टुमे ? 3

IX. V. इन्नुयिर्-च् चेवलुम्

(प्रिय प्राणनाथ)

[संत का नायिकाभाव]

3008 कोयलो ! तुम्हारा प्रिय प्राणनाथ और तुम परस्पर कूकते हुए मुझे अधिक व्यथा देते हुए मेरे सामने प्रेम से गद्गद स्वर में बोलो मत। मेरे प्यारे प्रभु कान्ह को यहां बुलाने के लिए तुम नहीं कूकतीं। मेरे प्राण हर कर उसके हाथ में देनेवाली तुम्हें क्या इतना (परिश्रम) करने की आवश्यकता है ? 1

3009 इतना करने की आवश्यकता नहीं। हाय ! मादाक्रौंचो ! तुम और तुम्हारा प्रियतम कितने प्यार से मिल कर बोल रहे हो ! विदग्ध गोविन्द तो किसी के विषय में भी सत्य नहीं। अब तो मेरे प्राण उसके हस्तगत हो ही गए। 2

3010 उसके हस्तगत हो गए मेरे प्राण, मादा-क्रौंचो ! कैसे प्रेम के वचन बोल कर एक दूसरे से मिल कर तुम मेरे चारों ओर संचरित होती हो ! तपोविहीन मुझ पापिनी के प्राण क्या यहां विद्यमान हैं ? तुम्हारा (प्रेम) गद्गद स्वर सुनतीं तो क्या बोल कर हम प्राणधारण करें ? 3

3011. कूक्कुरल् केट्टुम् नम् कण्णन्
मायन् वॅळिप्पडान्
मेर्-किळै कॉळ्ळेन्मिन्
नीरुम् शेवलुम् कोळिहाळ् !
वाक्कुम मनमुम् करुममुम्
नमक्कु आङ्गदे
आक्कैयुम् आवियुम्
अन्दरम् निन्रु उळलमे ॥ 4

3012. अन्दरम् निन्रु उळल्हिनर
यानुडै-प् पूवैहाळ् !
नुम् तिरत्तु एदुम् इन्दै इल्लै
कुळरेन्मिनो
इन्दिर ञालङ्गळ् काट्टि
इव् एळ् उलहुम् कॉण्ड
नम् तिरु मार्बन् नम् आवि उण्ण
नन्गु एॅण्णिनान् ॥ 5

3013. नन्गु एण्णि नान् वळर्त्त
शिरु किळि-प् पैदले !
इन् कुरल् नी मिळर्रेल्
एॅन् आर् उयिर्-क् काकुत्तन्
निन् शॅय्य वाय् ऑक्कुम् वायन्
कण्णन् कै कालिनन्
निन् पशुम् शाम निरत्तन्
कूट्टुण्डु नीङ्गिनान् ॥ 6

3011 तुम्हारा आलाप सुन कर भी हमारा मायी कान्ह निकल आएगा नहीं। मयूरियो! तुम और तुम्हारे प्रियतम और भी ऊँचे स्वर से बोलो मत। हमारे वाक् मन और कर्म सब तो उसके यहां हैं। शरीर और प्राण मात्र बीच में रुक कर व्याकुल होते है। 4

3012 दुःख का अनुभव करने के लिए यहां कोई नहीं, व्यर्थ ही अंतर में (बीच में) आ कर दुःख देने के लिए संचरित होती मेरी शारिकाओ! तुम्हारे दिए दुःख प्राप्त करने को यहां कोई नही। प्रेम से गद्गद् हो कर मत बोलो। इंद्रजालों को दिखा कर इन सब लोकों को ग्रहण करते हमारे लक्ष्मी-समाश्रित वक्ष से युक्त भगवान् ने हमारे प्राण हरने का बहुत ही अच्छा उपाय कर लिया। 5

3013 मुग्ध बाल तोते! यह सोच कर मैंने तुम्हारा पालन पोषण किया कि तुम मेरे हितकारी होगे। मीठे स्वर में प्रेम से गद्गद हो कर मत बोलो। मेरा प्राणप्रिय काकुत्स्थ मुझ से संयुक्त हो हो कर बिछुड गया- काकुत्स्थ, जिसका अधर तुम्हारे रक्त मुख जैसा है, तुम्हारे जैसे ही रक्त नेत्र, हस्त और पाद जिसके हैं तथा श्याम वर्ण तुम्हारे जैसा है। 6

3014. कूट्टुण्डु नीङ्गिय कोल-त्
तामरै-क् कण् शॆव्वाय्
वाट्टम् इल् ऎन् करु माणिक्कम्
कण्णन् मायन् पोल्
कोट्टिय विल्लॊडु मिन्नुम्
मेह-क् कुळाङ्गळ्हाळ्!
काट्टेन्मिन् नुम् उरु
ऎन् उयिर्क्कु अदु कालने॥ 7

3015. उयिर्क्कु अदु कालन् ऎन्ऱु
उम्मै यान् इरन्देर्कु नीर्
कुयिल् पैदल्हाळ्! कण्णन् नाममे
कुळऱि-क् कॊन्ऱीर्
तयिर्-प् पलम् शोर्रॊडु पाल्
अडिशिलुम् तन्दु शॊल्
पयिर्रिय नल् वळम् मूट्टिनीर्!
पण्वु उडैयीरे॥ 8

3016. पण्वु उडै वण्डॊडु तुम्बिहाळ्!
पुण् मिळर्रेन्मिन्
पण् पुरै वेल् कॊडु कुत्ताल्
ऒक्कुय् नुम् इन् कुरल्
तण् पॆरुम् नीर्-त् तडम् तामरै
मलन्दाल् ऒक्कुम्
कण् पॆरुम् कण्णन् नम् आवि
उण्डु ऎळ नण्णिनान्॥ 9

3014 सुंदर कमल नयन, अरुण अधर और दोषहीन नीलरत्नतुल्य मायी कान्ह मुझ से संयुक्त हो कर बिछुड गया। उसके समान ही वक्र (इन्द्र) धनुष के साथ चमकते मेघ-बूंदो! अपना रूप मुझे दिखाओ मत। मेरे प्राण के लिए वह काल है (अर्थात् मृत्यु है)। 7

3015 कोयल के बच्ची! मेरे प्राण के लिए वह काल है (अर्थात् मृत्यु है)— यह कह कर मैंने तुम से याचना की कि कान्ह का नाम मत बोलो। परंतु तुमने गद्गद स्वर से कान्ह के नाम ही तुतला कर मुझे मार ही डाला। दही के साथ फल और अन्न तथा क्षीरान्न भी दे कर उनके नाम सिखाने के प्रत्युपकार में बहुत हो अच्छा काम करते हो, सत्स्वभाव से संपन्नो! (पक्षियो!) 8

3916 सत्स्वभाव से युक्त मधुकरो और भ्रमरो! मधुर गीत मत गाओ। तुम्हारा मीठा स्वर तो व्रण-द्वार में बरछे चुभाने के समान होगा। शीत और समृद्ध जल से भरे विशाल तडाग में विकसित कमल जैसे आयताक्ष कान्हने हमारे प्राण खा कर ही जाने का निश्चय कर लिया। 9

3017. ए॑ळ नण्णि नामुम् नम् वान
नाडनो॑डु ओ॑न्रिनोम्
पळन नल् नारै-क् कुळाङ्गळ्हाळ् !
पयिन्रु ए॑न् इनि ?
इळै नल्ल आक्कैयुम्
पैयवे पुय-क् करूदु
तळै नल्ल इन्बम् तलैप्पॆ॑य्दु
ए॑ङ्गुम् तळैक्कवे ॥ 10

3018. इन्बम् तलैप्पॆ॑य्दु ए॑ङ्गुम्
तळेत्त पल् ऊळिक्कु
तन् पुहळ् एत्त-त् तनक्कु
अरुळ् शॆ॑य्द मायनै
तॆ॑न् कुरुहूर्-च् चडकोपन्
शॊ॑ल् आयिरत्तुळ् इवै
ओ नबदोडु ओ॑न्रुक्कुम्
मू उलहम् उरुहुमे ॥ 11

3917 हम भी जाने को सज कर परमधाम के स्वामी से सहमत हुईं। जलाशय मे रहते सुंदर सारस-बृंदो। एतदनंतर तुम्हारे एकत्रित होने से क्या प्रयोजन है? आभरणों से अलंकृत सुंदर शरीर भी शनैः शनैः निकलने को सज गया। (मेरा अंत देख कर उससे दुःखी हुए बिना) समृद्ध और महान आनंद सब को मिले और सब आनंदित रहें। 10

3918 आनंद प्रदान कर उससे सर्वत्र व्याप्त अपनी ख्याति की प्रशंसा युग युग से करते रहने की कृपा संत पर जिस ने की, उस मायी भगवान् पर सुंदर कुरुहूर के शठकोप के रचित सहस्रगीति मे नौ पद्यो से समन्वित एक से युक्त इस दशक से तीनों लोक पिघल जाएंगे। 11

IX. vi. उरुहुम् आल् ।

3019. उरुहुम् आल् नॆञ्जम्
उयिरिन् परम अन्रि
पॆरुहुम् आल् वेट्कैयुम्
ऍन शॆय्हेन् तॊण्डनेन् ?
तॆरु एल्लाम् कावि
कमल् तिरु-क् काट्करै
मरुविय मायन् तन्
मायम् निनैतोरे ॥ 1

3020. निनैतॊरुम् शॊल्लुम् तॊरुम्
नॆञ्जु इडिन्दु उहुम्
विनै कॊळ् शीर् पाडिलुम्
वेम् ऍनदु आर् उयिर्
शुनै कॊळ पूम् शोलै-त्
तॆन् काट्करै ऍन् अप्पा !
निनैहिलेन् नान् उनक्कु
आट् चॆय्युम् नीर्मैये ॥ 2

3021. नीर्मैयाल् नॆञ्जम् वञ्जित्तु-प्
पुहुन्दु ऍन्नै
इर्मै शॆय्दु ऍन् उयिर् आय्
ऍन् उयिर् उण्डान्
शीर् मल्हु शोलै-त्
तॆन् काट्करै ऍन् अप्पन्
कार् मुहिल् वण्णन् तन्
कळ्वम् अरिहिलेन् ॥ 3

IX. iv. उरुहुम् आल्

(पिघल जाता है, हाय !)

[तिरु-क्-काट्करै क्षेत्र]

3019 जिसकी सब वीथियों में कल्हारों की सुगंध बहती है उस तिरु-क्-काटकरै क्षेत्र में सप्रीति वास करते मायी की माया का (अर्थात् आश्चर्यमय भगवान् के अद्भुत सौशील्य आदि गुणों का) जब जब ध्यान करता हूं, तब समय हृदय पिघल जाता है, हाय ! आत्मा की धारण शक्ति से भी अत्यधिक वांछा भी वर्धित होती है, हाय ! चपलचित्त मैं क्या करूं ? 1

3020 (पापहरण आदि) तुम्हारे व्यापारों के प्रकाशक मंगल गुणों का स्मरण करने लगते समय, एवं कथन करने लगते समय, (मेरा) हृदय टूट कर शिथिल हो जाता है। गान करने लगूं तो मेरी प्रिय आत्मा दग्ध हो जाती है। सरोवरों से युक्त मनोज्ञ उपवन-परिवृत सुंदर काट्करै के मेरे स्वामी ! तुम्हारी सेवा करने का ढंग मैं सोच भी नहीं सकता। 2

3021 धोखा दे कर मेरे मन में प्रविष्ट हो कर, अपनी सुशीलता से मुझे अपने वश में कर के, मेरी आत्मा हुए और मेरी आत्मा का भोग कर लिया। समृद्धि से युक्त उपवन परिवृत सुंदर काट्करै के नीलमेघवर्ण मेरे स्वामी का चौर्य मैं समझ नहीं सकता।

[चौर्य—मेरा दास्य स्वीकार करने आ कर स्वयं दास्य वृत्ति करना।] 3

3022. अरिहिलेन् तन्नुळ्
    अनैत्तु उलहुम् निऱ्क
ने̋रिमैयाल् तानुम् अवऱ्ऱुळ्
    निऱ्कुम् पिरान्
वे̋रि कमळ् शोलै-त्
    ते̋न् काट्करै ए̋न् अप्पन्
शिरिय ए̋न् आर् उयिर्
    उण्ड तिरु अरुळे ॥ 4

3023. तिरु अरुळ् शे̋ऴ्वन् पोल
    ए̋न्नुळ् पुहुन्दु
उरुवमुम् आर् उयिरुम्
    उडने उण्डान्
तिरुवळर् शोलै-त्
    ते̋न् काट्करै ए̋न् अप्पन्
करु वळर् मेनि ए̋न्
    कण्णन् कळ्वङ्गळे ॥ 5

3024. ए̋न् कण्णन् कळ्वम्
    ए̋नक्कु-च् चे̋म्माय् निऱ्कुम्
अम् कण्णन् उण्ड ए̋न्
    आर् उयिर्-क् कोदु इदु
पुन् कण्मै ए̋य्दि-प्
    पुलम्बि इरा-प् पहल्
ए̋न् ऋण्णन् ए̋न्रु
    अवन् काट्करै एत्तुमे ॥ 6

3022 उसके भीतर (अर्थात् उसके संकल्पलेश से) सब लोक धृत हैं और वह भी यथा नियम (अर्थात् शेषशेषिभाव संबंध का पालन करते हुए) उनके भीतर स्थित हैं। वह प्रभु जो सुगंध से सुरभित उपवनों से परिवृत सुन्दर काट्करै के तथा मेरे स्वामी है, उसने क्षुद्र मेरी आत्मा को भोग करने की जो कृपा की उसे मैं समझ नहीं पाता। 4

3023 श्रीकृपा करनेवाले जैसे मेरे भीतर प्रविष्ट हो कर, उसने मेरे रूप (अर्थात् शरीर) और प्यारे प्राण दोनों का एक साथ भोग कर लिया। सौंदर्य की वृद्धि से युक्त उपवन परिवृत सुंदर काट्करै के मेरे स्वामी नित्यश्याम सुंदर हमारे कान्ह की कपटताएं कैसी विस्मयनीय है। 5

3024 मेरे कान्ह की कपटता (अर्थात् कृत्रिम व्यापार) मुझे अकृत्रिम ही दीखती है। उस चपलचित्त से अनुभूत मेरो प्रिय आत्मा का असारांश यह है जो फिर जीवित हो कर पुकारता है और रात-दिन कहता है 'मेरा कान्ह' और उसके काट्करै (क्षेत्र) की स्तुति करता ही रहता है। 6

3025. काट्करै एत्तुम् अदनुळ्
कण्णा एॅन्नुम्
वेट्कै नोय् कूर
निनैन्दु करैन्दु उहुम्
आटकॊॅळ्वान् ऒॅत्तु
एॅन् उयिर् उण्ड मायनाल्
कोट् कुरै पटटदु
एॅन् आर उयिर् कोळ् उण्डे। 7

3026. कोळ् उण्डान् अन्रि वन्दु
एॅन् उयिर् तान् उण्डान्
नाळु नाळ् वन्दु एॅन्नै
मुऱ्ऱवुम तान् उण्डान्
काळ नीर् मेह-त् तेॅन्
काट्करै एॅन् अप्परकु
आळ अन्रे पट्टदु एॅन्
आर उयिर् पटटदे॥ 8

3027. आर् उयिर् पट्टदु
एॅनदु उयिर् पट्टदु
पेर् इदळ्-त् तामरै-क् कण
कनि वायदु ओर्
कार् एॅळिल् मेह-त् तेॅन्
काट्करै-क् कोयिल् कॊॅळ्
शीर् एॅळिल् नाल् तडम् तोळ्
दैॅवत्र वारिक्के॥ 9

3025 मेरी सेवा ग्रहण करनेवाले जैसे मुझ में प्रविष्ट हो कर मायी (भगवान्) ने मेरी आत्मा को अपना लिया। मेरी आत्मा उसने पूरी अनुभूत होने पर भी ऐसा लगता है मानो कुछ अनुभव शेष रह गया। अत मेरी आत्मा काट्करै की स्तुति करती है। उसमें विराजमान मेरे कान्ह! कहती है। उत्कंठारोग बढ़ता है ; और वह आत्मा उस (कान्ह) का स्मरण कर घुल कर विगलित होती है। 7

3026 आ कर उसने मेरी आत्मा का अनुभव इस प्रकार किया मानो उसका अनुभव उससे पहले न किया हो। दिन दिन आ कर मेरा अनुभव भरपूर कर लिया। जलपूर्ण काल मेघ मेरे स्वामी का जो काट्करै मे विराजमान है, मेरी आत्मा दास बन गई। एक आत्म वस्तु के भोग का ढंग ही कैसा विचित्र है! 8

3027 जो विशालदल कमललोचन और बिबफलाधर है, उस नील ज्योतिर्मय जलद सदृश देववारिधि के हाथ (अर्थात् देवआओ के उत्पत्तिस्थान सागर समान श्रीमन्नारायण के हाथ) जो मेरी आत्मा ने भोगा। किसकी आत्मा ने भोगा! श्रीमन् नारायण—जो सुन्दर काट्करै के मदिर में विराजमान हैं, और जो वीर श्री कान्तियुत चतुर्भुज है। 9

3028. 'वारि-क् कॉण्ड् उऩ्ऩै
विळुङ्गुवन् काणिल्' एॅन्ऱु
आवुॅऱ्ऱ एॅन्ऩै ओॅऴिय
एॅन्ऩिल् मुन्ऩम्
पारित्तु तान् एॅन्ऩै
मुऱ्ऱ-प् परुहिनान्
कार् ओॅक्कुम् काट्करै
अप्पन् कडियने ॥ 10

3029 कडियन् आय्-क् कञ्जनै-क्
कॉन्ऱ पिरान् तन्ऩै
कॉॅडि मदिळ् तॅन् कुरुहूर्-च्
चडकोपन् शॉॅल्
वडिवु अमै आयिरत्तु
इप् पत्तिनाल् शनमम्
मुडिवु एॅय्दि नाशम्
कण्डीर्हळ् एॅम् कानले ॥ 11

3028 'यदि तुम्हें देख पाऊं तो दोनों हाथों से ले कर तुम्हें निगल लूंगा'— यह थी मेरी उत्कंठा। मुझ से बढ कर उत्कंठित हो कर मुझ से पहले भगवान् ने मुझे पूर्णतया पान कर लिया। काट्करै में विराजमान जलदसदृश प्रभु अतिशीघ्र कार्यकारी है। 10

3029 कुपित हो कर कंस का संहार करते उपकारी (श्रीकृष्ण) पर ध्वजों से अलंकृत प्राचीरों से परिवृत सुन्दर कुरुहूर के शठकोप के रचित रूपवंत सहस्रगीति के इस दशक (के अध्ययन) से जन्म (परंपरा) का अंत होगा और (उसके हेतुभूत) (संसार) मरीचिका का भी नाश होगा। 11

IX. vii ऍम् कानल

3030. ऍम् कानल् अहम् कळि वाय्
इरै तेन्दु इङ्गु इनिदु अमरुम्
शॆम् काल मड नाराय् !
तिरु मूळि-क् कळत्तु उरैयुम्
कॊङ्गु आर् पूम् तुळाय् मुडि ऍम्
कुड-क् कूत्तर्कु ऍन् तूदाय्
नुम् काल्हळ् ऍन् तलै मेल्
कॆळुमीरो नुमरोडे ॥ 1

3031. नुमरोडुम् पिरियादे
नीरुम् नुम् शेवलुम् आय्
अमर् कादल् कुरुहु इनङ्गाळ् !
अणि मूळि-क् कळत्तु उरैयुम्
एमरालुम पडिप्पु उण्डु इङ्गु ऍन् ?
तम्माल् इळिप्पु उण्डु
तमरोड् अङ्गु उरैवाक्कु-त्
तकिलमे ? केळीरे ॥ 2

3032. 'तकिलमे ?' केळीर्हळ् तडम्
पुनल् वाय् इरै तेरुम्
कॊक्कु इनङ्गाळ् ! कुरुहु इनङ्गाळ् !
कुळिर् मूळि-क् कळत्तु उरैयुम्
शॆक्-कमलत्तु अलर् पोलुम् कण्
कै काल् शॆम् कनि वाय्
अक्-कमलत्तु इलै पोलुम्
तिरु मेनि अडिहळुक्के ॥ 3

IX. vii. एङ् कानल

(हमारे सागरानूप)

(नायिका का दूत-प्रेषण—तिरु-मूळि-क् कळम् क्षेत्र)

3030 हमारे सागरानूप स्रोत में आहार खोजते हुए सानंद वर्तमान रक्तचरण भव्य बलाकाओ ! तिरु-मूळि-क् कळम् के अधिवासी मधुसंपन्न मनोहर तुलसीविभूषित किरीट से युक्त मेरे घटनटवर के पास मेरे दूत बन कर जाओ और लौट कर आत्मीयों के साथ अपने चरण मेरे सिर पर रखो। 1

3031 आत्मीयों से अवियुक्त हो कर अपने प्रियतमों के साथ अनुरूप प्रेम में वर्तमान सारस-पक्षिगणो ! (विरह वेदना में अवरुद्ध हो कर स्वगत कहती है)— सुंदर तिरु मूळि क् कळम् के अधिवासी से उपेक्षित हो कर तथा अपने संबंधियों से उपेक्षित हो कर यहां रहने से क्या प्रयोजन है ? (सारसों से)—(जा कर उनसे) पूछो कि क्या अपने सगे-संबंधियों में वहां रहते हम उनकी योग्या नहीं ? 2

3032 विशाल सरोवर में आहारान्वेषण करते बक-वृंदो ! सारस वृंदो ! जो श्रमहर तिरु-मूळि क्-कळम् में वास करता है, जिस के नयन, हस्त और चरण रक्त कमलपुष्प से उपमित हैं, जो रक्तबिंबाधर है, जिसका सुंदर शरीर कमलपत्र से उपमित है (वर्ण में), उस स्वामी से पूछो कि क्या हम उसके योग्य नहीं ? 3

3033. तिरु मेनि अडिहळुक्कु-त्
तो विनैयेन् विडु तूदाय्
तिरु मूळि-क् कळम् ए॑न्नुनुम्
शे॑ळु नहर् वाय् अणि मुहिल्हाळ्!
'तिरु मेनि अवट्कु अरुळीर'
ए॑न्र्-क् काल् उम्मै-त् तन्
तिरु मेनि ओ॑ळि अहर्रि-त्
ते॑ळि विशुम्बु कडियुमे? 4

3034. ते॑ळि विशुम्बु कडिदु ओडि-त्
ती वळैत्तु मिन् इलहुम्
ओ॑ळि मुहिल्हाळ्! तिरु मूळि-क्
कळत्तु उरैयुम् ओ॑ण् शुडक्कु
ते॑लि विशुम्बु तिरु नाडा-त्
ती विनैयेन् मनत्तु उरैयुम्
तुळि वार् कळ् कुळलाक्कु ए॑न्
तूदु उरैत्तल् शे॑प्पुमिने॥ 5

3035. तूदु उरैत्तल् शे॑प्पुमिन्गळ्
तू मो॑ळि वाय् वण्डु इनङ्गाळ्!
पोदु इरैत्तु मदु नुहरुम्
पो॑ळिल् मूळि-क् कळत्तु उरैयुम्
मादरै-त् तम् मार्वु अहत्ते
वैत्तार्कु ए॑न् वाय् मार्रम्
तूदुरैत्तल् शे॑प्पुदिरेल्
शुडर् वळैयुम् कलैयुमे॥ 6

3033 सुंदर जलदो! तिरु-मूऴि-क्-कळम् नामक सुंदर नगर में रहते रमणीय शरीर प्रभु के पास मुझ पापिनी के प्रेषित दूत बन के जा कर यदि कहते हो कि अपना सुंदर शरीर उस नायिका को प्रदान करने की कृपा करो, क्या वह तुम्हारे सुंदर शरीर की कांति छीन कर तुम्हें निर्मल आकाश से भगा देगा? 4

3034 निर्मल आकाश में सत्वर संचरित, एवं चक्राकार से ज्वलित हो कर दमकती विद्युत् से संपन्न भासमान बादलो! तिरु-मूऴि-क्-कळम् में वास करते जो भासमान ज्योति है, जो मुझ पापिनी के मन को ही निर्मल आकाशात्मक परमधाम मान कर नित्य वास करता है, जिस के चिकुरों से मधुबिंदुओं का प्रवाह होता है, उसको मेरे दौत्य के वचन सुनाओ। 5

3035 दौत्य के वचन सुनाओ, मधुर वचन मुख मधुकर-वृंदो! हर्षित हो कर जिस के उपवनों के पुष्पों में मधुपान करते हो, उस तिरु-मूऴि-क्-कळम् में जो नित्यवास करते हैं जो लक्ष्मी को अपने वक्षःस्थल में स्थान दे कर रखते हैं, उन्हें मेरे वचनरूप दौत्यवाक्य सुनाओ तो मेरे समुज्ज्वल वलय और वस्त्र (मेरे शरीर पर) टिकेंगे। अब तो वे विरह के कारण खिसक जाते हैं। 6

3036. शुडर् वळैयुम् कलैयुम् कॉण्डु
अरु विनैयेन् तोळ् तुरन्द
पडर् पुहळान् तिरु मूळि-क
कळत्तु उरैयुम् पङ्गय-क कण्
शुडर् पवळ वायने-क् कण्डु
ऑरु नाळ् ओर तूद् माऱ्ऱम्
पडर् पॉळिल् वाय्-क् कुरुहु
इनङ्गाळ्! ऎनक्कु ऑन्रु पणियीरे॥ 7

3037. ऎनक्कु ऑन्रु पणियीहळ्
इरुम् पॉळिल् वाय् इरै तेर्न्दु
मनक्कु इनबम् पड मेवुम्
वण्डु इनङ्गाळ्! तुम्बिहाळ्!
कन-क् कॉळ् तिण् मदिल् पुडै शूळ्
तिरु मूळि-क् कळत्तु उरैयुम्
पुन-क् कॉळ् काया मेनि-प्
पूम् तुळाय् मुडियार्क्कें॥ 8

3038. पूम् तुळाय् मुडियार्क्कु-प्
पॉन् आळि-क् कैयार्क्कु
एन्दु नीर इळम् कुरुहे!
तिरुमूळि-क् कळत्तार्क्कु
'एन्दु पूण् मुलै पयन्दु ऎन्
इणै मलर्-क् कण् नीर् तदुम्ब
ता[illegible] तम्मै-क् कॉण्ड् अहल्दल्
तहवु अन्रु' ऎन्रु उरैयीरे॥ 9

3036 विस्तृत उपवनो में स्थित सारस बृंदो! मेरे समुज्ज्वल वलय और वस्त्र ले कर मुझ पापिनी के भुज (पहले आलिंगन कर के) तज कर उसी से जगद्व्याप्त कीर्ति से जो युक्त है, तिरुमूळिक्कळम् में वास करते उस पंकज लोचन ज्वलंत विद्रुमाधर को देख कर, एक दिन एक स्पष्ट वचन मेरे लिए उसे सुनाओ। 7

3037 विशाल उपवन मे आहार का अन्वेषण कर के मन मे आनंद के साथ संचरित मधुकर-बृंदो! भ्रमर-विशेषो! घने और सुदृढ प्राचीरो से चारो ओर परिवृत तिरुमूळिक्कळम् में नित्य वास करते उर्वरा भूमि मे उपजे अतसीपुष्पसम शरीर और सुंदर तुलसी-विभूषित किरीट से सुशोभित भगवान् से मेरे लिए एक शब्द कहो। ८

3038 जल पर सुख से सचरित मारस! जिस का किरीट सुंदर तुलसी से अलंकृत है, जिसके हस्त में स्पृहणीय चक्र शोभायमान है, जो तिरुमूळिक्कळम् का ईश्वर है, उससे कह दो कि जिससे भूषणभूषित मेरे स्तन पीले पड जाएं और मेरे कमलनयनयुग से आंसू बहे, इस प्रकार अपने को ले कर बिछुड जाना उसकी कृपा के अनुरूप नहीं। ९

3039. 'तहवु अन्रु' ए॑न्रु उरैयीहळ्
तडम् पुनल् वाय् इरै तेन्दु
मिह इनबम् पड मेवुम्
मे॑न् नडैय अन्नङ्गाळ्!
मिह मेनि मे॑लिवु ए॑य्दि
मेकलैयुम् ईड् अळिन्दु ए॑न्
अह मेनि ओ॑ळियामे
तिरुमूळि-क् कळत्तार्क्के ॥ 10

3040. ओ॑ळिवु इन्रि-त् तिरुमूळि-क्
कळत्तु उरैयुम् ओ॑ण् शुडरै
ओ॑ळिवु इल्ला अणि मळले-क्
किळि मो॑ळियाळ् अलररिय शो॑ल्
वळुवु इल्ला वण् कुरुहूर्-च्
चडकोपन् वाय्न्दु उरैत्त
अळिवु इल्ला आयिरत्तु इप्—
पत्तुम् नोय् अरुक्कुमे ॥ 11

3039 विशाल सरोवर में आहार का अन्वेषण कर के अधिक आनंद के साथ (प्रियतम के) संग में रहती मंदगमन हंसियो! मेरे शरीर के अधिक क्षीण होने के पहले, मेखला के भी स्रस्त हो कर गिरने के पहले, तथा मेरे शरीरस्थ आत्मा का अंत होने के पहले ही जा कर तिरुमूळिक्-कुळम् के ईश्वर से कहना कि मुझ से बिछुड जाना कृपा कार्य नहीं। 10

3040 अविच्छिन्न निरुमूळिक्-कुळम् मे वास करने समुज्ज्वल ज्योतिर्मय भगवान् से वियुक्त होने में अशक्त शुकवचनवत् मंजुभाषिणी नायिका ने जो प्रलाप के वचन कहे, उसी भाव में आ कर सुंदर कुरुहूर के शठकोप ये ही वचन बोले। उनके द्वारा रचित अविनाशी सहस्र में यह दशक (भगवद्वियोगात्मक) व्याधि को दूर कर देगा। 11

IX. viii. अरुक्कुम् विनै

3041. अरुक्कुम् विनै आयिन आहत्तु अवनै
निरुत्तुम मनत्तु ऑन्रिय चिन्दैयिनाक्कु
वेरि-त् तण् मलर्-च् चोलैहळ् शूळ् तिरुनावाय्
कुरुक्कुम् वहै उण्डु कॉडियेर्कें ? 1

3042. कॉडि एर् इडै-क् कोहनकत्तवळ् केळ्वन्
वडि वेल् तडम् कण् मड-प् पिन्नै मणाळन्
नॅडियान् उरै शोलैहळ् शूळ् तिरुनावाय्
अडियेन् अणुह-प् पॅरुम्नाळ् ऍवै कॉलो ? 2

3043. 'ऍवै कॉल् अणुह-प् पॅरुनाळ् ?' ऍन्रु ऍप्पोदुम्
कवैयिल् मनम् इन्रिक् कण्णीर्हळ् कलुळ्वन्
नवै इल् तिरु नारणन् शेर् तिरुनावाय्
अवैयुळ् पुहल् आवदु ओर् नाळ् अरियेने ॥ 3

3044. नाळैल् अरियेन् ऍनक्कु उळ्ळन नानुम्
मीळा अडिमै-प् पणि शॅय्य-प् पुहुन्देन्
नीळ् आर् मलै-च् चोलैहळ् शूळ् तिरुनावाय्
वाळ् ऍय् तडम् कण् मड-प् पिन्नै मणाळा ! 4

IX. viii. अरुक्कुम् विनै

(दूर कर देगा कर्म को)

[तिरुनावाय् क्षेत्र—केरल प्रांत]

3041 शरीर के भीतर उन्हें (अर्थात् सर्वेश्वर को) स्थापित करने की दृढ़ इच्छा मन में करते लोगों के कर्म (अर्थात् दुष्कर्म) कहलानेवाले सब (अनिष्ट) को जो दूर कर देता है, तथा जो सुगंधित और शीतल फुलवारियों से परिवृत है, उस तिरुनावाय् (क्षेत्र) में उपस्थित हो जाने का उपाय क्या मुझ पापी को सिद्ध होगा? 1

3042 जो वल्ली-सम-मध्या कोकनद से उद्भूत (अर्थात् पद्म से उत्पन्न) लक्ष्मी का प्रियतम है, तीक्ष्ण बरछा-सदृश विशालनयना भव्य नप्पिन्नै का वल्लभ है, उस सर्वाधिक से अधिष्ठित उपवन-परिवृत तिरुनावाय् के पास दास मेरे पहुँच जाने का दिन कब होगा? 2

[कोकनद—कमल]

3043 'मेरे वहाँ पहुँच जाने का दिन कब होगा'?—एकाग्र मन से सदैव यही सोच कर आँखों मे आंसू बहाता रहता हू। दोषविहीन श्रीमन्नारायण से समाश्रित तिरुनावाय् मे उसकी सभा मे प्रविष्ट हो जाने का एक दिन मैं जानता नहीं॥ 3

3044 अविच्छिन्न निरंतर दासप्रवृत्ति करने के लिए मैं उत्सुक हुआ। परंतु मै नहीं जानता कि किस दिन मै वह सेवा प्राप्त करूंगा। उन्नत और पुष्पित उपवनों से परिवृत तिरु-नावाय् (क्षेत्र) मे विराजमान बरछा सम समुज्ज्वल विशाल नयना भव्य नप्पिन्नै के प्राणवल्लभ। 4

3045. मणाळन् मलर् मङ्गैक्कुम् मण् मडन्दैक्कुम्
कण्णाळन् उलहत्तु उयिर् देवहट्कु ऍल्लाम्
विण्णाळन् विरुम्बि उरैयुम् तिरुनावाय्
कण् आर्-क् कळिक्किन्रदु इङ्गु ऍन्रु कॉल् कण्डे ? 5

3046. कण्डे कळिक्किन्रदु इङ्गु ऍन्रु कॉल् कण्गळ् ?
तॉण्डे उनक्कु आय् ऑळिन्देन् तुरिशु इन्रि
वण्डु आर् मलर्-च चोलैहळ् शूळ् तिरुनावाय्
कॉण्डे उरैहिन्र ऍम् कोवलर् कोवे ! 6

3047. को आहिय मा वलियै निलम् कॉण्डाय् !
देवाशुरम् शॅय्रवने ! तिरुमाले !
नावाय् उरैहिन्र ऍन् नारण नम्बी !
'आ आ अडियान् इवन्' ऍन्रु अरुळाये ॥ 7

3048. अरुळादु ऑळिवाय् अरुळ् शॅय्दु अडियैनै-प्
पॉरुळ् आक्कि उन् पॉन् अडि-क् कीळ् पुह वैप्पाय्
मरुळे इन्रि उन्नै ऍन् नॅञ्जत्तु इरुत्तुम्
तॅरुळे तरु तॅन् तिरुनावाय् ऍन् देवे ! 8

3045 पद्मोद्भवा (लक्ष्मी) और भूमि देवी का जो प्रियवल्लभ है, लोक के जीव-वर्ग तथा देव-गण सब का जो रक्षक है, तथा जो परम धाम का अधीश्वर है उसके सादर समाश्रित तिरु-नावाय् यहाँ आँख भर कर देख के प्रहृष्ट हो जाने का दिन कब है? 5

3046 तुम्हारा दर्शन कर के मेरे नयनों के प्रहृष्ट होने का दिन कब है? निर्बुष्ट भाव से (अर्थात् अनन्य भाव से) मैं तुम्हारा दास बन चुका। मधुकरों से पूर्ण फुलवारियों से परिवृत तिरु-नावाय् को अपना प्रिय स्थान बना कर आवास करते गोपों के अधिप! 6

3047 लोकाधिप (होने का अभिमान करते) महाबलि से भूमि को ग्रहण करते (वामन)! देवों और असुरों के परस्पर विरोध दूर करते (प्रभु) श्रीमन्नारायण! नावाय् में वास करते मेरे नारायण! नम्बि! (गुण सागर!) "हाय! हाय! यह मेरा दास (अनन्यगति) है"— यह जान कर मुझ पर कृपा करो ॥ 7

3048 (निर्दय हो कर) चाहे मुझ पर कृपा करनेवाले नहीं हो जाओ, अथवा कृपा कर के मुझ दास को एक वस्तु बना कर अपने स्पृहणीय पाद मूल में रख दो। बिना अज्ञान-गंध के अपने को मेरे मन में स्थापित करने के अनुकूल समीचीन ज्ञान प्रदान करते सुंदर तिरु-नावाय् में विराजमान मेरे देव! 8

3049. देवर् मुनिवर्क्कु एॅन्ऱुम् काण्डऱ्कु अरियन्
मूवर् मुदल्वन् ओॅरु मू उलहु आळि
देवन् विरुम्बि उऱैयुम् तिरुनावाय्
यावर् अणुह-प् पॅऱुवार् इनि ? अन्दो ! 9

3050. 'अन्दो ! अणुह-प् पॅऱुनाळ् एॅन्ऱु ?' एॅप्पोदुम्
शिन्दै कलङ्गि-त् 'तिरुमाल्' एॅन्ऱु अळैप्पन्
कॉन्दु आर् मलर्-च चोलैहळ् शूळ् तिरु नावाय्
वन्दे उऱैहिन्ऱ एॅम् मा मणि वण्णा ! 10

3051. वॅण्णम् मणि माड नल् नावाय् उळ्ळानै
तिण्णम् मदिळ् तॅन् कुरुहूर्-च् चडकोपन्
पण् आर् तमिळ् आयिरत्तु इप्पत्तुम् वल्लार्
मण् आण्डु मणम् कमळ्वर् मल्हैये ॥ 11

3049 देवों की तथा मुनियों की दृष्टि को जो दुर्लभ है, जो (ब्रह्मा, शिव, इंद्र) तीनों का कारण है, जो लोकत्रय का अद्वितीय रक्षक है, उस देव से सादर समाश्रित तिरुनावाय् प्राप्त करने के भाग्यवंत तो कुछ और ही हो, (न जाने) हाय! (मेरा तो अंत होने ही को है निराशा से)॥ 9

3050 "हाय! मेरे वहां पहुंच जाने का दिन कब होगा?" सर्वकाल इसी भाव से क्षुभित चित्त हो कर पुकारता रहता हूं 'हे श्रीमन् नारायण!' गुच्छों से विकसित पुष्पों से युक्त उपवनों से परिवृत तिरुनावाय आ कर नित्य वास करते हमारे नीलमणिवर्ण! 10

3051 विविध वर्ण मणिमय प्रासादों से समन्वित सुंदर नावाय् (क्षेत्र) के अधिवासी पर सुदृढ़ प्राचीरों से परिवृत सुंदर कुरुहूर के श्री शठकोप के रचित गीति-पूर्ण सहस्र में इस दशक का अध्ययन करने में समर्थ जो है, वे भूमि का शासन कर मल्लिका की सुगंध से सुरभित होंगे। (सर्वगंध कहलाते परमात्मा के समान ये भी सर्वगंध हो कर रहेंगे)॥ 11

IX. ix. माळिहै कमळ्

3052. मळिहै कमळ् तॆन्रल् ईरुम् आल् ओ!
वण् कुरिञ्जि इशै तवरुम आल् ओ!
शॆल् कदिर् मालैयुम् मयक्कुम् आल्! ओ!
शॆक्कर् नन् मेहङ्गळ् शिदैक्कुम् आल्! ओ!
अळि अम् तामरै-क् कण्णन् ऍम्मान्
आयर्हळ् एरु अरि एरु ऍम् मायोन्
पुळिय मुलैहळुम् तोळुम् कॊण्डु
पुहल् इडम् अरिहिलम् तमियम् आल्! ओ! 1

3053. पुहल् इडम् अरिहिलम् तमियम् आल्! ओ!
पुलम्बु उरुम् अणि तॆन्रल् आम्बल् आल्! ओ!
पहल् अडु मालै वण् शान्तम् आल्! ओ!
पञ्चमम् मुल्लै तण् वाडै आल्! ओ!
अहल् इडम् पडैत्तु उण्डु उमिळ्न्दु
अळन्दु ऍङ्गुम् अळिक्किन्र आयन् मायोन्
इहल् इडत्तु अशुरर्हळ् कूर्रम् वारान्
इनि इरुन्दु ऍन उयिर् काक्कुम् आरु ऍन्? 2

3054. इनि इरुन्दु ऍन उयिर् काक्कुम् आरु ऍन्?
इणै मुलै नमुह नुण् इडै नुडङ्ग
तुनि इरुम् कलवि शॆय्दु आहम् तोयन्दु
तुरन्दु ऍम्मै इट्ट् अहल् कण्णन् कळ्वन्
तनि इळम् शिङ्गम् ऍम् मायन् वारान्
तामरै-क् कण्णुम् शॆव्वायुम् नील
प.ने इरुम् कुळलहळुम् नान्गु तोळुम्
पावियेन् मनत्ते निन्रु ईरुम् आल्! ओ! 3

IX. ix. मल्लि है कमळ्

(मल्लिका से सुगंधित)

[पराकुश नायिका को विरह-वेदना-गोकुल में श्रीकृष्ण के गाय चराने जा कर सायंकाल में लौटने में कुछ विलंब होने से सहस्रो गोप-कन्याओं को जो विरहवेदना हुई वह सब यह एक नायिका भोग करती है ॥]

3052 मल्लिका से सुगंधित दक्षिण पवन विद्ध करता है, हाय ! हाय ! मंजुल 'कुरिंजि' (राग) का स्वर शरीर को भेदता है, हाय ! हाय ! अस्त होते सूर्य के साथ संध्या भी मोहित कर देती है, हाय ! हाय ! अरुण वर्ण से युक्त सुंदर मेघ छेड़ते है, हाय ! हाय ! विकसित सुंदर अंबुजाक्ष मेरे स्वामी गोप श्रेष्ठ सिंहपुंगव, मेरे मायावी से आलिंगित स्तन और भुज ले कर बच जाने का स्थान ही जानतीं नहीं हम असहाय, हाय ! हाय !

[कुरिंजि—तमिल संगीत शास्त्र में एक राग का नाम।] 1

3053 बच कर रहने का स्थान नहीं जानतीं। असहाय हैं हम, हाय ! हाय ! (बछड़ो की) बजती घंटी, दक्षिण पवन, पर्ण को बनी मुरली, हाय ! हाय ! दिन का अंत करती संध्या, मनोज्ञ चंदन, हाय ! हाय ! पंचम (स्वर), जूही, शीत उत्तर पवन, हाय ! हाय ! विशाल भूमि की सृष्टि कर और (प्रलय जल से) भूमि को उठा कर, निगल कर और उगल कर, सब की रक्षा करता गोपाल (श्रीकृष्ण), मायी, और युद्ध में अपुरों को मृत्यु तो आता नहीं। इस दशा में रह कर मेरे प्राणो की रक्षा करने का उपाय कहा है? 2

3054 इसके अनंतर रह कर मेरे प्राणो की रक्षा करने का उपाय कहा है? जिसमे मेरे स्तन-युग मृदु हो जाएं, सूक्ष्म कटि भग्न सी हो, इस प्रकार दु:खदायी संयोग कर के शरीर से अत्यंत संश्लेष कर के, हमें परित्याग कर के निकल गया हमारा कपटी कान्ह। अद्वितीय बाल सिंह श्रेष्ठ वह मायी आता नहीं। उसके पंकज नयन और अरुण अधर, नील शीत घने केश और चार भुज मुझ पापिनी के मन में रह कर उसे विदीर्ण कर देते हैं।। हाय ! हाय ! 3

3055. पावियेन् मनत्ते निन्रु ईरुम् आल्! ओ!
वाडै तण् वाडै वॅव्-वाडै आल्! ओ!
मेवु तण् मदियम् वॅम् मदियम् आल! ओ!
मॅन् मलर्-प् पळ्ळि वॅम् पळ्ळि आल! ओ!
तूवि अम् पुळ् उडै-त् तॅय्य वण्डु
तुदैन्द एॅम् पॅण्मै अम् पू इदु आल्! ओ!
आवियिन् बरम् अल्ल वहैकळ् आल्! ओ!
यामुडै नॅञ्जमुम् तुणै अन्रु आल! ओ! 4

3056. यामुडै नॅञ्जमुम् तुणै अन्रु आल्! ओ!
आ पुहुम् मलैयुम् आहिन्रु आल्! ओ!
यामुडै आयन् तन् मनम् कल् आल! ओ!
अवनुडै-त् तोम् कुळल् ईरुम् आल्! ओ!
यामुडै-त् तुणै एॅन्नुम् तोळिमारुम्
एॅम्मिन् मुन् अवनुक्कु मायवर् आल्! ओ!
यामुडै आर् उयिर् काक्कुम् आरु एॅन्?
अवनुडै अरुळ् पॅरुम् पोदु अरिदे॥ 5

3057. अवनुडै अरुळ् पॅरुम् पोदु अरिदु आल्!
अव् अरुळ् अल्लन अरुळुम् अल्ल
अवन् अरुळ् पॅरुम् अळवु आवि निल्लादु
अडु पहल मालैयुम् नॅञ्जुम् काणेन्
शिवनोॅडु पिरमन् वण् तिरुमडन्दै
शेर्तिरु आहम् एॅम् आवि ईरुम्
एॅवन् इनि-प् पुहुम् इडम्? एॅवन् शॅय्हेनो?
आरुक्कु एॅन् शॉल्लुहेन्? अन्नैमीर्काळ्! 6

3055 पवन मेरे मन में रह कर उसे विदीर्ण करता है, हाय! हाय! शीतल (उत्तर) पवन दाहक पवन हो गया, हाय! हाय! अभीष्ट शीतल चंद्र दाहक चंद्र हो गया, हाय! हाय! कोमल पुष्पशय्या दाहकशय्या हो गई। हाय! हाय! दर्शनीय पक्षों से युक्त गरुड़ जिसका वाहन है उस देव भृंग से उपभुक्त हो कर विमर्दित तथा आत्तसार हमारे स्त्रीत्वाख्य सुंदर पुष्प है यह—हाय! उसके संभोग के प्रकार तो हमारी आत्मा को बूभर हैं, हाय! हाय! आत्मीय हृदय भी अब मेरा संगी नहीं, हाय! हाय! 4

3056 आत्मीय हृदय भी मेरा संगी नहीं, हाय! हाय! गायों के लौट कर आने की संध्या भी हो गई, हाय! हाय! हमारे गोपाल का मन क्या पत्थर का है? हाय! हाय! उसकी मधुर मुरली चीर डालती है, हाय! हाय! हमारी साथिन कहलाती सखियां भी हमारे पहले ही उसके हाथ व्यथित हो जाती हैं, हाय! हाय! अपने प्राणों की रक्षा करने का उपाय क्या है? उसकी कृपा प्राप्त करने का अवसर दुष्प्राप है॥ 5

3057 उसकी कृपा प्राप्त करने का अवसर दुष्प्राप है, हाय! जो उनकी कृपाएँ नहीं, वे तो कृपा ही नहीं। उसकी कृपा प्राप्ति तक तो मेरे प्राण रुकेंगे नहीं। दिवस विनाशी संध्या आ गई; अपना हृदय तो नहीं देख पाती। शिव सहित ब्रह्मा और उदार महालक्ष्मी से समाश्रित (परमपुरुष का) सुंदर शरीर हमारे प्राण विद्ध कर देता है। इस के अनंतर हमें शरण लेने का स्थान कहां है? मैं क्या करूं? किस को क्या सुनाऊं? माताओ! 6

3058. आरुक्कु ऎ॑न शॊ॑ल्लुहेन्? अन्नैमीर्हाळ्!
आर् उयिर् अळवु अन्ऱु इक्-कूर् तण् वाडै
कार् ऒ॑क्कुम् मेनि नम् कण्णन् कळ्वम्
कवर्न्दं अत्-तनि नॆ॑ञ्जम् अवन् कण् अह्दे
शीर् उऱ्ऱ अहिल् पुहै याळ् नऱवु
पञ्चमम् तण् पशुम् शान्दु अणैन्दु
पोर् उऱ्ऱ वाडै तण् मल्लिहै-प् पू-प्
पुदुमणम् मुहन्दु कॊ॑ण्डु ऎ॑रियुम् आल्! ओ!

3059. पुदु मणम् मुहन्दु कॊ॑ण्डु ऎ॑रियुम् आल्! ओ!
पॊ॑ङ्गु इळ वाडै पुन् शेक्कर् आल्! ओ!
अदु मणन्दु अहन्ऱ नम् कण्णन् कळ्वम्
कण्णनिल् कॊ॑डिदु इनि अदनिल् उम्बर्
पुदु मण मल्लिहै मन्द-क् कोवै
वण् पशुम् शान्दिनिल् पञ्चमम् वैत्तु
अदु मणन्दु इन् अरुळ् आयच्चियर्क्के
ऊदुम अत्-तीम्-कुळरके उय्येन् नान्॥

3060. ऊदुम् अत् तीम् कुळर्के उय्येन् नान्
अदु मॊ॑लिन्दु इडै इडै-त् तन् शॆ॑य् कोल् त्
तूदु शॆ॑य् कण्गळ् कॊ॑ण्डु ऒ॑न्ऱु पेशि-त्
तू मॊ॑ळि इशैहळ् कॊ॑ण्डु ऒ॑न्ऱु नोक्कि
पेदु उऱुम् मुहम् शॆ॑य्दु नॊ॑न्दु नॊ॑न्दु
पेदै नॆ॑ञ्जु अऱवु अऱ-प् पाडुम् पाट्टै
यादुम् ऒ॑न्ऱु अऱिहिलम् अम्म! अम्म!
मालैयुम् वन्ददु मायन् वारान्॥

3058 किस से क्या कहूँ ? माताओ ! यह अति शीतल पवन प्यारे प्राणों की भरण शक्ति से परे है। मेघ से उपमित हमारे कान्ह की कपटता से अपहृत वह एकाकी मन उसके पास ही ठहर गया। सुगंध संपत् से युक्त अगरु-धूम, वीणा-तंत्री का पंचम स्वर, शीत और अभिनव चंदन, इन सब से लग कर निकलता युद्धोन्मुख पवन शीतल मल्लिका-पुष्प की अभिनव सुगंध को भर कर बहता है, हाय ! हाय ! 7

3059 अभिनव सुगंध भर कर बहता है यह तरुण और प्रबल पवन। हाय ! हाय ! संध्या की लालिमा मंद पड़ गई (रात के आने से)। हाय ! हाय ! वैसे संभोग कर बिछुड़े हमारे कान्ह की कपटता कान्ह से भी क्रूर है। तदनंतर उसके भी ऊपर मधु और सुगंध से युक्त मल्लिका माला और सुंदर और अभिनव चंदन पीड़ा देते हैं। उसके भी ऊपर वर्णनातीत प्रकार से गोपकन्याओं से संभोग कर उन प्रेमापात्र गोपियों के लिए ही पंचम स्वर में वह जो मधुर मुरली बजाता है, उसे सुन कर मैं बच नहीं सकती ॥ 8

3060 बीच बीच में संकेत के वचन बोल कर बजती उस मधुर मुरली से ही मैं बच नहीं सकती। स्वयं ही सुंदर शोभायमान दौत्य करने में कुशल नयनों से कुछ बोल कर, मंजु वचन से युक्त गान से देख कर उसमें प्रभावित मुखमुद्रा दिखा कर, (विरहव्यथा युक्त गोपियों की दशा सोच कर) अनुकंपा करता है। मुग्ध गोप बालिकाओं का दुःख दूर करने के लिए जो गान करता है उसे हम कुछ भी समझ नहीं सकती। अम्मा ! अम्मा ! संध्या आ गई। मायी (श्रीकृष्ण) आता नहीं ॥ 9

3061. मालैयुम् वन्ददु मायन् वारान्
मा मणि पुलम्ब वल् एरु अणैन्द
कोल नल् नाहुहळ् उहळुम् आल्! ओ!
कॉडियन कुळल्हळम् कुळरूम् आल्! ओ!
वाल् ऑळि वळर् मुल्लै करु मुहैहळ्
मल्लिहै अलम्बि वण्ड् आलुम् आल्! ओ!
वेलैयुम् विशुम्बिल् विण्डु अलरुम् आल्! ओ!
ए॑न् शॉल्लि उय्वन् इङ्गु अवनै विट्टे? 10

3062. अवनै विट्टु अहन्रु उयिर् आऱ्र किल्ला
अणि इळै आय्च्चियर् मालै-प् पूशल्
अवनै विट्टु अहल्वदर्कै इरङ्गि
अणि कुरुहूर्-च् चडकोपन् मारन्
अवनि उण्डु उमिळ्न्दवन् मेल् उरैत्त
आयिरत्तुळ् इवै पत्तुम् कॉण्डु
अवनियुळ् अलऱ्रि निन्रु उय्म्मिन् तॉण्डीर्!
अच्-चॉन्न मालै नण्णि-त् तॉळुदे॥ 11

3061 संध्या आ गई। मायी तो आया नहीं। (कंठ में बद्ध) सुंदर घंटियों की ध्वनि से युक्त प्रबल वृषभों का संभोग प्राप्त सुंदर उत्तम कलोरें उत्साह से संचरित होती हैं। हाय! हाय! असह्य प्रकार से मुरलियाँ वुललाती हैं। हाय! हाय! शुभ्रज्योति से युक्त और वर्धमान जुही, चमेली और मल्लिका पुष्पों में डूब कर मधुकर गूंजते हैं। हाय! हाय! वेला (अर्थात् सागर) भी आकाश तक उठ कर ऊंचे शब्द से गरजता है। हाय! हाय! उससे वियुक्त हो कर क्या कर मैं उज्जीवित होऊं? 10

3062 दास जनो! सुंदर कुरुकूर के शठकोप ने जो मारन् वंशज हैं—अवनी को निगल के उगलते श्रीकृष्ण पर सहस्रगीति रची। (उस में) उससे वियुक्त होने से व्यथित हो कर, उससे वियुक्त हो कर प्राणधारण करने में अशक्त तथा सुन्दर आभरणो से भूषित गोपियो के संध्या-क्रन्दन का वर्णन किया सहस्र गीति के इस दशक में श्रीशठकोप ने। इस दशक का गान कर उस प्रेमी सर्वेश्वर के पास जा कर उसकी वंदना कर के इस अवनी में इन पद्यों को ही गाते हुए रह कर उज्जीवित हो जाओ॥ 11

IX. x. मालै नण्णि

3063\. मालै नण्णि-त् तॊऴुदु ऍऴुमिनो विजै कॆ॑ड
कालै मालै कमल मलर् इट्टु नीर्
वेलै मोदुम् मदिळ् शूऴ् तिरु-क् कण्ण पुरत्तु
आलिन् मेलाल् अमर्न्दान् अडि इणैहळे ॥ 1

3064\. कळ् अविऴुम् मलर् इट्टु नीर् इरैञ्जमिन्
नळ्ळि शेरुम् वयल् शूऴ् किडङ्गिन् पुडै
वॆ॑ळ्ळि एयन्द मदिळ्शूऴ् तिरु-क् कण्णपुरम्
उळ्ळि नाळुम् तॊऴुदु ऍऴुमिनो तॊण्डरे ! 2

3065\. तॊण्डर ! नुम् तम् तुयर् पोह नीर् एकम् आय्
विण्डु वाडा मलर् इटट नीर् इरैञ्जुमिन्
वण्डु पाड्म् पॊऴिल् शूऴ् तिरु-क् कण्णपुरत्तु
अण्ड वाणन् अमरर् पॆ॑रुमानैये ॥ 3

3066\. मान् नै नोक्कि मड-प् पिन्नै तन् कॆळ्वनै
तेनै वाडा मलर् इट्टु नीर् इरैञ्जुमिन्
वानै उन्दुम् मदिळ् शूऴ् तिरु-क् कण्णपुरम्
तान् नयन्द पॆ॑रुमान् शरण् आहुमे ॥ 4

IX. x. मालै नणि

(सर्वेश्वर की सेवा में जा कर)

[तिरु-क्-कण्णपुरम् क्षेत्र—तंजावूर जिला]

3063 सागर तरंगो के आघात से युक्त और प्राचीर से परिवृत तिरु क् कण्णपुरम (क्षेत्र) में विराजमान वटपत्रशायी सर्वेश्वर की सेवा मे जा कर, उसके चरणयुग पर कमल-पुष्प प्रातः और सायंकाल (अर्थात् दिन रात, सर्वदा) समर्पित कर के वंदना कर के तुम लोग समुज्जीवित हो जाओ ॥ 1

3064 दास जनो! मधु स्यंदि पुष्प समर्पित कर के तुम (चरण-युग की) आराधना करो। कर्कटियो मे समाश्रित खेतो मे परिवृत खाई के पास चाँदी के बने प्राचीरो मे घिरे तिरु-क्-कण्णपुरम् का नित्य स्मरण कर प्रणति कर के उज्जीवित होओ ॥ 2

3065 दास जनो! अपना दुःख दूर करने के लिए तुम सब एक हृदय हो कर, भ्रमर-गीत से युक्त उपवनों से परिवृत तिरु क् कण्णपुरम् मे विराजमान ब्रह्माड के अधिप और अमरो के अधीश्वर की आराधना प्रफुल्ल और अम्लान पुष्प समर्पित कर करो ॥ 3

3066 हरिण विजयीलोचना भव्य नप्पिन्नै के वल्लभ मधु (सदृश) (श्रीकृष्ण) की आराधना अम्लान पुष्प समर्पित कर के करो। गगन-स्पर्शी प्राचोरो से परिवृत तिरु-क्-कण्णपुरम् मे इच्छापूर्वक वास करता भगवान् शरण होगा ॥ 4

3067. शरणम् आहुम् तन ताळ् अडैन्दाक्कु ए॑ल्लाम्
मरणम् आनाल् वैकुन्दम् कॊ॑डुक्कुम् पिरान्
अरण् अमैन्द मदिळ् शूळ् तिरु-क् कण्णपुर-त्
तरणि-आळन् तनदु अन्बक्कु अन्बु आहुमे ॥ 5

3068. अन्बन् आहुम् तन ताळ् अडैन्दाक्कु ए॑ल्लाम्
शॆ॑म् पॊ॑न् आहत्तु अवुणन् उडल् कीण्डवन्
नन् पॊ॑न् एय्न्द मदिळ् शूळ् तिरु-क् कण्णपुरत्तु
अन्बन् नाळुम् तन मॆ॑य्यक्कु मॆ॑य्यने ॥ 6

3069. मॆ॑य्यन् आहुम् विरुम्बि-त् तॊ॑ळुवाक्कु ए॑ल्लाम्
पॊ॑य्यन् आहुम् पुरमे तॊ॑ळुवाक्कु ए॑ल्लाम्
शॆ॑य्यिल् वाळै उहळुम् तिरु-क् कण्णपुरत्तु
ऐ॑यन् आहत्तु अणैप्पार्हट्कु अणियने ॥ 7

3070. अणियन् आहुम् तन ताळ् अडैन्दाक्कु ए॑ल्लाम्
पिणियुम् शारा पिरवि कॆ॑डुत्तु आळुम्
मणि पॊ॑न् एय्न्द मदिळ् शूळ् तिरु-क् कण्णपुरम्
पणिमिन् नाळुम् परमेट्टि तन् पादमे ॥

3067 उसके चरण को उपाय मान कर आश्रय लेनेवालों को जो शरण (अर्थात् रक्षक) होता है, उनके मरणानंतर जो उन्हें वैकुण्ठ देता उपकारी है, और जो रक्षण समर्थ प्राचीर से परिवृत तिरु-क्-कण्णपुरम् में विराजमान धरणीशासक है (अर्थात् भूमि रक्षक है), वह उन के विषय में प्रेममय बन जाता है जो उससे प्रेम करते हैं ॥ 5

3068 उनके चरणो का आश्रय लेनेवालों का वह प्रेमी है। तप्त हिरण्य शरीर असुर (हिरण्य कशिपु) का शरीर विदारक है। उत्तम सुवर्ण के बने प्राचीरों मे परिवृत तिरु क्-कण्णपुरम् का स्नेही है। जो उसके प्रति सच्चे है (अर्थात् अनन्यप्रयोजन प्रेम करते है) उनके प्रति वह भी सच्चा है॥ 6

3069 प्रेम के साथ प्रणति करने सब को वह सच्चा है। प्रयोजनांतर रुचि से प्रणति करते सब लोगो को वह असत्य है। (अर्थात् अपना स्वरूप दिखाना नहीं।) मत्स्यसंचार से युक्त खेतो म समन्वित तिरु क् कण्णपुरम् के स्वामी उनके अति निकट है जो अपने हृदय मे उसे रखने है ॥ 7

3070 उसके चरण का आश्रय लेते सभी के वह अति निकट है। रोग उनके पास फटकते नहीं। जन्म दूर कर भगवान् रक्षा करता है। मणि और कांचन से निर्मित तिरु क्-कण्णपुरम् में विराजमान परमेष्ठी के चरणों के नित्य प्रणाम करो ॥
[परमेष्ठी—सर्वेश्वर] 8

3071. पादम नाळुम् पणिय-त् तणियुम् पिणि
एदम् शारा ऍनक्केल् इनि ऍन् कुरै ?
वेद नावर् विरुम्बुम् तिरु-क् कण्णपुरत्तु
आदियानै अडैन्दार्क्कु अल्लल् इल्लैये ॥ 9

3072. इल्लै अल्लल् ऍनक्केल इनि ऍन् कुरै ?
अल्लि मादर् अमरुम् तिरु मार्बिनन्
कल्लिलल् एयन्द मादळ् शूळ् तिरु-क् कण्णपुरम्
शॊल्ल नाळुम् तुयर् पाडु शारावे ॥ 10

3073. पाड् शारा विनै परुरु अर् वेण्डवीर् !
[redacted] इम्परत्तुम्
[redacted] अवन् ताळ्हळै 11

3071 नित्य चरणों को प्रणाम करते तो रोग शमित हो जाते है। कोई अवद्य पास नहीं फटकता। एतदनन्तर मुझे न्यूनता किसकी है? जिनकी जीभ मे वेद है उनमे आदृत तिरुक्कण्णपुरम् मे विराजमान आदि (कारण) का आश्रय लेनेवालों को कोई दुःख नहीं॥ 9

3072 कोई दुःख नहीं। मुझे आगे किसकी न्यूनता है? कमलवासिनी (लक्ष्मी) से समाश्रित सुन्दर वक्ष से युक्त भगवान् जहाँ विराजमान है, शिला निर्मित प्राचीर से परिवृत उस तिरुक्कण्णपुरम का नाम लेने पर कभी दुःख पास नहीं फटकेंगे॥ 10

3073 जिससे वे पास न फटके ऐसा वासनासहित दुष्कर्म-निवृत्ति के इच्छुको! उन्नत प्रासादों से युक्त कुरुहूर के शठकोप के रचित तमिल गीतिमय सहस्र मे इस दशक का गान करो, नर्तन करो, सर्वेश्वर के चरणों की प्रणति करो॥ 11

X. i. ताळ तामरै

3074. ताळ तामरै-त् तड मणि क्यल् तिरुमोहूर्
नाळुम् मेवि नन्गु अमन्दु' निन्रु
अशुररै-त् तहक्कु'म्
तोळुम् नान्गु उडै-च् चुरि कुळल्
कमल-क कण् कनि वाय्-क्
काळमेगत्तै अन्रि मरु ओ'न्रु इलम् गदिये

3075. इलम् गदि मर्रु ओ'न्रु ईन् तण् तुळायिन्
अलङ्गल् अम् कण्णि आयिरम् पेर् उडै अम्मान्
नलम् कोळ् नान् मरै वाणर्हळ् वाळ् तिरुमोहूर्
नलम् कळलवन् अडि निळल् तडम् अन्रि यामे। 2

3076. 'अन्रि याम् ओ'रु पुहल इडम्
इलम्' ए'न्रु ए'न्रु अलरि
निन्रु नान्मुहन् अरनो'ड देवर्हळ् नाड
वे'न्रु इम्-मू उलहु अलित्तु उळल्वान् तिरुमोहूर्
नन्रु नाम इनि नणुहदुम् नमदु इडर् के'डवे॥

X. i. ताळ-तामरै

(नाल-सहित कमल)

[तिरु-मोहूर् क्षेत्र—मधुरा जिला]

3074 नालसहित कमल सरोवर तथा मनोहर खेतो से समन्वित तिरुमोहूर में सप्रीति और सादर जो नित्य विराजमान है, जो असुर-विनाशक चतुर्भुज, कुटिलकुन्तल, कमलनयन तथा विबाधर से समन्वित है, उस कालमेघ के व्यतिरिक्त (अर्थात् घनश्याम से व्यतिरिक्त) हमें दूसरी कोई गति नहीं ।।

[गति—मार्गसहाय और प्राप्य ।] [तिरुमोहूर्—श्री मोहनपुरी] 1

3075 हमें सभी जन्मो मे दूसरी कोई गति नहीं उस (कालमेघ) के व्यतिरिक्त जो मधुर और शीतल तुलसी से भासमान माला से सुशोभित है, जो नाम सहस्र वान् स्वामी है, जिस के चरणयुग सुखप्रद है, तथा जो सर्वहितैषी चतुर्वेद विज्ञ सज्जनो के आवास तिरुमोहूर में विराजमान है, उसके चरण-च्छाया के व्यतिरिक्त (दूसरी कोई गति नहीं) ।। 2

3076 "(तुम्हारे व्यतिरिक्त) हमें कोई शरण नहीं" कह कह कर क्रन्दन करते हुए खड़े हो कर चतुर्मुख और हर के साथ देवताओं के प्रार्थना करने पर (उनके शत्रुओं को) जीत कर, इस लोकत्रय की रक्षा कर के, उसी में लगे रहते परमात्मा के आवास तिरुमोहूर् अपने दुःखनिरास के लिए अनन्य भाव से हम पहुँच जाएँगे ।। 3

3077. 'इडर् कॅडं एॅम्मै-प् पोन्दु
अळियाय्' एॅन्रु एॅन्रु एत्ति
शुडर् कॉळ् शोदियै-त्
तेवरुम् मुनिवरुम् तॉडर
पडर् कॉळ् पाम्बु अणै-प्
पळ्ळि कॉळ्वान् तिरुमोहूर्
इडर् कॅडं अडि परवुदुम्
तॉण्डीर्! वम्मिने॥ 4

3078. तॉण्डीर्! वम्मिन नम् शुडर्
ऑळि ऑरु तनि मुदल्वन्
अण्ड मू उलहु अळन्दवन्
अणि तिरु मोहूर्
एॅण् तिशैयुम् ईन् करुम्बॉडु
पॅरुम् शॅन्नॅल् विळैय
कॉण्ड कोयिलै वलम् शॅय्दु
इङ्गु आडुदुम् कूत्ते॥ 5

3079. कूत्तन् कोवलन् कुदर्रु
वल् अशुरर्हळ् कूर्रम्
एत्तुम् नङ्गट्कुम् अमरर्क्कुम्
मुनिवर्क्कुम् इन्बन्
वाय्त्त तण् पणै वळ वयल् शूळ्
तिरुमोहूर्
आत्तन् तामरै अडि अन्रि
मर्रु इलम् अरणे॥ 6

3077 "हमारे दुःख दूर करने के लिए आ कर हमारी रक्षा करो" कह कह कर स्तुति कर के भासमान ज्योति से युक्त भगवान् का देवों और मुनियों के आश्रय करने के अनुकूल विकसितफण सर्पशय्या पर जो शयित है तथा जो तिरुमोहूर में विराजमान है. उसके चरणो की स्तुति करेंगे, जिससे हमारे दुःख दूर हो जाएं दासजनो! आओ॥ 4

3078 दासजनो! आओ। हमारे समुज्ज्वल जोति, विलक्षण और अद्वितीय कारण तथा अंडान्तर्गत लोकत्रय के मापक के सुंदर तिरुमोहूर मे, जहा आठ दिशाओं मे मधुर ईख के साथ उन्नत शालिधान वर्धित होते है, उसके आलय की परिक्रमा कर के (हर्ष के साथ) यहां नर्तन करेंगे॥ 5

3079 जो नटवर गोपाल है, जो हिंसालु प्रबल असुरों की मृत्यु है, जो स्तुति करते हमको अमरों को तथा मुनियों को भोग्य है, एवं जो समृद्ध और शीत जलाशयों से तथा उपजाऊ खेतों से परिवृत तिरुमोहूर में विराजमान आप्त है उसके कमल चरण के व्यतिरिक्त हमें दूसरा कोई दुर्ग नहीं॥ 6

3080. मऱ्ऱु इलम् अरण् वान पॆरुम्
पाळ् तनि मुदला
शुऱ्ऱु नीर् पडैत्तु अदन् वऴि-त्
तॊन् मुनि मुदला
मुऱ्ऱुम् देवरॊडु उलहु शॆय्वान्
तिरुमोहूर्
शुऱ्ऱि नाम् वलम् शॆय्य नम्
तुयर् कॆडुम् कडिदे ॥ 7

3081. तुयर् कॆडुम् कडिदु अडैन्दु
वन्दु अडियवर! तॊऴुमिन्
उयर् कॊळ् शोलै ऒण् तडम्
अणि ऒळि तिरुमोहूर्
पॆयर्हळ् आयिरम् उडैय
वल् अरक्कर् पुक्कु अऴुन्द
दयरतन् पॆऱ्ऱ मरकत
मणि-त् तडत्तिनैये। 8

3082 मणि-त् तडत्तु अडि मलर्-क् कणगळ्
पवळ-च् चॆव्-वाय्
अणि-क् कॊळ् नाल् तडम् तोळ्
दॆय्वम् अशुरर् ऎन्नुम्
तुणिक्कुम् वल् अरट्टन् उऱै
पॊऴिल् तिरुमोहूर्
-ऩत्तु नम्मुडै नल् अरण्
नाम अडैन्दनमे ॥ 9

3080 (हमें) दूसरा कोई दुर्ग नहीं। विपुल महान् और अद्वितीय प्रकृति से आरंभकर के, आवरण-जल की सृष्टि कर के, उसी रीति से सर्वप्रथम ब्रह्मा आदि सब देवताओं के साथ लोक की सृष्टि करते परमपुरुष के तिरुमोहूर के सब ओर हम परिक्रमा करते है तो, हमारे दुःख शीघ्र ही मिट जाएगे॥ 7

3081 उन्नत उपवन तथा सुन्दर तडाग से सुशोभित समुज्ज्वल तिरुमोहूर में जो विराजमान है, (यज्ञशत्रु ब्रह्मशत्रु जैसे) सहस्र नामों से युक्त बलिष्ठ राक्षसों के डूब कर मर मिटने के लिए दशरथ निर्मित मरकत-मणि तडाग जा पहुंच कर उस की प्रणति करो। दास जनो! शीघ्र ही तुम्हारे दुःख मिट जाएगे॥ 8

308' नीलमणि तडाग (सदृश ताप हर) चरण और प्रफुल्ल नयन, विद्रुम रक्ताधर और भूषणभूषित पीन चतुर्भुज तथा दिव्य विग्रह से जो युक्त है, जो सर्वकाल में असुरों का भंग करता प्रबल शूर है, उससे अधिष्ठित उपवन परिवृत तिरुमोहूर (हमारे) निकट है। वह है हमारा हितकर दुर्ग जिसे हमने प्राप्त किया॥ 9

3083. 'नाम् अडैन्द नल् अरण् नमक्कु'
एॅन्रु नल् अमरर्
तीमै शॅय्युम् वल् अशुररै
अञ्जि-च् चॅन्रु अडैन्दाल्
काम रूपम् कॉण्डु एॅळुन्दु
अळिप्पान् तिरुमोहूर्
नाममे नविनरु एॅण्णुमिन्
एत्तुमिन् नमर्हाळ्! 10

3084. 'एत्तुमिन् नमर्हाळ्!' एॅन्रु
तान् कुडम् आडु
कूत्तनै कुरुहूर्-च्
चडकोपन् कुर्रेवल्
वाय्न्त आयिरत्तुळ् इवै
वण् तिरुमोहूर्क्कु
ईत्त पत्तु इवै एत्त
वल्लार्क्कु इडर् कॅडुमे॥ 11

3083 पीडा देते प्रबल असुरों से डर कर यदि सात्त्विक देव गण, यह समझ कर कि हम से प्राप्त एक उत्तम वुर्ग है, उसकी शरण में जाते है तो, कामरूप लेकर उठ कर जो उनकी रक्षा करता है, उस परमात्मा के तिरुमोहूर का नाम वोल कर जप करो, उसकी स्तुति करो, हमारे संबंधियो। 10

3084 'हमारे संबंधियो! स्तुति करो'' कह कर घटनर्तक नटवर पर कुरुहूर के शठकोप से अंतरंग सेवा के रूप में उत्पन्न सहस्रगीति में मनोज्ञ तिरुमोहूर के अर्पित इन दस पद्यों का अध्ययन करने में जो समर्थ हैं, उनके क्लेश मिट जाएगे।। 11

X. ii कॆँडम् इडर्

3085. कॆँडुम् इडर् आय ऎँल्लाम्
केशवा ऎँन्न नाळुम्
कॊँडु विनै शॆँय्युम् कूर्रिन्
तमर्हळुम् कुरुह किल्लार्
विडम् उडै अरविल् पळ्ळि
विरुम्बिनान् शुरुम्बु अलरुम्
तडम् उडै वयल् अनन्त-
पुर नहर् प् पुहुदुम् इन्रे ॥ 1

3086 इन्रु पोय्-प् पुहिदिराहिल्
ऎँळुमैयुम् एदम् शेरा
कुन्रु नेर् माड माडे
कुरुन्दु शेर् शॆँरुन्दि पुन्नै
मन्रु अलर् पॊँळिल् अनन्त
पुर नहर् मायन् नामम्
ऒँन्रुम् ओर् आयिरम् आम्
उळ्ळुवार्क्कु उम्बर् ऊरे ॥ 2

3087 ऊरुम् पुळ् कॊँडियुम् अह्दे
उलहु ऎँल्लाम् उण्डु उमिळ्न्दान्
शेरुम तण् अनन्तपुरम्
शिक्कॆँन-प् पुहुदिराहिल्
तीरुम्नोय् विनैहळ् ऎँल्लाम्
तिण्णम नाम् अरिय-च् चॊँन्नोम्
पेरुम् ओर् आयिरत्तुळ्
ऒँन्रु नीर् पेशुमिनै ॥ 3

X. ii. केडुम् इडर्

(दुःख मिट् जाएँगे)

[तिरु-अनन्तपुरम् क्षेत्र—केरल प्रांत]

3085 केशव का नाम लेते ही क्लेश कहलाते सब मिट जाते है। क्रूर यातनाएं देते मृत्युदेव के किंकर भी पास फटक नही सकते। विषयुक्त सर्प पर शयित होने में आदर करते परमात्मा के अनंतपुर नगर में हम आज ही प्रविष्ट हो जाएँ—जो नगर भ्रमरो के गुंजन से युक्त तडागो से तथा खेतों से संपन्न है ।। 1

3086 आज ही जा कर प्रविष्ट हो जाओ तो सप्त जन्म म (अर्थात् सब काल मे) अवश्य पास नही फटकते। पर्वत सदृश प्रासादों के पास कुन्द वृक्षों के साथ चेरुन्दि और पुन्नाग तरुओ की सुगंध फैलाते उपवनों से युक्त अनन्तपुरम् नगर का जो मायी है, उसके नामों का ध्यान करनेवालों का वासस्थान ऊर्ध्वलोक ही है (अर्थात वही परमधाम तुल्य है)। मायी के नाम—जिनमें एक एक भी सहस्रनामो की महिमा से युक्त है ।। 2

3087 (लोक रक्षणार्थ जाने के लिए) विहंग (गरुड़) को चलाता है। वही उसका ध्वज भी है। सब लोक निगल कर उगलते परमात्मा से आश्रित शीतल अनन्तपुर नगर में अनन्यभाव से प्रविष्ट हो जाओगे तो सब रोग और पाप मिट जाएगे। यह निश्चय है। सब लोगो को विदित होने के लिए हम कहते है। उनके अद्वितीय सहस्र नामों में कोई नाम कीर्तन करो ।। 3

3088. पेशुमिन् कूशम् इन्रि-प्
पॆरिय नीर् वेलै शूळ्न्दु
वाशमे कमळुम् शोलै
वयल् अणि अनन्तपुरम्
नेशम् शॆय्दु उरैहिन्राने
नॆरिमैयाल् मलर्हळ् तूवि
पूशने शॆय्हिन्रार्हळ्
पुण्णियं शॆय्दवारे ॥ 4

3089 पुण्णियम् शॆय्दु नल्ल
पुनलोडु मलर्हळ् तूवि
एॆण्णुमिन् एॆन्दै नामम्
इप्-पि रप्पु अरुक्कुम् अप्पाल्
तिण्णम् नाम अरिय-च् चॊन्नोम्
शॆरि पॊळिल् अनन्त पुरत्तु
अण्णलार् कमल पादम्
अणुहुवार् अमरर् आवार् ॥ 5

3090. अमरर् आय्-त् तिरि हिन्रार्हट्कु
आदि शेर् अनन्त पुरत्तु
अमरर् कोन् अर्च्चिकिन्रु
अङ्गु अहप्पणि शॆय्वर् विण्णोर्
नमर्हळो ! शॊल्ल-क् केण्मिन्
नामुम् पोय् नणुह वेण्डुम्
क्मरनार् तादै तुन्बम्
तुडैत्त गोविन्दनारे ॥ 6

3088 करो संकीर्तन निस्संकोच। महासागर जल से परिवृत और सुगंध से सुरभित उद्यानो से तथा खेतो से सुन्दर अनंतपुरम् में स्नेह के साथ वास करते भगवान् के चरणों) में यथाविधि पुष्पो को समर्पित कर के पूजा करनेवाले कितने ही पुण्यवंत है ! 4

3089 पुण्य कर के (अर्थात् भक्ति कर के) निर्मल जल और पुष्प समर्पित कर के मेरे स्वामी के नामों का स्मरण करो। (नाम) इस जन्म का अंत कर देगा। इसके अतिरिक्त निबिड़ उपवनो मे युक्त अनन्तपुरम् के (पद्मनाभ) स्वामी के चरण कमल की सेवा में जो जाते हैं वे अमर ही बनेगे। यह निश्चय है। सब को विदित होने के लिए हम कहते है। 5

3090 अमरों के नाम से संचरण करनेवालों के भी आदि (कारण) (श्रीपद्मनाभ) से समाश्रित अनतपुर में अमरों के अधिप (श्री विष्वक्सेन) की (भगवान् की) अर्चना करते समय नित्यसूरिगण नव अंतरग परिचर्या करते है। अस्मदीय बंधुओ! हम कहते हैं, सुनो। कुमार (अर्थात् सुब्रह्मण्य देव) के तात (पिता रुद्र) का दु:ख दूर करते श्रीगोविंद की सेवा में हमें भी पहुंच जाना चाहिए।। 6

3091. तुडैत्त गोविन्दनारे
उलहु उयिर् देवुम् मर्रुम्
पडैत्त ए॑म् परम मूर्त्ति
पाम्बु अणै-प् पळ्ळि कॉ॑ण्डान्
मडैत्तलै वाळै पाशुम्
वयल् अणि अनन्तपुरम्
कडैत्तलै शायक-प् पॅ॑र्शल्
कडु विनै कळैयलामे॥ 7

3092. कडु विनै कळैयल् आहुम्
कामनै-प् पयन्द काळै
इड वहै कॉ॑ण्डदु ए॑न्वर्
ए॑ळिल् अणि अनन्तपुरम्
पडम् उडै अरविल् पळ्ळि
पयिन्र्रवन् पादम् काण
नडमिनो नमहॅ॑ळ् उळ्ळीर्!
नाम् उमक्कु अरिय-च् चॉ॑ननोम्॥ 8

3093. नाम् उमक्कु अरिय-च् चॉ॑न्नोम्
नाळ्हळुम् नणियवान
शेम नन्गु उडैत्तु-क् कण्डोर्
शॅ॑रि पॉ॑ळिल् अनन्तपुरम्
दूम नल् विरै मलर्हॅ॑ळ्
तुवळ् अर आय्न्दु कॉ॑ण्डु
वामनन् अडिक्कु ए॑नरु एत्त
माय्न्दु अरुम् विनैहळ् तामे॥ 9

3091 (प्रलय काल में जगत् का) संहार करते श्रीगोविंद ही लोक में मनुष्य देव और अन्य सभी की सृष्टि करते परममूर्ति (अर्थात् सर्वेश्वर) हैं जो सर्पशय्या पर शयित हैं। जहां वे शयित हैं और जिसके खेतों के नालों में मछलियां खेल रही हैं उस सुन्दर अनन्तपुरम् के मुखद्वार का संमार्जन करने का भाग्य हमें प्राप्त हो तो हम घोर पापों का नाश कर सकते हैं॥ 7

3092 घोर पाप दूर कर सकते हैं। कहते हैं कि काम के उत्पादक युवा के शयन करने का स्थान कांतियुक्त मनोहर अनन्तपुरम है। विकसितफण सर्प पर शयित भगवान् के पाद दर्शन के लिए अभी चलो; हमारे संबंधियो! तुम्हें विदित करने के लिए हम कहते हैं॥ 8

•3093 तुम लोगों के विदित होने के लिए हमने कहा। (शरीरावसान के लिए निश्चित) दिन भी समीप आ रहे हैं। यह जान लो कि निबिड़ उपवनों से युक्त अनन्तपुरम् हितमय क्षेम से (अर्थात् रक्षणशक्ति से) संपन्न है। वामन-चरण की पूजा के लिए ये वस्तुएं हैं—ऐसा संकल्प कर के दोषविहीन धूप और सुगंधित उत्तम पुष्प सावधानी से चुन कर वामन की पूजा में लग कर उसकी स्तुति करते हो तो सब पाप अपने आप ही ध्वस्त हो जाएंगे॥ 9

3094. मायन्दु अरुम् विनैहळ् तामे
मादवा ऍन्न नाळुम्
एयन्द पोॅन् मदिळ् अनन्त
पुर नहर् ऍन्दैक्कु ऍन्रु
शान्दोॅडु विळक्कम् दूपम्
तामरै मलर्हळ् नल्ल
आयन्दु कोॅण्डु एत्त वल्लार्
अन्तम् इल् पुहळिनारे ॥ 10

3095. अन्तम् इल् पुहल् अनन्त
पुर नहर् आदि तन्नै
कोॅन्दु अलर् पोॅळिल् कुरुहूर्
मारन् शोॅल् आयिरत्तुळ्
ऐन्दिनोडु ऐन्दुम् वल्लार्
अणैवर् पोय् अमर् उलहिल्
पैन्दोॅडि मडन्दैयर् तम्
वेय् मरु तोळ् इणैये ॥ 11

3094 'माधव' कहते ही सब पाप अपने आप ध्वस्त हो जाएगे। सुदृढ़ कनकमय प्राचीर से परिवृत अनन्तपुरम् मे बिराजमान हमारे स्वामी की आराधना का संकल्प कर के, चंदन के साथ दीप और धूप, उत्तम कमल पुष्प इन सब को चुन चुन कर ले कर उसकी स्तुति करने मे जो कुशल है, वे निरवधिक कीर्तिमंत होते है ।। 10

3095 निरवधिक कीर्ति से युक्त अनंतपुर नगर मे शयित आदि (कारण पद्मनाभ) पर पुष्प-गुच्छों से समन्वित उपवन से परिवृत कुरुहूर के मारन् (अर्थात् मार वंशज शठकोप) के कथित सहस्रगीति मे पाच से समन्वित पाच (अर्थात् दस) पद्यों के अध्ययन में जो समर्थ है, वे (अचिरादि गति से) जा कर अमरलोक मे (अर्थात् परमधाम मे) सुन्दर कंकणो से भूषित मुग्ध ललनाओं के बंश सदृश मनोहर भुजो का आलिंगन करेंगे ।। (परमधाम में सुन्दर अप्सराए इनका स्वागत कर के भूषणों से अलंकार कर के इन की आराधना करती हैं ।।) 11

X. iii. वेय् मरु तोळ् इणै

3096 वेय् मरु तोळ् इणै मॆलियुम् आलो!
मॆलिवुम् ऎन् तनिमैयुम् यादुम् नोक्का
का मरु कुयिल्हळुम् कूवुम् आलो!
गण-मयिल् अवै कलन्दु आलुम् आलो!
आ मरु इन निरै मेय्क्क नी पोक्कु
ऒरु पहल् आयिरम् ऊऴि आलो!
तामरै-क् कण्गळ् कॊण्डु इदि आलो!
तहवु इलै तहवु इलैये नी कण्णा! 1

3097. तहवु इलै तहवु इलैये नी कण्णा!
तड मुलै पुणर् तॊरुम् पुणर्च्चिक्कु आरा
शुक-वेळ्ळम् विशुम्बु इरन्दु अरिवै मूळ्क-च्
चूळ्न्ददु कनवु ऎन निङ्गि आङ्गे
अह उयिर् अहम् अहम् तोरुम् उळ् पुक्कु
आवियिन् बरम् अल्ल वेट्कै अन्दो!
मिह मिह इनि उन्नै-प पिरिवै आम् आल्
वीव निन् पशु निरै मेयक्क-प् पोक्के॥ 2

3098. वीव निन् पशु निरै मेयक्क-प् पोक्कु
वेव्-उयिर कॊण्डु एनदु आवि वेम् आल
यावरुम तुणै इल्लै यान् इरुन्दु उन्
अञ्जन मेनियै आट्टम् काणेन्
पोवदु अन्रु ऒरु पहल् नी अहन्राल्
पॊरु कयल् कण् इणै नीरुम् निल्ला
शा दु इव्-आय-क् कुलत्तु आय्च्चियोम् आय्-प्
पिरन्द इत् तॊळुत्तैयोम् तनिमै ताने। 3

X iii. वेय् मरु तोळ्

(वंश सदृश भुज)

[परांकुश नायिका श्रीकृष्ण से, जो सामने ही खड़ा है, अपनी विरह वस्था का वर्णन करती है। संत का यह एक विलक्षण भगवदनुभव है।]

3096 वंश सदृश भुजद्वय कृश हो जाते है, हाय! हाय! मेरी कृशता और सहायहीन दशा को देखे बिना दर्शनीय कोकिलो के झुंड कूक उठते है। हाय! हाय! मयूर गण परस्पर सयोग कर के नाचते है, हाय! हाय! तुम्हारे सगमे रहती गायो के समूह चराने के लिए तुम्हारे बाहर चले जाने मे एक दिन सहस्रकल्प के समान है, हाय! हाय! पंकजनयनो द्वारा तुम मुझे विदीर्ण करते हो। निर्घृण हो, निर्घृण हो तुम, कान्ह! 1

3097 निर्घृण हो तुम, निर्घृण हो तुम, कान्ह! पीन स्तनो का तुम्हारे आलिगन करते सभी समय उस आलिगन से अपरिमित सुखप्रवाह होता है जो आकाश के उस पार भी जा कर ऐसा व्याप्त होता है जिससे हमारा ज्ञान उसमे डूब जाता है (अर्थात् उस आनंद मे हमे किसी का कुछ भी ज्ञान नहीं रहता।) (दूसरे ही क्षण मे) वहीं वह स्वप्न के समान तिरोहित हो जाता है। फिर तुम्हे देखने की इच्छा अत्यधिक होती है जो शरीर मे स्थित प्राणो के अवयव अवयव मे भर जाती है और प्राणो का रहना दूभर हो जाता है। हाय अतः एतदनंतर गायें चराने के लिए अपने बहिर्गमन को छोड़ दो जिससे हमे पुनः पुन. तुम्हारा वियोग ही न हो ॥ 2

•3098 गायें चराने के लिए अपने बाहर जाने की प्रवृत्ति ही छोड़ दो। उष्ण नि.श्वास से हमारी आत्मा जल जाती है। साथिन कोई भी नहीं। मैं एकाकिनी रह कर अंजनतुल्य तुम्हारे शरीर को (मेरी ओर आने की) प्रवृत्ति नहीं देखती। तुम बिछुड़ कर जाओगे तो वह एक दिन व्यतीत नहीं होता। स्पर्धित मत्स्य सदृश नयन युगल से अश्रु प्रवाह रुकता नहीं। इस गोपकुल में गोपियों का जन्म ले कर क्षुद्र हमारी विरहावस्था मृत्यु ही है ॥ 3

3099. तॊ॑ळुत्तैयोम् तनिमैयुम् तुणै पिरिन्दार्
तुयरमुम् निनैहिलै गोविन्दा! निन्
तॊ॑ळुत्तनिल् पशुक्कळैये विरुम्बि-त्
तुरन्दु ए॑म्मै विट्टु अवै मेय्क्क-प् पोदि
पळुत्त नल् अमुदिन् इन् शार्रु वॆ॑ळ्ळम्
पावियेन मनम् अहम् तोरुम् उळ् पुक्कु
अळुत्त निन् शॆ॑म् कनि वायिन् कळ्व-प्
पणि मॊ॑ळि निनैतॊ॑रुम् आवि वेम् आल्! 4

3100. पणि मॊ॑ळि निनै तॊ॑रुम् आवि वेम् आल्!
पहल् निरै मेय्क्किय पोय कण्णा!
पिणि अविळ् मल्लिहै वाडै तूव-प्
पॆ॑रु मद मालैयुम् वन्दिनृरु आलो!
मणि मिहु मार्विनिल् मुल्लै-प् पोदु ए॑न्
वन मुलै कमळ्वित्तु उन् वाय् अमुदम् तन्दु
अणि मिहु तामरै-क् कैयै अन्दो!
अडिच्चियोम् तलै मिशै नी अणियाय्॥ 5

3101. अडिच्चियोम् तलै मिशै नी अणियाय्
आळि अम् कण्णा! उन् कोल-प् पादम्
पिडित्तु अदु नडुवु उनक्कु अरिवैमारुम्
पलर् अदु निर्क ए॑म् पॆ॑ण्मै आर्शेम्
वडि-त् तडम् कण् इणै नीरुम् निल्ला
मनमुम् निल्ला ए॑मक्कु अदु तन्नाले
वॆ॑ड्डिप्पु निन् पशु निरै मेय्क्क-प् पोक्कु
वेम् एमदु उयिर् अळल् मॆ॑ळुहिल् उक्के॥ 6

3099 हम दासियों की असहाय दशा, तथा साथी से बिछुड़ कर रहती कामिनियों का दुख-- इस पर तो तुम ध्यान देते हो नहीं, हे गोविन्द ! अपनी गोशाला की धेनुओं से ही प्रेम कर, हमें तज कर, तुम गायें चराने जाते हो। एक उत्तम अमृत का मधुर रसप्रवाह (अर्थात् तुम्हारा अधरामृत) मुझ पापिनी के मन के भीतर के एक एक भाग में प्रविष्ट हो कर सताता है और तुम्हारे एक अरुण बिंबाधर के कपटी विनम्र वचनों का स्मरण करती हैं तो सदैव हमारी आत्मा दग्ध हो जाती है ।। 4

3100 तुम्हारे विनम्र (आश्वासप्रद) वचन स्मरण करते सब समय हमारी आत्मा दग्ध हो जाती है। हाय ! दिवस भर गायें चराने निकल के गए कान्ह ! (मुकुल की अवस्था से) छूट कर विकसित मल्लिका पुष्प की सुगंध ले कर पवन चलने लगा। अत्यधिक मद से युक्त (हस्ती सदृश) संध्या आ गई। हाय ! (कौस्तुभ) मणि से शोभित वक्ष की जुही पुष्पों की सुगंध से मेरे पीन पयोधर सुरभित कर के और अपना अधरामृत पिला कर भूषणालंकृत अपना कमलहस्त हम दासियों के सिर पर रखो ।। 5

3101 सागर सदृश सुंदर कान्ह ! हम दासियों के सिर सुशोभित करो अपने दर्शनीय चरण से। उसको पकड़ कर मध्य में (तुम्हें रोकती) ललनाएँ बहुत हैं। उसे रहने दो। हम तो अपने स्त्रीत्व को ले कर (दुःख) सह नहीं सकतीं। हमारे तीक्ष्ण विशाल नयन-युगों का अश्रुप्रवाह रुकता नहीं। मन भी वश में नहीं रहता। अतः गो-समूह चराने के लिए तुम्हारा निर्गमन हमें दुःखद है। हमारी आत्मा अग्नि समीपस्थ मोम के जैसे गल कर दग्ध हो जाती है ।। 6

3102. वेम् ऍमदु उयिर् अळल् मॆंळुहिल् उक्कु
वॆंळ् वळै मेकलै कळन्रु वीळ
तू मलर्-क् कण् इणै मुत्तम् शोर-त्
तुणै मुलै पयन्दु ऍन तोळ्हळ् वाड
मा मणि वण्ण! उन् शॆंम् कमल
वण्ण मॆंन् मलर् अडि नोव नो पोय्
आ महिळ्न्दु उहन्दु अवै मेय्क्किन्रु उन्नोडु
अशुर्हळ् तलै-प् पॆंय्यल् ऍवन् कॊंल् आङ्गे? 7

3103. 'अशुर्हळ् तलै-प् पॆंय्यल् ऍवन् कॊंल् आङ्गु?'
ऍन्रु आळुम् ऍन् आर् उयिर् आन् पिन् पोहेल्
कशिकैयुम् वेट्कैयुम् उळ् कलन्दु
कलवियुम् नलियुम् ऍन् कै कळियेल
वशि शॆंय् उन् तामरै-क् कण्णुम् वायुम्
कैहळुम् पीदह उडैयुम् काट्टि
ऒंशि शॆंय् नुण् इडै इळ आय्च्चियर् नी
उहक्कु नल्लवरो डुम् उळि तराये॥ 8

3104. उहक्कु नल्लवरोड्म् उळि तन्दु उन् तन्
तिरु उळ्ळम् इडर् कॆंडुम तॉरुम् नाङ्गळ्
वियक्क इनबु उरुदुम् ऍम् पॆंण्मै आररोम्
ऍम् पॆंरुमान्! पशु मेय्क्क-प् पोहेल्
मिह-प् पल अशुर्हळ् वेण्डु उरुवम्
कॊंण्डु निन्रु उळितवर् कञ्जन् एव
अहप्पडिल् अवरॊंडुम् निन्नॊंडु आङ्गे
अवत्तङ्गळ् विळैयुम् ऍन् शॊंल् कॊंळ् अन्दो! 9

3102 हमारी आत्मा अग्निसमीपस्थ मोम के समान गल कर दग्ध हो जाती है। महामणिवर्ण! जिससे धवल वलय और मेखला खिसक कर गिर पड़ें, निर्मल कमल नयनयुग से आंसू बहें, स्तनयुग पीले पड़ें, मेरे भुज क्लांत हों, तुम्हारे रक्ताबुजवर्ण पुष्पहास सुकुमार चरण व्यथित हों, इस प्रकार जा कर, हर्ष के साथ गायों को सप्रेम चराते समय यदि वहां असुर टूट पड़ते हैं तो (उसका फल) क्या हो! 7

3103 "यदि असुर टूट पड़ते हैं तो क्या हो वहां!" —इस का स्मरण करते ही मेरे प्रिय प्राण (दुःखसागर में) मग्न हो जाते हैं। गायों के पीछे जाओ मत। स्नेह और अभिनिवेश और संयोग हृदय में मिल कर पीड़ा देते हैं। मेरे हाथ से बाहर मत जाओ। वशीकरणसमर्थ अपने सरसिजनयन और अधर, हस्त और पीतांबर दिखा के, भंगुर सूक्ष्ममध्या अपनी प्रेमपात्र सुशील बाल गोपकन्याओं के साथ (हमारे सामने ही) संचार करो॥ 8

3104 अभिमत प्रेमिकाओं के साथ स्वैर संचार कर के तुम्हारे हृदय के दुःखों के दूर होते देख कर, हम विस्मयनीय प्रकार से प्रहृष्ट होंगी। हमारा स्त्रीस्वभाव इसके विरुद्ध हो तो हम उसे चाहतीं नहीं। हमारे प्रभु! गाय चराने मत जाओ। बहुत ही अनेक असुर, कंस से प्रेरित हो कर, इच्छा के अनुसार रूप ले कर सदा संचार करते रहेंगे। यदि उनके हाथ में पड़ो तो वहां तुम और वे दोनों को अवद्य (अर्थात् अनभीष्ट अनर्थ) फल निकलेंगे। मेरे वचन मान लो, हाय! 9

3105. अवत्तङ्गळ् विळैयुम् ऍन् शॊल् कॊळ् अन्दो !
अशुरर्हळ् वन् कैयर् कञ्जन् एव-न्
तवत्तवर् मरुह निन्ऱु उऴि तरुवर्
तनिमैयुम् पॆरिदु उनक्कु इरामनैयुम्
उवर्त्तलै उडन् तिरिहिलैयुम ऍन्ऱु ऍन्ऱु
ऊऴ् उर ऍन्नुडै आवि वेम् आल् !
दिवत्तिलुम् पशु निरै मेय्प्पु उवत्ति
शॆम् कनि वाय् ऍङ्गळ् आयर् देवे ! 10

3106. शॆम् कनि वाय् ऍङ्गळ् आयर् देवु अत्-
तिरुवडि तिरु अडि मेल् पॊरुनल्
शङ्गु अणि तुऱैवन् वण् तॆन् कुरुहूर्
वण् शडकोपन् शॊल् आयिरत्तुळ्
मङ्गैयर् आय्च्चियर् आयन्द मालै
अवनोडुम् पिरिवदर्कु इरङ्गि तैयल्
अङ्गु अवन् पशु निरै मेय्प्पु ऒऴिप्पान्
उरैत्तन इवैयुम् पत्तु अवर्रिन् शार्वे ॥ 11

3105 अवश्य फल निकलेंगे। मेरे वचन मान लो, हाय! प्रवालहस्त असुर कंस से प्रेरित हो कर तपस्वियो का मन दुखाते हुए संचार करते रहते हैं। तुम्हें तो एकाकी रहना ही बहुत अभीष्ट है। बलराम की संगति भी तुम चाहते नहीं (अतः उसके सामने मनमाना काम तुम नहीं कर सकते।) उसके साथ संचार भी नहीं करते। यह सोच सोच कर मेरी आत्मा भीतर ही भीतर दग्ध होती रहती है। हाय! द्युलोक में (अर्थात् परमधाम में) भी गोचारण ही तुम्हें अभीष्ट है। अरुण बिंबफल अधर हमारे गोपाल देव! 10

3106 अरुण पक्व बिंब फलाधर हमारे गोपाल देव सर्वेश्वर के श्रीचरण पर शंखों से अलंकृत ताम्रपर्णी के तोरवर्ती सुंदर कुरुहूर के उदार शठकोप के रचित सहस्रगीति में यह दशक वही फल देगा जो गोपियों को प्राप्त हुआ (अर्थात् भगवत्संश्लेष)। —यह दशक जिस में कान्ह के विरह से व्याकुल हो कर भावुक गोपियो की भावमाला है और जिस में एक युवती ने वहां गोसमूहचारण से उसे रोकने के लिए कहा था—यह सब वर्णित हैं॥ 11

X. iv. शार्वे तव नॆ॑रि

3107. शार्वे तव नॆ॑रिक्कु-त् तामोदरन् ताळ्हळ्
कार् मेह वण्णन कमल नयनत्तन्
नीर् वानम् मण् ए॑रि काल् आय निन्र नेमियान्
पेर् वानवहॅळ् पिदर्रुम् पॆ॑रुमैयने ॥ 1

3108. पॆ॑रुमैयने वानत्तु इमैयोक्कुम् काण्डर्कु
अरुमैयने आहत्तु अणैयादाक्कुं ए॑न्रुम्
तिरु मॆ॑य् उरैहिन्र शॆ॑म् कण्माल् नाळुम्
इरुमै विनै कडिन्दु इङ्गु ए॑न्नै आळ्हिन्राने ॥ 2

3109. आळ्हिन्रान् आळियान् आराल् कुरैवु उडैयम् ?
मीळ्हिन्र्दु इल्लै पिरवि-त् तुयर् कडिन्दोम्
वाळ् कॆ॑ण्डै ऑ॑ण् कण् मड-प् पिन्नै तन् केळ्वन्
ताळ् कण्डु कॊ॑ण्डु ए॑न् तलै मेल् पुनैन्देने ॥ 3

3110. तलै मेल् पुनैन्देन् चरणङ्गळ् आलिन्
इलै मेल् तुयिन्रान् इमैयोर् वणङ्ग
मलै मेल् तान् निन्रु ए॑न् मनत्तुळ् इरुन्दानै
निलै पेर्कल् आहामै निच्चित्तु इरुन्देने ॥ 4

X. iv. शार्वे तव-नेरिक्कु

(प्राप्य हैं तपो मार्ग के)

[प्रथम शतक के प्रथम दशक में प्राप्य भगवत्स्वरूप को कह कर, द्वितीय दशक में उस प्राप्य का उपाय भक्तियोग कह कर तृतीय दशक मे कहा कि वह भगवान् भक्ति द्वारा सुलभ है। तदनंतर चतुर्थ दशक से ले कर पिछले दशक तक (X. iii) भगवान् के मंगल गुणों का अनुभव विविध प्रकार से वर्णित हुआ। अगले दशक में उस भक्तियोग वर्णन का उपसंहार किया जाता है। कहते हैं कि भगवान् भक्ति-सुलभ है।]

3107 प्राप्य है तपो मार्ग के दामोदर के चरण-द्वन्द्व – दामोदर जो नीलमेघवर्ण और कमलनयन है, जो जल और आकाश, भूमि और अग्नि और वायु रूप में विद्यमान नेमिधर है, तथा जिसकी महिमा का उत्कृष्ट नित्यसूरिगण भी कीर्तन करते रहते हैं ॥ 1

3108 जो ऊर्ध्वलोकवासी (ब्रह्मादि) देवों से भी दुर्ज्ञेय महिमवंत है, जो हृदय में सप्रेम स्थापित नहीं करते ऐसे लोगों को दर्शन होना दुर्लभ है, जो सर्वकाल में लक्ष्मी-समालिंगित वक्ष से युक्त अरुणनयन, श्रीमन्नारायण है, वह नित्य (पुण्य-पाप रूप) द्विविध कर्मों को दूर कर के यहां मेरी सेवा स्वीकार करता है ॥ 2

3109 चक्रधर भगवान् हमारी रक्षा करता है। हमें किस की कमी है? हमें पुनरावृत्ति नहीं। जन्म का दुःख हमने दूर कर दिया। भास्वर मत्स्य सम समुज्ज्वल नयना गुणपूर्ण नप्पिन्नै के वल्लभ के चरणों का दर्शन कर के मैंने अपने सिर पर धर लिया ॥ 3

3110 (अपने) सिर पर (उसके) चरण धर लिए। वटपत्रशायी (भगवान्) देवों के वन्दना करने के अनुकूल (वेंकट) गिरि पर खड़े हो कर (तदनंतर) मेरे मन में विराजित हुए। मैंने निश्चय कर लिया कि उस स्थिति से वह (किसी से) हटाया नहीं जा सकता ॥ 4

3111. निच्चित्तु इरुन्देन् एॅन् नेॅञ्जम् कळियामे
कै-च् चक्करत्तु अण्णल् कळ्वम् पेॅरिदु उडैयन्
मेच्च-प् पडान् पिरक्कु मेॅय् पोलुम् पोय् वल्लन्
नच्च-प पडुम् नमक्कु नाहत्तु अणैयाने ॥ 5

3112. नाहत्तु अणैयानै नाळ् तोरुम् ञानत्ताल्
आहत्तु अणैप्पार्क्कु अरुळ् शेॅय्युम् अम्मानै
माहत्तु इळ मदियम् शेरुम् शडैयानै
पाहत्तु वैत्तान् तन् पादम् पणिन्देने ॥ 6

3113. पणि नेॅञ्जे ! नाळुम् परम परम्-परनै
पिणि ओॅन्रुम् शारा पिरवि केॅडुत्तु आळुम्
मणि निन्र शोदि मदुशूदन् एॅन् अम्मान्
अणि निन्र शॅम् पोॅन् अडल् आळियाने ॥ 7

3114. आळियान् आळि अमरर्क्कुम् अप्पालान्
ऊळियान् ऊळि पडैत्तान् निरै मेय्त्तान्
पाळि अम् तोळाल् वरै एॅडुत्तान् पादङ्गळ्
वाळि एॅन् नेॅञ्जे ! मरवादु वाळ् कण्डाय् 8

3111 मैने निश्चय कर लिया कि वह मेरे हृदय मे बिछुड़ नहीं जाएगा। चक्रपाणि भगवान् की कपटता अत्यधिक होती है। दूसरों की स्तुति का विषय हो कर नही रहता। (अर्थात् दुष्प्राप है।) (अनाश्रितों के विषय में) सच्चा व्यवहार करनेवाले के समान रह कर, असत्य व्यवहार करने मे कुशल है। सर्पशायी प्रभु हमारे प्रेम का विषय हो कर हो रहता है॥ 5

3112 जो सर्पशायी है, (भक्तिरूप) ज्ञान से नित्य अपने मन में रखनेवालों पर जो कृपा करता स्वामी है, महाकाशस्थ बालचंद्र से समाश्रित जटाधर (रुद्र) को अपने (शरीर के) एक भाग मे जो रखता है, उसके पादो की मैने प्रणति को॥ 6

3113 जो नील रत्नगन शोभासम ज्योति से युक्त है जो मधुसूदन है, जो मेरे स्वामो है, जो आभरणसम रहता उत्तम स्वर्ण सदृश और युद्धोन्मुख चक्र धरता है, वह हमारा जन्म दूर कर रक्षा करता है। कोई भी (सांसारिक) व्याधि पास नही फटकेगी। जो सर्वश्रेष्ठ है, तथा जो परात्पर है (अर्थात् ब्रह्मादिको से भी उत्कृष्ट है), नित्य उसकी प्रणति करो, मानस! 7

3114 जो चक्रधर है, जो सागर सदृश (गभीर स्वभाव) है, जो अमरों के भी ऊपर स्थित है जो प्रलयकारी है, तथा (सृष्टिकाल मे) सब का स्रष्टा है, जिसने गोसमूह चराया और अपने प्रबल और सुंदर भुज से (गोवर्धन) गिरि उठाया उसको भुलाए बिना जीवित रहो, समझे। मेरे मानस! जीते रहो॥ 8

3115. कण्डेन् कमल मलर्-प् पादम् काण्डलुमे
विण्डे ऑ॑ळिन्द विनै आयिन ऍ॑ल्लाम्
तॊ॑ण्डे शॆ॑य्दु ऍ॑न्रुम् तॊ॑ऴुदु वऴि ऑ॑ऴुह
पण्डे परमन् पणित्त पणि वहैये॥ 9

3116. वहैयाल् मनम् ऑ॑न्रि मादवनै नाळुम्
पुहैयाल् विळक्काल् पुद् मलराल् नीराल्
तिशै तोरु अमरर्हळ् शॆ॑न्रु इरैञ्ज निन्र
तहैयान् शरणम् तमर्हट्कु ओर् पर्रे॥ 10

3117. पर्रु ऍ॑न्रु पर्रि-प् परम परम् परनै
म॰ तिण् तोळ् मालै वऴुदि वळ नाडन्
शॊ॑ल् तॊ॑डै अन्तादि ओर् आयिरत्तुळ् इप्-पत्तुम्
कर्रोर्क्कु ओर् पर्रु आहुम् कण्णन् कऴल् इणैये॥ 11

3115 सेवा कर के नित्य प्रणति कर के समीचीन मार्ग से चलने के लिए पूर्वकाल में परम (श्रीकृष्ण) के गीता में प्रोक्त वचन के अनुसार उस के कमल पुष्प पाद का दर्शन किया। दर्शन करते ही जो पाप कहलाते हैं, सब छूट कर नष्ट हो गए॥ 9

3116 शास्त्रोक्त प्रकार से मन लगा कर माधव की सेवा मे प्रतिदिन धूप मे और दीप से अभिनव पुष्प से और जल से सब दिशाओ में देव वर्ग आ कर जिसकी आराधना करते है, तथा जो उत्तम स्वभाव वाला है, उस श्रीकृष्ण का चरण हो उसके भक्तो का अद्वितीय आलबन है॥ 10

3117 जो परम परात्पर है (अर्थात् उत्कृष्ट ब्रह्मादि देवताओ से भी उत्कृष्ट नित्यसूरियों के नायक है) जो मल्लयुद्ध में दृढ़ भुज से युक्त है, उस सर्वेश्वर पर समृद्ध वळुदि वेश में अवतरित शठकोप से कथित मालारूप अन्त्यादि सहस्र में इस दशक का अभ्यास जो करते हैं, उन्हें कान्ह का चरणयुगल अद्वितीय प्राप्य होगा॥ 11

X. v. कण्णन् कळल् इणै

3118. कण्णन् कळल् इणै
नण्णुम् मनम् उडैयीर् !
ऍण्णुम् तिरु नामम्
तिण्णम् नारणमे ॥ 1

3119. नारणन् ऍम्मान्
पार् अणङ्गु आळन्
वारणम् तॊलैत्त
कारणन ताने ॥ 2

3120. ताने उलहु ऍल्लाम्
ताने पडैत्तु इडन्दु
ताने उण्डु उमिळ्न्दु
ताने आळ्वाने ॥ 3

3121. आळ्वान् आळि नीर्
कॊळ् वाय् अरवु अणैयान्
ताळ् वाय् मलर् इट्टु
नाळ् वाय नाडीरे ॥ 4

X. v. कण्णन् कळल्-इणै

(कान्ह के चरण युगल)

[भक्ति योग उपदेश का उपसंहार करते है ।]

3118 कान्ह के चरण युगल प्राप्त करने के इच्छुक मन से युक्त सज्जनो! स्मर्तव्य शुभनाम नारायण है। (प्राप्ति) निश्चित है ।। 1

3119 नारायण मेरा स्वामी है और भूमि देवी का नाथ। वही (कुवलयापीड़ नामक) हस्ति हन्ता है तथा (जगत् का) कारण है ।। 2

3120 (नारायण शब्दवाच्य वही सब लोक है, वही जगत् का स्रष्टा और (समुद्र से भूमि का) उद्धारक है। वही उसको निगल के उगलता है। वही उसका नियन्ता है ।। 3

3121 जो जगन्नियंता है, और जो सागर जल पर भाकर मुख सर्पशयन पर शयित है, उसके चरणों पर पुष्प समर्पित कर के दिन दिन उसका आश्रयण करो ।। 4

3122. नाडीर् नाळ् तोरुम्
वाडा मलर् कॉण्डु
पाडोर् अवन् नामम्
वीडे पॅरल् आमे ॥ 5

3123. मेयान् वेङ्कडम्
काया मलर् वण्णन्
पेयार् मुलै उण्ड
वायान् मादवने ॥ 6

3124. मादवन् ऍन्ऱु ऍन्ऱु
ओद वल्लीरेल्
तीदु ऑन्ऱुम् अडैया
एदम् शारावे ॥ 7

3125. शारा एदङ्गळ्
नीर् आर् मुहिल् वण्णन्
पेर् आर् ओदुवार्
आरार् अमररे ॥ 8

3122 दिन दिन अम्लान पुष्प ले कर उसका समाश्रयण करो और उसका नाम गाओ। मुक्ति प्राप्त होगी ।। 5

3123 वही वेंकट गिरि में सानंद वर्तमान है, अतसीपुष्पसवर्ण है, पिशाचिनी का स्तन पीते मुख से संयुक्त है तथा माधव है ।। 6

3124 माधव कह कह कर यदि नाम के अध्ययन में कुशल हो तो (पूर्व-संचित) सभी पाप नष्ट हो जाएंगे। (भविष्य का) कोई अनिष्ट पास नहीं फटकेगा ।। 7

3125 अनिष्ट पास नहीं फटकेंगे। जैल से पूर्ण जलदसदृशवर्ण के नामों का संकीर्तन जो जो करते है वे वे अमर ही हैं ।। 8

3126. अमरक्कु॑ अरियानै
तमर्हट्कु ए॑ळियानै
अमर-त् तो॑ळुवार्हट्कु
अमरा विनैहळे ॥ 9

3127. विनै वल् इरुळ् ए॑न्नम्
मुनैहळ् वे॑रुवि-प् पोम्
शुनै नल् मलर् इट्टु
निनैमिन् नेडियानै ॥ 10

3128. ने॑डियान् अरुळ् शूडुम्
पडियान शडकोपन्
नो॑डि उयिरत्तु इप्-पत्तु
अडियाक्कु॑ अरुळ् पेरे ॥ 11

3126 अमरों के दुष्प्राप तथा भक्तों के सुलभ (प्रभु) का अनन्यभाव से प्रणाम करते लोगों के पाप टिकेंगे नहीं॥ 9

3127 भगवान को उत्तम पुष्प समर्पित कर के सर्वेश्वर का स्मरण करो। पाप और घोर अंधकार (अर्थात् अज्ञान) रूप विरोधी त्रस्त हो कर भाग जाएंगे॥ 10

3128 सर्वेश्वर की कृपा को शिरोधार्य करने के स्वभाव से युक्त शठकोप के कथित सहस्रगीति में यह दशक भक्तों को उसकी कृपा सिद्ध कर देता है॥ 11

X. vi. अरुळ् पॆरुवार्

3129. अरुळ पॆरुवार् अडियार् तम्
अडियनेऱ्कु आळियान्
अरुळ् तरुवान् अमैहिन्ऱान्
अदु नमदु विदि वहैये
इरुळ् तरु मा ञालत्तुळ्
इनि-प् पिरवि यान् वेण्डेन्
मरुळ् ऒऴि नी मड नॆञ्जे !
वाट्टाऱ्ऱान् अडि वणङ्गे ॥ 1

3130. वाट्टाऱ्ऱान् अडि वणङ्गि
मा ञाल-प् पिऱप्पु अऱुप्पान्
केट्टाये मड नॆञ्जे !
केशवन् ऎम् पॆरुमानै
पाट्टु आय पल पाडि-प्
पऴ विनैहळ् पऱ्ऱु अऱुत्तु
नाट्टारोडु इयलवु ऒऴिन्दु
नारणनै नण्णिनमे ॥ 2

3131. नण्णिनम् नारायणनै
नामङ्गळ् पल शॊल्लि
मण् उलहिल् वळम् मिक्क
वाट्टाऱ्ऱान् वन्दु इन्ऱु
विण् उलहम् तरुवान् आय्
विरैहिन्ऱान् विदि वहैये
ऎण्णिन आरु आहा
इक्-करुमङ्गळ् ऎन् नॆञ्जे ! 3

X. vi. अरुळ् पेरुवार्

(कृपा को प्राप्त करते)

[तिरुवाट्टारु क्षेत्र—केरल प्रांत]

3129 कृपा प्राप्त करते (अर्थात् कृपापात्र) दासों का दास होते मुझ पर कृपा प्रदान करने में तत्पर है चक्रधर (प्रभु)। वह भी हमारी विधि के अनुसार। (अर्थात् हम जो आज्ञा देते हैं उसके अनुसार)। अज्ञान प्रद इस महा पृथिवी में एतदनन्तर मै जन्म लेना नहीं चाहता। भव्य मानस ! तुम अपना अज्ञान तज दो। वाट्टारु-क्षेत्र के भगवान् के चरणों की प्रणति करो ।।

[भव्य मानस ! तुम अपना अज्ञान तज दो—यहां पर पूर्वाचार्यों के व्याख्यान की रीति विलक्षण है। वह यो है—मेरे मन ! अब तक मैं तुम से कह रहा था कि यदि भगवद्गुणानुभव और भगवत्सेवा ही परमपुरुषार्थ है और यदि वह यहीं प्राप्त हो तो इसे छोड़ कर परमधाम जाने को आवश्यकता क्या है। अतः हम यहीं क्षेत्रों मे जहां अर्चारूपी भगवान् विराजमान है वहो जाएगे और आनंदानुभव करेंगे। तुम भी उसे मान कर मेरे साथ चल रहे थे। परंतु अब मुझे विदित हुआ कि वह अज्ञान है। अतः उसे तजो। भगवान् हमे परमधाम ले जा कर वहां आनंद देने मे तत्पर है। ऐसा करने के लिए हमारी आज्ञा की प्रतीक्षा करता रहता है। हम हां कह कर उसके साथ चलेंगे। क्यों कि अत मे समार अज्ञानावह है। अतः हम उसके कहे अनुसार करेंगे।

वाट्टारु क्षेत्र के भगवान् के चरणो की प्रणति करो—हमें ले जाने के लिए तिरुवाट्टारु क्षेत्र में हमारी प्रतीक्षा करते हुए वह खड़ा है। उसकी प्रणति करो (अर्थात् उससे भिन्नाभिप्राय न हो कर सहमत हो जाओ जिससे उसकी इच्छा पूरी हो और हमें भी निरतिशयानंद की प्राप्ति हो ।।] 1

3130 महापृथिवी में जन्म दूर करने के लिए वाट्टारु के भगवान् के चरण की प्रणति कर के, हमारे स्वामी केशव के (गुणो के) विविध गान गा कर, हमने अनादि पापो का वासना सहित काट डाला। (विषयासक्त) सासारिक जनों का सहवास तज कर, नारायण का सेवा मे आ गए। सुन लिया मेरे भव्य मानस ! 2

3131 (उनके) अनेक नामो का संकीर्तन कर के हम श्रीमन्नारायण की सेवा में आ पहुंचे। भूलोक में अति समृद्धिसपन्न वाट्टारु (क्षेत्र) के भगवान् आ कर अब हमें परमधाम प्रदान करने को त्वरा के साथ विद्यमान है। वह भी हमारी विधि के अनुसार (अर्थात् हमारी आज्ञानुसार)। सर्वेश्वर के य कर्म (अर्थात् चेष्टाएं) जितना हमारा मनोरथ था उतना मात्र नहीं। (अचिंतित प्रकार मे अत्यधिक कृपा करता है।) (समझ लो), मेरे मानस ! 3

3132. ऍन् नॆञ्ञत्तुळ् इरुन्दु इङ्गु
इरुम् तमिळ् नूल् इवै मॊऴिन्दु
वन्-नॆञ्ञत्तु इरणियनै
मार्वु इडन्द वाट्टाऱ्ऱान्
मन् अञ्ज-प् पारदत्तु-प्
पाण्डवर्क्कु आय्-प् पडै तॊट्टान्
नल् नॆञ्जे! नम् पॆरुमान्
नमक्कु अरुळ् तान् शॆय्वाने॥ 4

3133. वान् एर वऴि तन्द
वाट्टाऱ्ऱान् पणि वहैये
नान् एर-प् पॆरुहिन्ऱेन्
नरकत्तै नहु नॆञ्जे!
तेन् एरु मलर्-त् तुळवम्
तिहऴ् पादन् शॆऴुम् परवै
तान् एरि-त् तिरिवान
ताळ् इणै ऎन् तलै मेले॥ 5

3134. तलै मेल ताळ् इणैहळ्
तामरै-क् कण् ऎन् अम्मान्
निलै पेरान् ऎन् नॆञ्ञत्तु
ऎप्पॊऴुदुम् ऎम् पॆरुमान्
मलै माडत्तु अरवणै मेल्
वाट्टाऱ्ऱान् मद मिक्क
कॊलै यानै मरुप्पु ऒशित्तान्
कुरै कऴल्हळ् कुरुहिनमे॥ 6

3132 अनुकूल मानस ! मेरे हृदय के भीतर विराजमान हो कर, यहां उत्कृष्ट तमिल लक्षण ग्रन्थो के पथ प्रदर्शक जैसे ये पद्य जिसने कथन किये, कठिनहृदय हिरण्य के वक्ष का विदारण किया, सब राजसमूह को भारत युद्ध में भयत्रस्त करते हुए जो पाडवों का हो कर तथा आयुधस्पर्शी हो कर रहा, वाट्टार में वर्तमान वह हमारा स्वामी हम पर कृपा करेगा ही ।। 4

3133 परमधाम चढ़ने का (अर्चिरादि) मार्ग देते वाट्टार (क्षेत्र) मे वर्तमान प्रभु के कहे अनुसार मै चढ़ने का भाग्यवान् हो गया। मानस! नरक (तुल्य ससार) का उपहास करो, मानस! मधुस्यंदि पुष्पों से युक्त तुलसी से भासमान पादो से जो समन्वित है तथा उत्साही (गरुड़) विहंग पर चढ़ कर घूमता प्रभु है, उसके चरणयुग मेरे सिर पर विद्यमान है। 5

3134 मेरे सिर पर है चरणयुगल। कमलनयन मेरा स्वामी मेरे हृदय से किसी भी समय नहीं छूटेगा। पर्वत तुल्य उन्नत प्रासादों से युक्त वाट्टार में जो सर्पशय्या पर शयन है, जिसने अतीव मदमत्त हननशील हस्ती (कुवलयापीड) का दांत तोड डाला, अपने उस भगवान् के कटकध्वनि से युक्त चरणों के पास हम आ चुके ।। 6

3135. कुरै कळल्हळ् कुरुहिनम् नम्
गोविन्दन् कुडि कॊण्डान्
तिरै कुळवु कडल् पुडै शूळ्
तॆन् नाट्ट-त् तिलदम् अन्न
वरै कुळुवुम् मणि माड
वाट्टार्रान् मलर् अडि मेल्
विरै कुळुवुम् नरुम् तुळवम्
मॆय्-न् निन्रु कमळमे ॥ 7

3136. मॆय्-न् निन्रु कमळ् तुळव
विरै एरु तिरु मुडियन्
कै-न् निन्र शक्करत्तन्
करुदुम् इडम् पॊरुदु पुनल्
मै-न् निन्र वरै पोलुम्
तिरु उरुव वाट्टार्रार्कु
ऎन ननरि शॆय्देना
ऎन् नॆञ्जल् तिहळ्वदुवे ? 8

3137. तिहळ्हिन्र तिरु मार्बिल्
तिरु मङ्गै तन्नोडुम्
तिहळ्हिन्र तिरु मालार्
शेर्विडम् तण् वट्टारु
पुहळ्हिन्र पुळ् ऊर्दि
पोर् अरक्कर् कुलम् कॆडुत्तान्
इहळ्वु इन्रि ऎन् नॆञ्जत्तु
ऎप्पॊळुदुम् पिरियाने ॥ 9

3135 ध्वनियुक्त चरणों के पास गए। गोविंद ने (मेरे हृदय में) घर कर लिया। तरंग-सवार से युक्त सागर से जो आसपास परिवृत है, जो दक्षिण देश के तिलक-तुल्य है तथा पर्वत समूह तुल्य मणिमय प्रासादो से युक्त है, उस वाट्टारु के भगवान् के कमल चरण पर स्थित सर्वगंधसमन्वित सुरभित तुलसी का सौरभ मेरे शरीर पर रह कर सुख देता है॥ 7

3136 शरीर भर पर सौरभ को फैलाती तुलसी की सुगंध से आक्रांत श्रीकिरीट से जो भूषित है, वांछित स्थान पर जा कर युद्ध करने के अनंतर पुनः आकर जिसके हस्त में चक्र स्थित होता है, जो सागर जल, तथा अंजन मय उन्नत गिरि सदृश वर्ण से समन्वित है, तथा जो वाट्टारु (क्षेत्र) में विद्यमान है, उसके मेरे हृदय में भासमान होने के लिए मैंने कौन सा अनुकूल काम किया है? 8

3137 कान्तियुक्त श्रीवक्ष में महालक्ष्मी के साथ भासमान श्रीमन् नारायण के समाश्रित स्थान तापहर वाट्टारु क्षेत्र है। नित्य कीर्ति से संपन्न विहग (गरुड़) उसका वाहन है। उसने भिड़ते राक्षस-कुल का नाश कर दिया। निरादर किए बिना वह मेरे हृदय में सदा (रहता है और कभी) अलग नहीं होता॥ 9

3138. पिरियादु आट् चॆय् ऎन्रु
पिरप्पु अरुत्तान् अर-क् कॊण्डान्
अरि आहि इरणियनै
आहम् कीण्डान् अन्रु
पॆरियाक्कुं आट्पट्टक् काल्
पॆराद पयन् पॆरुम् आरु
वरि वाळ् वाय् अरवु अणै मेल्
वाट्टार्रान् काट्टिननै ॥ 10

3139. काट्टि-त् तन् कनै कळलहळ्
कडु नरकम् पुहल् ऒळित्त
वाट्टार्रु ऎम् पॆरुमानै
वळम् कुरुहूर्-च् चडकोपन्
पाट्टाय तमिळ् मालै
आयिरत्तुळ् इप्-पत्तुम्
केट्ट आरार् वानवर्हळ्
शॆविक्कु इनिय शॆम् शॊल्ले । 11

3138 "छूटे बिना निरंतर दास्य करते रहो" कह कर और जन्म-संबंध काट कर आत्यंतिक दास की भांति मुझे स्वीकार लिया (आज); पुरा काल में (नर) हरि हो कर हिरण्य का शरीर विदीर्ण कर दिया। महापुरुषों के दास बन जाएं तो दुर्लभ फल हस्तगत होता है—यह तत्त्व वाट्टारु के स्वामी ने दिखा दिया जो रेखांकित समुज्ज्वल मुखविशिष्ट सर्पशयन पर शायित है। 10

3139 (भूषणों की) ध्वनि से युक्त अपने चरण दिखा कर, घोर (संसार रूप) नरक में प्रवेश के निरोधकारी वाट्टारु के वासी परमपुरुष पर सुंदर कुरुहूर के शठकोप के रचित गीतिरूप तमिल माला-सहस्र में श्रवणमधुर साधुशब्दमय यह दशक सुन कर नित्यसूरिगण तृप्त नहीं होते ॥ 11

X. vii. शॆम् शॊल् कविहाळ्'

3140. शॆम् शॊल् कविहाळ्' उयिर् कात्तु आट
चॆय्मिन् तिरु मालिरुम् शोलै
वञ्ञ-क् कळ्वन् मा मायन्
माय-क् कवियाय् वन्दु ऎन्
नॆञ्जुम् उयिरुम् उळ् कलन्दु
निन्रार् अरिया वण्णम् ऎन्
नॆञ्जुम् उयिरुम् अवै उण्डु
ताने आहि निरन्दाने ॥ 1

3141. ताने आहि निरैन्दु ऎल्ला
उलहुम् उयिरुम् ताने आय्
ताने यान् ऎन्बान् आहि-त्
तेने पाले कन्नले
अमुदे तिरु मालिरुम् शोलै
कोने आहि निन्रु ऒळिन्दान्
ऎन्नै मुर्रुम् उयिर् उण्ड 2

3142. ऎन्नै मुर्रुम् उयिर् उण्डु ऎन्
माय आक्कै इदनुळ् पुक्कु
ऎन्नै मुर्रुम् ताने आय्
निन्र माय अम्मान् शेर्
तॆन्नन् तिरु मालिरुम् शोलै-त्
तिशै कै कूप्पि-च् चेन्द यान्
इन्नः पोवेने कॊलो!
ऎन् कोल् अम्मान् तिरु अरुळे? 3

X. ii. शेझोल् कविकाळ !

(उत्तम शब्द कविगण !)

[तिरुमालिरुञ्जोलै क्षेत्र]

3140 उत्तम शब्दो से युक्त (कविता करते) कविगणो ! (भगवान् के हाथ मे) अपनी आत्मा (और आत्मीयो) को बचा कर दास्यवृत्ति करो। तिरु-माल्-इरुञ्जोलै का वंचक चोर महामायी, मायी कवि रूप में आ कर मेरा हृदय और आत्मा दोनो के भीतर एक हो कर ठहर गया। मेरे जान लेने का अवसर दिए बिना मेरे हृदय और आत्मा को ग्रहण कर के सब स्वयं आप ही हो कर भर गया ॥ (अर्थात् मनोरथपूर्ण सा रहा) ॥ 1

3141 पूर्णरूप से मेरी आत्मा को ग्रहण कर के (अर्थात् भोग कर के) स्वयं आप ही हो कर परिपूर्ण हुआ। सब लोक और वहाँ के मनुष्य सब आप ही हो गया। अहम् भी (अर्थात् अहंशब्द वाच्य मेरी आत्मा भी) स्वयं वह हुआ। (इस प्रकार मुझ से एक हो कर रहने से, मेरा किया स्तोत्र उस का किया हो गया अतः) अपनी स्तुति स्वयं आप ही ने की। (इससे उसे जो आनंद हुआ उसे मुझे दिखाने से) मेरे लिए वह मधु और क्षीर, इक्षुरस और अमृत तथा तिरु-माल्-इरुञ्जोलै का स्वामी हो कर रह गया ॥ (अर्थात् वही स्तुति कर्ता और स्तुति विषय, भोक्ता और भोग्य सब हो गया ॥) 2

• 3142 पूर्णतया मेरी आत्मा का अनुभव कर के मेरे माया-शरीर (अर्थात् प्राकृतिक अथवा हेय शरीर) के भीतर प्रविष्ट हो कर, स्वयं आप (अहं शब्दवाच्य) में हो कर अवस्थित मायी स्वामी से (अर्थात् आश्चर्यमय गुण और चेष्टायुक्त स्वामी से) समाश्रित दक्खिनी सुंदर तिरु-माल्-इरुञ्जोलै की दिशा के प्रति हाथ जोड़ कर मैंने उसको प्राप्त कर लिया। एतदनंतर क्या मै और कहीं जाऊं ? (इस मे बढ़ कर क्या कोई गन्तव्य स्थान है ?) मेरे स्वामी की कृपा की अवधि भी है क्या ? 3

3143. ए॑न् को॑ल् अम्मान् तिरु अरुळ्हळ् ?
उलहुम् उयिरुम् ताने आय्
नन्गु ए॑न् उडलम् कै विडान्
ञालत्तूडे नडन्दु उळक्कि
तॆ॑न् को॑ळ् तिशैक्कु-त् तिलदम् आय्
निन्र तिरु मालिरुम् शोलै
नङ्गळ् कुन्रम् कै विडान्
नण्णा अशुरर् नलियवे ॥ 4

3144. नण्णा अशुरर् नलिवु ए॑य्द
नल्ल अमरर् पॊ॑लिवु ए॑य्द
ए॑ण्णादनहळ् ए॑ण्णुम् नल्
मुनिवर् इन्बम् तलै शिरप्प
पण् आर् पाडल् इन् कविहळ्
यान् आय्-त् तन्नै-त् तान् पाडि
'तॆ॑न्ना' ए॑न्नुम् ए॑न् अम्मान्
तिरु मालिरुम् शोलैयाने ॥ 5

3145. तिरु मालिरुम् शोलै याने
आहि-च् चे॑ळ् मू उलहुम् तन्
ओरु मा वयिट्रिन् उळ्ळे वैत्तु
ऊळि ऊळि तलै अळिक्कुम्
तिरु माल् ए॑न्नै आळुम् आल्
शिवनुम् पिरमनुम् काणादु
अरु माल् ए॑य्दि अडि परव
अरुळै ईन्द अम्माने ॥ 6

3143 मेरे स्वामी की कृपा की अवधि भी है क्या? लोक और सब प्राणी आप ही हो कर भगवान् मेरा शरीर छोड़ता नहीं यह समझ कर कि वह भोग्य है। पृथिवी भर में चल के घूम कर दक्षिण दिशा के तिलक के समान वर्तमान तिरु-माल्-इरुञ्चोले (नाम का) हमारा पर्वत भी नहीं छोड़ता जिससे प्रतिकूल असुर ध्वस्त हो जाएं ॥ 4

3144 जिससे विमुख असुर ध्वस्त हो जाएं, और सात्त्विक अमर (हर्ष के कारण) कांतियुक्त हो, तथा अन्य मनुष्यों से अचिंतित शुभकामनाएं भगवान् को प्राप्त हो इस प्रकार चिंतन कर सन्मनस्क मुनिगण जिससे आनंद प्राप्त करें, इस प्रकार स्वरपूर्ण गीतियुक्त मधुर कविता समूह द्वारा मैं बन कर आप ही गीत गा कर, उस (सहस्रगीति कविता जनित आनंद से) 'तेन्ना' बोलता रहता है मेरा स्वामी जो तिरु-माल्-इरुञ्चोले का अधिवासी है ॥
[तेनूना बोलता है—स्वयं शठकोप ही हो कर सहस्रगीति रचा। उसकी गीतियां इतनी मधुर हैं कि भगवान् स्वयं उसको गा कर आनंद से तान लगाता रहता है ॥] 5

3145 समृद्ध तीन लोक जो अपने अद्वितीय शक्तियुक्त उदर के भीतर रख कर कल्प कल्प में श्लाघनीय प्रकार से रक्षा करते श्रीमन्नारायण हैं, जिन का साक्षात्कार करने में अशक्त हो कर शिव और ब्रह्मा के पुष्प भक्ति के साथ चरणों की स्तुति करने पर जो उन पर कृपा करते स्वामी हैं, वह तिरु-माल्-इरुञ्चोले का अधिवासी ही बन कर मुझे अपना दास बनाने के व्यामोह के साथ वहां रहता है ॥ 6

3146. 'अरुळै ईं ए॑न् अम्माने !'
एॅन्नुम् मुक्कण् अम्मानुम्
तॆॅरुळ् कॊॅळ् पिरमन् अम्मानुम्
देवर् कोनुम् देवरुम्
इरुळ्हळ् कडियुम् मुनिवरुम्
एत्तुम् अम्मान् तिरुमलै
मरुळ्हळ् कडियुम् मणि मलै
तिरु मालिरुम् शोलै मलैये ॥ 7

3147. तिरु मालिरुम् शोलै मलैये
तिरु-प् पार् कडले एॅन् तलैये
तिरु माल् वैकुन्दमे तण्
तिरु वेङ्गडमे एॅनदु उडले
अरु मा मायत्तु एॅनदु उयिरे
मनमे वाक्के करुममे
ऑरु मा नॉडियुम् पिरियान् एॅन्
ऊळि मुदल्वन् ऑरुवने ॥ 8

3148 ऊळि मुदल्वन् ऑरुवने एॅन्नुम्
ऑरुवन् उलहु एॅल्लाम्
ऊळि तोरुम् तन् उळ्ळे पडैत्तु-क्
कात्तु-क् कॆॅडुत्तु उळ्ळुम्
आळि वण्णन् एॅन् अम्मान्
अम् तण् तिरु मालिरुम् शोलै
वाळि मनमे ! कै विडल्
उडलुम् उयिरुम् मङ्ग ऑट्टे ॥ 9

3146 "कृपा प्रदान करो, मेरे स्वामी!" कह कर त्रिनेत्र भगवान् (रुद्र), ज्ञानसंपन्न भगवान् ब्रह्मा, देवाधिप (इंद्र) और देवतागण, तथा (पुराणाद्युपदेश से अज्ञान रूप) अंधकार दूर करते मुनि जन-सब से संस्तुत सर्वेश्वर का जो मनोहर पर्वत है, अज्ञान जाल का निरास जो मणिपर्वत करता है, वही तिरु माल्-इरुञ्जोलै मलै है॥ (अर्थात् वनाद्रि है॥) 7

3147 तिरु माल्-इरुञ्जोलै मलै, श्रीक्षीरसागर और मेरा उत्तमांग, श्रीमन्नारायण का वैकुंठ, श्रमहर श्रीवेंकट (गिरि) और मेरा शरीर, दुस्तर महामाया (अर्थात् प्रकृति) से संसृष्ट मेरी आत्मा मन, वाक् और कर्म. इन सब से एक क्षण के लव मे भी नही बिछुड़ेगा मेरा अद्वितीय स्वामी जो कल्प आदि कालोपलक्षित सब पदार्थों का प्रथम (कारण) है॥ 8

3148 "कल्प आदि कालोपलक्षित सब पदार्थों का प्रथम (कारण) एक ही है"*इस प्रकार अद्वितीय जो श्रुतिप्रोक्त है सब लोकों की प्रतिकल्प में अपने (संकल्प के) एक देश मे सृष्टि, रक्षा और संहार जो करता है, तथा जो सागरवर्ण मेरा स्वामी है उसके मनोहर और ताप हर तिरु-माल्-इरुञ्जोलै को छोड़ो मत, मेरे मन! चिरजीवी हो जाओ! (हे भगवान्) मेरे शरीर और प्राणों का अंत होने दो। (तुम उन पर इतना प्रेम मत करो)॥ 9

3149. मङ्ग ओ॑ट्ट् उन मा मायै
तिरु मालिरुम् शोलै मेय
नङ्गळ् कोने। याने नी
आहि ए॑न्नै अळित्ताने
पो॑ङ्गु ऐम् पुलनुम् पो॑रि ऐन्दुम्
करुमेन्दिरियम् ऐम् बूदम्
इङ्गु इव् उयिर् एय् पिरकिरुति
मान आङ्गार मनङ्गळे॥ 10

3150. मान् आङ्गारम् मनम् कॅ॑ड
ऐवर् वन् कैयर् मङ्ग
तान् आङ्गारमाय्-प् पुक्कु-त्
तानै तानै आनानै
तेन् आङ्गार-प् पो॑ळिल् कुरुहूर्-च्
चडकोपन् शो॑ल् आयिरत्तुळ्
मान् आङ्गारत्त इवै पत्तुम्
तिरु मालिरुम् शोलै मलैक्के॥ 11

3149 तिरु-माल्-इरुञ्जोलै में सादर वास करते हमारे स्वामी! स्वयं आप मैं बन कर मेरी रक्षा करते भगवान्! (भोग्यता से) वर्धमान पंच (इंद्रिय) विषय, पंच ज्ञानेन्द्रिय, पंच कर्मेन्द्रिय, पंच भूत, यहां (संसार में) इस आत्मा से दृढ़संबद्ध प्रकृति, महान्, अहंकार, मन—ये सब तुम्हारी दुस्तर महामाया हैं, उन का अंत होने दो॥ 10

3150 जिससे महान् अहंकार और मन का अंत हो, तथा प्रबल पंच इंद्रिय क्षीण हों, इस प्रकार स्वयम् अधिक अभिमान के साथ जो (शरीर में) प्रविष्ट हुआ, तथा जो मेरी आत्मा और आत्मीय स्वयं आप ही हुआ, उस पर भ्रमराभिमान से युक्त उपवनों से परिवृत कुरुहूर के शठकोप के रचित सहस्रगीति में उनके महान् अभिमान से समन्वित यह दशक तिरु-माल्-इरुञ्जोलै-मलै विषयक है॥ 11

X. viii. तिरु मालिरुम् शोलै मलै

3151. 'तिरु मालिरुम् शोलै मलै' ए॑न्रेन् ए॑न्न
तिरु माल् वन्दु ए॑न् नॆ॑ञ्ज निरैय-प पुहुन्दान्
कुरु मा मणि उन्दु पुनल् पॊ॑न्निन्-त्तॆ॑न् पाल्
तिरु माल् शॆ॑न्रु शेर्विडम् तॆ॑न् तिरुप्पेरे॥ 1

3152. पेरे उरैहिन्र पिरान् इन्रु वन्दु
पेरेन् ए॑न्रु ए॑न् नॆ॑ञ्ज निरैय-प् पुहुन्दान्
कार् एळ् कडल् एळ् मलै एळ् उलहु उण्डुम्
आरा वयिररानै अडङ्ग-प् पिडित्तेने॥ 2

3153. पिडित्तेन् पिरवि कॆ॑डुत्तेन् पिणि शारेन्
मडित्तेन् मनै वाळक्कैयुळ् निर्पदु ओर् मायैयै
कॊ॑डि-क् कोवुर माडङ्गळ शूळ् तिरु प् पेरान्
अडि-च् चेर्वदु ए॑नक्कु ए॑ळिदु आयिनवारे॥ 3

3154. ए॑ळिदु आयिनवारे ए॑न्रु ए॑न् कण्गळ् कळिप्प
कळिदु आहिय शिन्दैयन् आय्-क् कळिकिन्रेन्
कि॑ऴे ताविय शोलैहळ् शूळ् तिरु-प् पेरान्
तॆ॑ळिदु आहिय शेण् विशुम्बु तरुवाने॥ 4

X. viii. तिरुमाल्-इरुञ्चोलै

(तिरुप्पेर् क्षेत्र)

3151 अनर्घ महामणियों को लुढ़काते जल से युक्त पोन्नि (नदी) के दक्षिण तीर पर स्थित सुंदर तिरुप्पेर् (नगर) श्रीमन्नारायण से समाश्रित देश है। मैं यों ही बोला 'तिरु-माल्-इरुञ्चोलै-मलै'। मेरे बोलते ही श्रीमन्नारायण आ कर मेरे हृदय में प्रविष्ट हो कर भर गया। (यह सोच कर कि यह मेरे गिरि का श्रद्धापूर्वक कीर्तन करता है।) 1

3152 पेर् क्षेत्र में नित्य वास करते प्रभु आज आ कर, यह कहते हुए कि मैं हटूंगा नहीं, मेरे हृदय भर में प्रविष्ट हो गया। सप्त मेघ, सप्त सागर, सप्त पर्वत और लोक सब को निगल कर भी अतृप्तकुक्षि भगवान् को मैंने ऐसा ग्रहण किया जिससे उसे तृप्ति हो॥ 2

3153 ग्रहण कर लिए (उसके चरण)। जन्म (का संबंध) काट डाला। रोग (आदि दुःख) का भागी नहीं बनूंगा। गृह जीवन के हेतु अर्थात् (संसार हेतु) विलक्षण माया को (अर्थात् प्रकृति को) उसने निवृत्त कर दिया। ध्वजालंकृत गोपुरों से तथा प्रासादों से परिवृत तिरुप्पेर् (क्षेत्र) के स्वामी के चरण प्राप्ति मुझे अति सुलभ हो जाने का ढंग ही विचित्र है॥ 3

3154 (दुर्लभ प्राप्य) कितना सुलभ हो गया—यह देख कर मेरे नयन प्रहृष्ट होते हैं। आनंद पूर्ण चित्त हो कर मैं आनन्दित हूं। शुकविहार से युक्त उपवन-परिवृत तिरुप्पेर का स्वामी (शुद्धसत्त्वमय होने से) स्वयंप्रकाश सर्वोत्कृष्ट आकाश (अर्थात् परमधाम) प्रदान करेगा॥ 4

3155. ताने तरुवान् ऍनक्काय ऍन्नोडु ऒट्टि
ऊन् एय् कुरम्बै इदनुळ् पुहुन्दु इन्रु
ताने तडमारूर विनैहळ् तवित्तान्
तेने पॊळिल् तॆन् तिरु-प् पेर् नहराने॥ 5

3156. तिरु-प् पेर् नहरान् तिरु मालिरुम् शोलै-प्
पॊरुप्पे उरैहिन्र पिरान् इन्रु वन्दु
'इरुप्पेन्' ऍन्रु ऍन् नेञ्जु निरैय-प् पुहुन्दान्
विरुप्पे पॆर्रु अमुदम् उण्डु कळित्तेने॥ 6

3157. उण्ड कळित्तेर्कु उम्बर् ऍन् कुरै मेलै-त्
तॊण्डु उहळित्तु अन्दि तॊळुम् शॊल्लु-प् पॆर्रेन्
वण्डु कळिक्कुम् पॊळिल् शूळ् तिरु-प् पेरान्
कण्डु कळिप्प-क् कण्णुळ् निन्रु अहलाने॥ 7

3158. कण्णुळ् निन्रु अहलान् करुत्तिन् कण् पॆरियन्
ऍण्णिल् नुण् पॊरुळ् एळ् इशैयिन् शुवै ताने
वण्ण नल मणि माडङ्गळ् शूळ् तिरु-प् पेरान्
तिण्णम् ऍन् मनत्तु-प् पुहुन्दान् शॆरिन्दु इन्रे॥ 8

3155 भ्रमरपूर्ण उपवनपरिवृत सुंदर तिरुप्पेर नगर में वर्तमान प्रभु ने मुझे परमधाम प्रदान करने के लिए मुझ से एक हो कर मांसमय इस पंजर मे (अर्थात् शरीर मे) प्रविष्ट हो कर आज दुःखावह पापो को आप ही निवृत्त कर दिया॥ 5

3156 जो तिरुप्पेर् नगर का वासी है, तथा जो तिरुमाल् इरुञ्चोलै पर्वत मे नित्य वास करता उपकारी (भगवान्) है उसने आज आ कर मुझ से याचना की कि 'मै यही रहूंगा", मेरे हृदय मे प्रविष्ट हो कर भर गया है। उसका बहुमान पा कर मैं (उसके गुणानुभवात्मक) अमृत पान कर प्रफुल्ल हो गया॥ 6

3157 प्रहृष्ट भ्रमरो से युक्त उपवन-परिवृत तिरुप्पेर के अधिवासी उसका दर्शन कर के मेरे आनंदित होने के लिए मेरे नयनो के भीतर से हट नही जायगा। उसको भोग कर प्रहृष्ट हाते मुझे इसके उपरांत किसकी कमी है? अत्यधिक दास्य रस के परिवाह के कारण अतीव आनंदित हो कर अंत मे वक्तव्य सेवा तथा प्रणति के वाचक (नमः) शब्द को बोल पाया॥ 7

3158 नयनो मे अवस्थित हो कर हटेगा नहीं। (मुझ पर कृपा करने के उपयुक्त विविध) संकल्प करने के कारण महापुरुष है। (स्वप्रयत्न से) ध्यान करने पर वह अति सूक्ष्म पदार्थ है। (भोग्यता में) सप्त स्वरों का रस है। सुंदर और उन्नत प्रासादों से परिवृत तिरुप्पेर में वास करते स्वामी मेरे मन में आज निबिड रूप में प्रविष्ट हो गया। यह निश्चित है॥ 8

3159. इन्ऱु ऍन्नै-प् पॉरुळ् आक्कि-त्
तन्नै ऍन्नुळ् वैत्तान्
अन्ऱु ऍन्नै-प् पुरम् पोह-प्
पुणर्त्तदु ऍन् शॅय्वान्?
कुन्ऱु ऍन्न-त् तिहळ माडङ्गळ्
शूळ् तिरु-प् पेरान्
ऑन्ऱु ऍनक्कु अरुळ् शॅय्य
उणर्त्तल् उऱ्ऱेने ॥ 9

3160 उऱ्ऱेन् उहन्दु पणि शॅय्दु उन पादम्
पॅऱ्ऱेन् ईदे इन्नम् वेण्डुवदु ऍन्दाय्!
कऱ्ऱार् मरै वाणर्हळ् वाळ् तिरु-प् पेरार्कु
अऱ्ऱार् अडियार तमक्कु अल्लल् निल्लावे ॥ 10

3161. निल्ला अल्लल् नीळ् वयल् शूळ् तिरु-प् पेर् मेल
नल्लार् पलर् वाळ् कुरुहूर्-च् चडकोपन्
शॉल् आर् तमिळ् आयिरत्तुळ् इवै पत्तुम्
वल्लार् तॉण्डर् आळ्वदु शूळ् पॉन् विशुम्बे ॥ 11

3159 (पहले मैं एक अवस्तु था) आज मुझे एक वस्तु बना कर, अपने को मेरे भीतर उसने रख दिया। इस से पहले (मेरी उपेक्षा कर के) मुझे बाह्य विषयों के पीछे चलने का जो संकल्प किया, वह किस कारण से था? पर्वत सदृश भासमान प्रासादों से परिवृत तिरुप्पेर के अधिवासी से मैंने निवेदन किया कि मुझे एक उत्तर देने की कृपा करो।। (पहले मेरी उपेक्षा करते रहने का क्या कारण था? अब आदर करने का क्या कारण है? बताओ।।) 9

3160 तुम्हारे पास मैं आ गया। प्रीति के साथ दास्य वृत्ति कर के तुम्हारे चरण प्राप्त किये। यही तो आगे भी मेरा अभीष्ट है, मेरे स्वामी! सुशिक्षित वेदवित् महापुरुषों के आवास तिरुप्पेर नगर के स्वामी के अनन्य दासों को कोई भी क्लेश नहीं टिकेगा।। 10

3161 क्लेश टिकेंगे नहीं। विशाल क्षेत्र परिवृत तिरुप्पेर पैर असंख्य सज्जनों के आवास कुरुहूर के शठकोप के रचित मधुर शब्दों से युक्त तमिल भाषामय सहस्रगीति में इस दशक का अध्ययन करने में जो दास समर्थ हैं, उन के राज करने का स्थान है तेजोमय परमव्योम शब्द वाच्य परमधाम।। 11

X. ix. शूळ् विशुम्बु

3162. शूळ् विशुम्बु अणि मुहिल् तूरियम् मुळक्किन
आळ् कडल् अलै तिरै कै ऍडुत्तु आडिन
एळ् पॊऴिलुम् वळम् एन्दिय ऍन् अप्पन्
वाळ् पुहळ् नाराणन् तमरै-क् कण्डु उहन्दे ॥ 1

3163. नारणन् तमरै-क् कण्डु उहन्दु नल् नीर् मुहिल्
पूरण पॊऱ् कुडम् पूरित्तदु उयर् वि'ण्णल्
नीर् अणि कडल्हळ् निन्ऱु आर्त्तन नॆडुवरै-त्
तोरणम् निरैत्तु ऍङ्गुम् तॊऴुदनर् उलहे ॥ 2

3164. तॊऴुदनर् उलहर्हळ् दूप नल् मलर् मळै
पॊऴिवनर् बूमि अन्ऱु अळन्दवन् तमर् मुन्ने
'ऍऴुमिन्' ऍन्ऱु इरु मरुङ्गु इशैत्तनर् मुनिवर्हळ्
'वऴि इदु वैकुन्दर्क्कु' ऍन्ऱु वन्दु ऍदिरे ॥ 3

3165. ऍदिर् ऍदिर् इमैयवर् इरुप्पिडम् वहुत्तनर्
कदिरवर् अवर् अवर् कै-न् निरै काट्टिनर्
अदिर् कुरल् मुरशङ्गळ् अलै कडल् मुऴक्कु ऒत्त
[illegible]रि तुळाय् मुडि मादवन् तमर्क्कॆ ॥ 4

X. ix. शूळ् विशुम्बु

(व्यापक आकाश)

[यहाँ तक योगिश्रेष्ठों के लभ्य परभक्ति से सपन्न हो कर श्रीशठकोप ने भगवान् के विग्रह गुण आदि का विविध प्रकार से अनुभव किया—संयोग मे, तथा वियोग में भी। अगले दशक में अर्चिरादि मार्ग से परमधाम जाना, मार्ग में होना सत्कार, परमधाम में श्रीमन्नारायण और नित्यसूरियों से क्रियमाण उपचार और सूरिसंघ में उन से एक हो कर भगवदनुभव आदि का वर्णन किया जाता है।।]

3162 (मेरे स्वामी सुखप्रद कीर्तिमंत) नारायण के अनन्य भक्तों को देख के प्रफुल्ल हो कर दर्शनीय मेघों ने तूर्यो का वादन किया (अर्थात् बाजे बजाए) गहरे सागर उछलती तरंगरूप हस्त उठा कर नाचते थे। सप्त द्वीप उपहार की वस्तुएं धरते थे।। 1

3163 नारायण भक्तों को देख के प्रफुल्ल हो कर निर्मल जल से पूर्ण पयोधरों ने ऊंचे आकाश में पूर्ण सुवर्ण कुंभ भर दिए। जल से सुंदर सागर निरंतर गरज उठे। उन्नत पर्वत-तुल्य तोरण बाध कर सब स्थानों में लोग प्रणति करते थे।। 2

3164 पुरा काल में भूमि मापक (वामन) के अनन्य भक्तों के सामने लोकों के लोगों ने धूप समर्पित कर उत्तम पुष्पों की वर्षा की और प्रणति की। मुनिगण अभिमुख आ कर दोनों पार्श्वों में खड़े हो कर मधुर वचन बोले कि यह है वैकुंठगामियों का मार्ग, पधारिए।। 3

•

3165 मधु प्रवाहित तुलसी से भूषित किरीटधर माधव के भक्तों के लिए अनिमेष (देवता-गण) आगे आगे ठहरने के स्थान सज्जित रखते थे। अंशुमालीने (अर्थात् द्वादश आदित्य) (किरण रूप) हस्तों से क्रमशः मार्ग दिखाया। तूरजों का गर्जन घोष तरंगित सागर के गर्जन के समान था।। 4

3166. मादवन् तमर् ऍन्ऱु वाशलिल् वानवर्
'पोदुमिन् ऍमदु इडम् पुहु दुह' ऍन्ऱदुम्
गीदङ्गळ् पाडिनर् किन्नरर् गॅरुडर्हळ्
वेद नल् वायवर् वेळ्वियुळ् मडुत्ते ॥ 5

3167. वेळ्वियुळ् मडुत्तलुम्
विरै कमळ् नरुम् पुहै
काळङ्गळ् वलम् पुरि
कलन्दु ऍङ्गु इशैत्तनर्
'आळ्मिन्गळ् वानहम्
आळियान् तमर्' ऍन्ऱु
वाळ् ऑण् कण् मडन्दैयर्
वाळ्त्तिनर् महिळ्न्दे ॥ 6

3168. मडन्दैयर् वाळ्त्तलुम्
मरुदरुम् वशुक्कळुम्
तोंडन्दु ऍङ्गुम् तोत्तिरम्
शॉल्लिनर् तॉडु कडल्
किडन्द ऍम् कोवलन्
किळर् ऑळि मणि मुडि
कुडन्दै ऍम् कोवलन्
कुडि अडियार्क्के ॥ 7

3169. 'कुडि अडियार् इवर्
गोविन्दन् तनक्कु' ऍन्ऱु
मुडि उडै वानवर् मुरै मुरै
ऍदिर् कॉळ्ळ
कॉडि अणि नॅडु मदिळ्
को पुरम् कुरुहिनर्
वडिवु उडै मादवन्
वैकुन्दम् पुहवे ॥ 8

3166 इस भाव से कि ये माधव के भक्त हैं मार्ग में स्थित देवों ने (वरुण इंद्र और प्रजापति ने) उन से प्रार्थना की कि पधारिए, हमारा पद स्वीकार कीजिए। उसी क्षण में किन्नर और गरुड़ गीत गाने लगे। वेद से पवित्र मुख से युक्त अन्य देव-गणो ने यज्ञ-फल को पूर मन से समर्पित किया ।। [किन्नर और गरुड़—किन्नर देश और गरुड़ देश के वासी। अन्य देव—वेदाध्ययन और यज्ञानुष्ठान करते कर्मदेव ।।] 5

3167 यज्ञफल के मनः पूर्वक समर्पित किये जाते समय अत्युत्तम सुगंध से सुरभित धूम समर्पित किया गया। काहल (नामक बाजे) और दक्षिणावर्त शंख मिला मिला कर सर्वत्र बजाने लगे। "चक्रधर भगवान् के भक्तो! स्वर्गलोक का शासन कीजिए" कह कर कांतियुक्त सुंदर नयन देवस्त्रीगण प्रहृष्ट हो कर मंगला-शासन करने लगी ।। 6

3168 जो गहरे सागर पर शयित हमारा केशव है, तथा भासमान तेजोमय मणिमय किरीटधर कुडन्दै क्षेत्र में शयित हमारा गोपाल (कृष्ण) है, वंश परंपरा से उसके दास होनेवालों का मंगलाशन देवस्त्रियों के करने पर, (सप्त) मरुत् और (अष्ट) वसु उनका अनुगमन कर के सर्वत्र स्तुति करने लगे ।। 7

3169 (प्रकृति मंडल के उस पार परमधाम के मुखद्वार पर नित्यसूरि गणों से उनका स्वागतम)

रूपवान् माधव के वैकुंठ में प्रवेश करने के लिए जब ये ध्वजों से अलंकृत उन्नत प्राचीरों से युक्त गोपुर में जा पहुंचे, किरीटधर नित्यसूरिगण क्रमशः उनका स्वागत करने आए कहते हुए कि "ये हैं गोविंद के वंश परंपरा से दास-जन" ।। 8

3170. वैकुन्दम् पुहुदलम्
वाशलिल् वानवर्
'वैकुन्दन् तमर् ऍमर्;
ऍमदु इडम् पुहुदु' ऍन्ऱु
वैकुन्दत्तु अमररुम्
मुनिवरुम् वियन्दनर्
वैकुन्दम् पुहुवदु
मण्णवर् विदियें ॥ 9

3171. 'विदि वहै पुहुन्दनर्'
ऍन्ऱु नल् वेदियर्
पदियिनिल् पाङ्गिनिल्
पादङ्गळ् कळविनर्
निदियुम् नर् चुण्णमुम्
निरै कुड विळक्कमुम्
मदि मुह मडन्दैयर्
एन्दिनर् वन्दे ॥ 10

3172 वन्दु अवर् ऍदिर् कॊळ्ळ
मा मणि मण्डपत्तु
अन्तम् इल् पेर् इन्बत्तु
अडियरोड् इरुन्दमै
कॊन्दु अलर् पॊऴिल्
कुरुहूर्-च् चडकोपन् शॊल्
शन्दङ्गळ् आयिरत्तु
इवै वल्लार् मुनिवरे ॥ 11

3170 वैकुंठ में प्रवेश करते ही द्वार पर स्थित सूरिगण ने प्रीतिपूर्वक कहा कि वैकुंठ (अर्थात् श्रीमन्नारायण) के भक्त हमारे स्वामी हैं। हमारा पद स्वीकार कीजिए। वैकुंठ में विद्यमान अमर और मुनि विस्मित हुए कि भूलोकवासियों का वैकुंठ में प्रवेश करना उनका भाग्य है॥

[अमर—परमात्मा की सेवा कर के प्रहृष्ट होते नित्यसूरि-गण।

मुनि—भगवान् के दर्शन के आनंद से विह्वल हो कर कोई सेवा करने में अशक्त हो कर गुणानुभवानंद से स्तब्ध रहते नित्यसूरिगण। मुनि गुणनिष्ठ हैं और अमर कैंकर्य निष्ठ हैं॥] 9

3171 "(वैकुंठ में) ये (हमारे ही) भाग्य से प्रविष्ट हुए" कहते हुए उत्तम शील और वेदों से प्रतिपादित सूरिगण (अपने अपने) ने आवास में समीचीन प्रकार से उनके चरण धोए। चन्द्रमुखी सुन्दरियाँ निधि और उत्तम पूर्ण, पूर्णकुंभ और दीप धर कर (स्वागत करने) आईं॥

[निधि-परमात्मा की पादुका जो श्रीवैष्णवों की संपत् कही जाती है और वैष्णवसंप्रदाय में 'श्रीशठकोप' कहलाती है।

चूर्ण—मंगल हरिद्रा चूर्ण जो भगवान् की पूजा में उपयुक्त होता है।

चंद्रमुखी सुंदरियां—महालक्ष्मी, भूमिदेवी, नीलादेवी और उनकी सखियां॥] 10

3172 स्वयं श्रीमन्नारायण ही आ कर इन श्रीवैष्णवों का स्वागत करता है और वे महामणिमंडप में प्रवेश कर अनवधिकातिशय आनंद से युक्त भक्त सूरिगणों से एक हो कर रहते हैं। श्रीवैष्णवों की इस स्थिति पर गुच्छों में पुष्पित उपवनों से परिवृत कुरुहूर के शठकोप के रचित छन्दोमय सहस्रगीति में इन पद्यों के कथन में समर्थ (गुणनिष्ठ) मुनि ही हैं॥ 11

X. x. मुनिये ! नानुमुहने !

3173. मुनिये ! नानुमुहने !
मुक्कण् अप्पा ! ऍन् पॉन्ना-क्
कनि वाय्-त् तामरै-क् कण्
करु माणिक्कमे ! ऍन् कळ्वा !
तनियेन् आर् उयिरे ! ऍन्
तलै मिशैयाय् वन्दिट्टु
इनि नान् पोहल् ऑट्टेन्
ऑन्रुम् मायम् शॅय्येल् ऍन्नैये ॥ 1

3174. मायम् शॅय्येल् ऍन्नै उन्
तिरु मार्वत्तु मालै नङ्गे
वाशम् शॅय् पूम् कुळलाळ्
तिरु आणै निन् आणै कण्डाय्
नेशम् शॅय्दु उन्नोडु ऍन्नै
उयिर् वेरु इन्रि ऑन्राहवे
कूशम् शॅय्यादु कॉण्डाय् ऍन्नै-क्
कूवि-क् कॉळ्ळाय् वन्दु अन्दो ! 2

3175. कूवि-क् कॉळ्ळाय् वन्दु अन्दो !
ऍन् पॉन्ना-क् करु माणिक्कमे !
आविक्कु ओर् पर्रु-क् कॉम्बु
निन् अलाल् अरिहिन्रिलेन् यान्
मेवि-त् तॉळुम् पिरमन् शिवन्
इन्दिरन् आदिक्कु ऍल्लाम्
नावि-क् कमल-मुदर् किळङ्गे !
उम्बर् अन्ददुवे ! 3

X. x. मुनियै! नान्मुकने!

(हे मुनि! हे चतुर्मुख!)

[अचिरादि गति से जा कर परमधाम पहुंचना और नित्यसूरियों के साथ भगवदनुभव करना—यह मानस साक्षात्कार मात्र था। अतः उससे अतृप्त हो कर फिर भगवान् से प्रार्थना कर के उसकी कृपा से परिपूर्ण आनंदानुभव कर के पूर्ण मनोरथ हो कर श्रीशठकोप सहस्रगीति ग्रन्थ को समाप्त करते हैं॥]

3173 हे मुनि! हे चतुर्मुख! हे त्रिनेत्र भगवान्! बिंबफलाधर अंबुजलोचन अनुपभुक्त मेरे नीलमाणिक्य! मेरे चोर! असहाय मेरे प्रिय प्राण! मेरे शिरोभूषण जैसे तुम आए। एतदनंतर मैं जाने नहीं दूंगा। मेरे विषय में कोई माया कार्य मत करो। (अर्थात् पहले जैसे मुझे विप्रयसंगी मत बनाओ, न एक मंगल गुण का आविष्कार कर के आश्वासन देने का प्रयत्न करो। सशरीर मेरी आंखों के सामने आ जाओ॥) 1

3174 मेरे विषय में माया कार्य मत करो। तुम्हारे कमनीय वक्ष पर विराजित माला के सदृश, मंगलगुणपूर्णा, (तुम्हें भी) सुगंधित कर देनेवाली चारुकेशी लक्ष्मी की सौगंध है। तुम्हारी सौगंध है—समझो। मुझ से स्नेह कर तुमने निस्संकोच ऐसा कर दिया जिससे तुम्हारी और मेरी आत्माओं में कोई अंतर नहीं और दोनों एक ही हैं। आ कर मुझे बुला के अपनाओ। हाय! (तुम्हारा कर्तव्य मुझे स्मरण कराना पड़ता है॥) 2

3175 आ के मुझे बुला कर अपनाओ, हाय! अनुपभुक्त मेरे नीलमाणिक्य! आत्मा का अवलंब होती एक छड़ी तुम्हारे व्यतिरिक्त और कुछ मैं नहीं जानता। भक्ति से प्रणत ब्रह्मा, शिव, इंद्र आदि सभी के प्रथम कारणरूप नाभिकमल के मूल! उपरितन लोकवासी (नित्यसूरियों) के भी वैसे ही होनेवाले! 3

3176. उम्बर् अम् तण् पाळेयो !
अदनुळ् मिशै नीयेयो
अम्बर नर् चोदि !
अदनुळ् पिरमन् अरन् नी
उम्बरुम् यादवरुम् पडैत्त
मुनिवन् अवन् नी
ऍम् बरम् शादिक्कल् उऱ्ऱु
ऍन्नै-प् पोर विट्टिट्टाये ॥ 4

3177. पोर विट्टिट्टु ऍन्नै नी पुरम्
पोक्कल् उऱ्ऱाल् पिन्नै यान्
आरै-क् कोॅण्डु ऍत्तै अन्दो !
ऍनदु ऍन्बदु ऍन् ? यान् ऍन्बदु ऍन् ?
तीर इरुम्बु उण्ड नीर् अदु
पोल ऍन् आर् उयिरै
आर-प् परुह ऍनक्कु
आरा अमुदु आनाये ॥ 5

3178. ऍनक्कु आरा अमुदाय्
ऍनदु आवियै इन् उयिरै
मनक्कु आरामै मन्नि उण्डिट्टाय्
इनि उण्डु ऒळियाय्
पुन-क् काया निऱत्त पुण्डरीक-क्
कण् शॆंगनि वाय्
उनक्कु एऱ्कुम् कोल मलर्-प्
पावैक्कु अन्बा ! ऍन् अन्बेयो ! 6

3176 (महदादि कार्यवर्ग से) उत्कृष्ट सुंदर और शीतल क्षेत्र तुल्य प्रकृति! (अर्थात् प्रकृति की आत्मा!) उसके भीतर रहते आत्म तत्त्व भी तुम हो। हे अंबर और श्रेष्ठ ज्योति! (अर्थात् आकाश, अग्नि आदि पंचभूतों के अंतरात्मा!) उसके भीतर विद्यमान ब्रह्मा और हर तुम ही हो। उत्कृष्ट देवों की तथा अन्य सब की सृष्टि का संकल्प करते वह मुनि भी तुम हो। (अर्थात् स्थूल चिदचिद्वस्तुओं की अन्तरात्मा तुम हो।) मेरे बोझ के निर्वाह करने को पहले स्वीकार कर के अब (मेरी उपेक्षा कर के) मुझे अलग हो जाने को छोड़ दिया॥ 4

3177 बिछुड़ने दे कर यदि तुम मुझे अपने से बाहर जाने देते हो तो तदनंतर में किस (साधन) से किस (पुरुषार्थ) को सिद्ध कर सकता हूं? हाय! (तुम आत्मा हो और मैं शरीर हूं। अतः तुम से अलग हो कर मेरा रहना ही असंभव है।) (इस दशा में) 'मेरा' कहने योग्य क्या है तथा 'मैं' कहने योग्य क्या है? (तप्त) लोहा (ताप की) निवृत्ति के लिए जिस प्रकार जल चूस लेता है वैसे ही मेरी प्यारी आत्मा को अपनी शांति के लिए पीने की इच्छा से तुम मेरे लिए अपर्याप्त अमृत बन कर आए॥ 5

• 3178 मेरे लिए अपर्याप्तामृत बन कर (अर्थात् निरतिशय भोग्य हो कर) मेरे प्राण (अर्थात् शरीर) तथा प्रिय आत्मा दोनों को तुमने निरंतर भोगा, फिर भी तुम्हारे मन को तृप्ति न हुई। एतदनंतर पूर्णतया भोग कर लो (मुझे तजो मत)। अम्लान अतसीपुष्प सदृश वर्ण पुण्डरीकनयन तथा अरुण बिंबफलाधर तुम्हारे अनुरूप सुंदर पद्मजा (लक्ष्मी) के प्रियतम! मेरे प्रेम (स्वरूप)! 6

3179. कोल मलर्-प् पावैक्कु
अन्बु आहिय एॅन् अन्बेयो !
नील वरै इरण्डु पिरै कव्वि
निमिर्न्ददु ओॅप्प
कोल वराहम् ओॅनराय् निलम्
कोट्टिडै-क् कोॅण्ड एॅन्दाय् !
नील-क् कडल् कडैन्दाय् ! उन्नै-प्
पेॅर्रु इनि-प् पोक्कुवनो ?

3180. पेॅर्रु इनि-प् पोक्कुवनो ? उन्नै
एॅन् तनि-प् पेर् उयिरै
उर्र इरु विनैयाय उयिराय्-प्
पयन् आय् अवै आय्
मुर्र इम् मू उलहुम् पेॅरुम्
तूरु आय्-त् तूर्रिल् पुक्कु
मुर्र-क् करन्दु ओॅळित्ताय् !
एॅन् मुदल् तनि वित्तेयो ! 8

3181. मुदल् तनि वित्तेयो ! मुळु
मू उलहु आदिक्कु एॅल्लाम्
मुदल् तनि उन्नै उन्नै
एॅनै नाळ् वन्दु कूडुवन् नान् ?
मुदल् तनि अङ्गुम् इङ्गुम्
मुळु मुर्रु उरु वाळ् पाळाय्
मुदल् तनि शूळ्न्दु अहन्रु
आळ्न्दु उयर्न्द मुडिवु इलीयो !

3179 सुंदर पद्मजा (लक्ष्मी) से प्रेम कर के (उसके दास होते) मुझ से प्रेम करते स्वामी! मानों एक नील पर्वत दो चंद्र कलाओं को पकड़ कर उठा हो ऐसे दर्शनीय विलक्षण वराह बन कर पृथिवी को अपने दंष्ट्रों के मध्य में धरते मेरे स्वामी! नील सागर का मन्थन करते भगवान्! तुम्हें प्राप्त कर लेने के बाद क्या जाने दूंगा?

[नील सागर—क्षीर सागर की कांति शुभ्र है। मन्थन करते परमात्मा का नील वर्ण उस पर छा जाने से वह भी नील सागर हो गया॥] 7

3180 (आत्मा से) दृढ़ संबद्ध (पुण्य पाप रूप) द्विविध कर्म तुम हो (अर्थात् कर्मनिर्वाहक हो); (कर्मफलभोक्ता) आत्मा तुम हो। वे कर्मफल भी तुम हो। तुम ही कृत्स्न लोकत्रय रूप झाड़-झंखाड़ हो। इस झाड़-झंखाड़ में (स्वेच्छा से) प्रविष्ट हो कर पूर्ण रूप से छिपे रह कर अदृश्य हो। अद्वितीय मेरे प्रथम बीज होनेवाले! (अर्थात् मेरे प्रथम सुकृतरूप अद्वितीय कारण!) मेरे अद्वितीय और विभु धारक आत्मा तुम्हें प्राप्त कर के एतदनंतर क्या जाने दूंगा? 8

3181 कृत्स्न लोकत्रय आदि सब के प्रथम अद्वितीय बीज! (अर्थात् प्रथम—प्रधान निमित्तकारण; अद्वितीय—सहकारिकारण; बीज—उपादानकारण)। वहां और यहां (अर्थात् ब्रह्मांड के बाहर और ब्रह्मांड के भीतर) भरपूर सब पदार्थों में व्याप्त हो कर जो अद्वितीय प्रथम कारण होता है भोग मोक्ष आदि फलो का उत्पत्तिस्थान जो प्रकृति है, वह भी तुम हो। (अर्थात् प्रकृति के नियामक हो।) जो (प्रकृति आदि अचेतन तत्वों से भी) प्रधान है और निरुपम है, जो उसको घेर कर विपुल और गहरा होता है, वह असंख्य और नित्य आत्मा भी तुम हो, भगवान्! प्रधान और अद्वितीय, (जगदाकार से विशिष्ट) तुम्हें, (उससे भिन्न परमधाम में विद्यमान) तुम्हें किस दिन आ कर मैं प्राप्त करूंगा। (अर्थात् चेतनाचेतनात्मक जगत् का शरीरी हो अपना आकार तुमने दिखाया और मैंने देखा। उससे तो मैं तृप्त नहीं हूं। परमधाम में सर्वोत्कृष्ट हो कर विद्यमान तुम्हारे उस रूप को भी मैं देखना चाहता हूं॥) 9

3182. शूळ्न्दु अहन्रु आळ्न्दु उयर्न्द
मुडिवु इल् पॅरुम् पाळेयो :
शूळन्दु अदनिल् पॅरिय
पर नन् मलर्-च् चोदीयो !
शूळ्न्दु अदनिल् पॅरिय
शुडर् ञान इन्बमेयो !
शूळ्न्दु अदनिल् पॅरिय
एॅन् अवा अर-च् चूळ्न्दाये ॥ 10

3183. अवा अर-च् चूळ् अरियै
अयनै अरनै अलर्रि
अवा अर्रु वीडु पॅर्र कुरुहूर्-च्
चडकोपन् शॉन्न
अवाविल् अन्दादिहळाल् इवै
आयिरमम् मुडिन्द
अवाविल् अन्दादि इप् पत्तु
अरिन्दार् पिरन्दार् उयर्न्दे ॥ 11

॥ तिरुवायमोळि मुर्रुम् ॥

3182 महत् अहंकार आदि सब पदार्थों को घेर कर, विस्तीर्ण गहरा और ऊंचा हो कर तथा अंतविहीन (अर्थात् नित्य) और अपरिच्छिन्न परती भूमि सम हे प्रकृति! (अर्थात् हे प्रकृतिशरीरक परमात्मा!) उसे घेर कर उससे भी विलक्षण, (विकाराभाव से) उत्कृष्ट विकस्वर ज्योतिर्मय हे शुद्ध जीवात्मा!) (अर्थात् ज्ञानमय जीवात्मशरीरक हे परमात्मा!) (इन दोनों को भी) घेर कर उनसे भी बड़े समुज्ज्वल ज्ञानानंद स्वरूप! (हे परमात्मा!) (तुम तीनों को) घेर कर उनसे बड़ा जो मेरा मनोरथ था, उसको पूर्ण कर के तुमने आ कर घेर लिया॥ 10

3183 मनोरथ पूर्ण कर घेरता जो हरि है, जो अज और हर है (अर्थात् जो ब्रह्मा और शिव की अन्तरात्मा है), उस (परमात्मा) को पुकार कर, (उनकी प्राप्ति से) पूर्णमनोरथ हो कर, मुक्ति प्राप्त किए (अर्थात् निर्दुःख) शठकोप से रचित उनकी अभिनिवेशमय अन्त्यादि सहस्रगीति अभिनिवेशयुक्त अन्त्यादि दशक से समाप्त हुई। इस दशक का ज्ञान जिन्हें है, वे (संसार में) जन्म ले कर ही उत्कृष्ट हैं (अर्थात् नित्यसूरिसम हैं।) 11

[इस सहस्रगीति प्रबंध में आरंभ से X. IX. दशक तक संत शठकोप की पर भक्ति का प्रवाह था। शूऴ् विशुम्बु दशक में (X. IX.) में परज्ञान हुआ। अंतिम दशक में (X. X.) परमभक्ति का प्रवाह है जिसके उत्तर क्षण में चिरापेक्षित भगवत्प्राप्ति सिद्ध होती है॥]

संत श्री शठकोप विरचित

तिरुवाय्मोऴि (सहस्रगीति)

समाप्त